॥ ॐ नमः शिवाय ॥

प्रधान लिंगमाख्यातं लिंगी च परमेश्वरः । (लिं०पु० १७-५)

प्राक्कथन

देवाधिदेव भगवान शंकर की महिमा से युक्त यह लिंग पुराण १८ पुराणों में अपना विशेष महत्त्व रखता है। इसमें भूत भावन परम कृपालु शंकरजी के ज्योतिर्लिंगों के उद्भव की परम पावन कथा है। इसमें ईशान कल्प का वृतान्त, सम्पूर्ण सर्ग, विसर्ग आदि दश लक्षणों से युक्त लोक कल्याण के लिए कहा गया है। १८ पुराणों की संख्या करते समय नारद पुराण के अनुसार यह ग्यारहवां महा पुराण है।

नारद पुराण के अध्याय १०२ में लिंगपुराण की विषय सूची दी गई है। नारण पुराण के अनुसार 'यह पुराण धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष' चारों पदार्थों का देने वाला है। यह पढ़ने सुनने वालों को भक्ति और मुक्ति प्रदान करता है। भगवान शंकर के महात्म्य को बताने वाले इसमें ११००० श्लोक हैं। यह सभी पुराणों में उत्तम कहा गया है।

भगवान वेद व्यास रचित इस ग्रन्थ में पहले योग का आख्यान फिर कल्प का आख्यान है। इसके बाद लिंग का प्रादुर्भाव तथा उसकी पूजा बताई गई है, सनत्कुमार तथा शैलादि के बीच सुन्दर सम्वाद का वर्णन है। फिर दधीचि का चरित्र तथा युग धर्म का वर्णन है। इसके उपरान्त आदि सर्ग का विस्तार से कथन तथा त्रिपुर का आख्यान है। इसमें लिंग प्रतिष्ठा, पशुपाश विमोचन, विश्वव्रत, सदाचार निरूपण, प्रायश्चित, अरिष्ट काशी एवं श्रीशैल का वर्णन, अन्धकासुर की कथा, वाराह भगवान का चरित्र, नरसिंह चरित्र, जलन्धर का वध, शिवजी के हजार नामों का कथन, काम दहन, पार्वती विवाह,

गणेजी की कथा, शिव ताँडव नृत्य वर्णन एवं उपमन्यु की कथा आदि इस पुराण की पूर्वार्द्ध की कथायें हैं। तथा इस पुराण में विष्णु महात्म्य, अम्बरीष की कथा, सनत्कुमार एवं नन्दीश के बीच सम्वाद, शिव महात्म्य के साथ-साथ स्नान योग आदि का निरूपण, सूर्य पूजा की विधि, मोक्ष देने वाली शिव पूजा का वर्णन, दान के विविध प्रकार, श्राद्ध, शिवजी की प्रतिष्ठा और अघोर के गुण, प्रभाव एवं नामों का कीर्तन, वज्रेश्वरी महाविद्या और गायत्री की महिमा, त्रयम्बक महात्म्य तथा पुराण के सुनने का महात्म्य आदि का सुखद वर्णन हुआ है।

इस पुराण को फाल्गुन की पूर्णमासी को तिल-धेनु के साथ सुयोग्य पुराणपाठी विद्वान को देने से और श्रवण करने से शिवलोक की प्राप्ति बतलाई गई है। इस प्रकार भगवान शंकर के परमतत्व का प्रकाशक यह पुराण श्रद्धालु महानुभावों के लिए भक्ति-मुक्ति प्रदाता है।

लिंग शब्द के विषय में आधुनिक समाज में बड़ी भ्रान्ति है। मनचले लोग लिंग शब्द को कुछ दूसरे अर्थ में प्रयोग करने की अशिष्टता पूर्ण मनोवृत्ति रखते हैं। परन्तु लिंग शब्द का अर्थ है चिह्न या प्रतीक। भगवान शंकर जो स्वयं आदि पुरुष हैं, उनकी ज्योतिः स्वरूपा चिन्मय शक्ति का प्रतीक है। यह लिंग इसके उद्भव के विषय में ज्योतिर्लिंग द्वारा सृष्टि के कल्याणार्थ प्रकट होकर स्वयं ब्रह्मा और विष्णु जैसे अनादि तत्वों को भी आश्चर्य में डालने वाली घटना का इस पुराण में स्पष्ट वर्णन है।

श्री लिंग पुराण

सूतजी तथा नैमिषेय ऋषियों का सम्वाद

सृष्टि के सृजन, पालन और संहार करने वाले प्रधान पुरुषेश्वर ब्रह्मा विष्णु तथा रुद्र रूप परमात्मा के लिये नमस्कार है।

एक समय नारद जी भगवान शंकर का पूजन कर शैलेश, संगमेश्वर हिरण्य गर्भ, स्वर्लीन, अविमुक्त, महालय, रौद्र, गौप्रेक्षक पाशुपत, विघ्नेश्वर, केदारेश्वर, गोमायुकेश्वर, चन्द्रेश, ईशन, त्रिविष्टप और शुक्रेश्वर आदि स्थानों में यथायोग्य शिवजी की पूजा करते हुये नैमिषारण्य में पहुंचे। उन्हें देखकर नैमिषारण्य वासी सभी ऋषियों ने प्रसन्नचित्त होकर उनकी पूजा की तथा उच्च आसन दिया। आसन पर बैठकर नारद जी ने लिंग पुराण के महात्म्य को बताने वाली विचित्र कथायें सुनाईं।

उसी समय समस्त पुराणों के ज्ञाता सूतजी ने सभी तपस्वियों को आकर प्रणाम किया। नैमिषारण्य वासी मुनियों ने उन्हें श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास के शिष्य जानकर पूजा और वन्दना की। तब उन अत्यंत विद्वान और विश्वास योग्य लोम हर्षण को देखकर सभी मुनियों को पुराण सुनने की इच्छा हुई और उनसे लिंग महापुराण के महात्म्य के विषय में पूछा।

ऋषि बोले—हे सूतजी! आपने श्रीकृष्णद्वैपायन मुनि की उपासना करके उनसे पुराण संहिता प्राप्त की है। इसलिये हे सभी पुराणों के ज्ञाता सूतजी! हम सभी आपसे दिव्य लिंग संहिता को पूछते हैं। इस समय मुनियों में श्रेष्ठ नारद जी भी रुद्र भगवान के अनेक क्षेत्रों में भगवान की पूजा करते हुये यहां पधारे हैं। आप भी शिव के भक्त हैं तथा नारद भी और हम सब भी शिवजी के भक्त हैं।

इस प्रकार नैमिषारण्य के ऋषियों द्वारा पूछे जाने पर सूतजी उन नैमिषारण्य वासी मुनियों को तथा ब्रह्मा पुत्र नारद जी को प्रणाम करके कहने लगे।

सूतजी बोले—मैं लिंग पुराण का वर्णन करने के लिये भगवान शंकर, ब्रह्मा और विष्णु को नमस्कार करके मुनीश्वर व्यास जी का स्मरण करता हूँ।

शब्द ब्रह्म का शरीर है और साक्षात् शब्द ही ब्रह्म

का प्रकाशक है। अकार, उकार और मकार अर्थात् ओ३म्कार ही स्थूल सूक्ष्म और परात्पर ब्रह्म का स्वरूप है। उसका ऋग्वेद मुख है, सामवेद जीभ है, यजुर्वेद ग्रीवा है और अथर्ववेद हृदय है। वह ब्रह्म ऐसे प्रधान पुरुषातीत हैं तथा प्रलय और उत्पत्ति से रहित हैं वही तमोगुण के आश्रय से कालरूपी रुद्र, रजोगुण से ब्रह्म और सतोगुण से विष्णु हैं और निर्गुण रूप में भी महेश्वर हैं।

जीव और अव्यक्त रूपी प्रधान अवयवों में व्यास होकर (महत्तत्व, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध) सात रूपों से (५ ज्ञानेन्द्री, ५ कर्मेन्द्री, ५ महाभूत, १ मन) १६ प्रकारों से अव्यक्त, ध्याता और ध्येय इन २६ भेदों में युक्त, ब्रह्म से उत्पन्न सर्ग (सृष्टि) प्रतिष्ठा (पालन) और संहार लीला के लिये लिंग रूपी भगवान शिव को प्रणाम करके लिंग पुराण की पावन कथा को कहता हूँ।

अनुक्रमणिका

सूतजी बोले—महात्मा ब्रह्मा जी ने ईशान कल्प

की कथा लेकर इस लिंग पुराण को बनाया। पुराण का परिमाण तो सौ करोड़ श्लोकों का है परन्तु व्यास जी ने संक्षेप में उनको चार लाख श्लोकों में ही कहा है। व्यास जी ने द्वापर के आदि में उसे अलग-अलग अठारह भागों में विभाजित किया है। उनमें से यहां लिंग पुराण की संख्या ग्यारह है, ऐसा मैंने व्यास जी से सुना है। उसे मैं आप लोगों से अब संक्षेप में कहता हूँ।

इस महापुराण में पहले सृष्टि की रचना प्रधानिक रूप से तथा वैकृतिक रूप से वर्णन की गई है तथा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और ब्रह्माण्ड के आठ आवरण कहे गये हैं। रजोगुण का आश्रय लेकर शर्व (शिव) की उत्पत्ति भी उसी ब्रह्माण्ड से ही हुई है। विष्णु कहो या कालरुद्र कहो वह उस ब्रह्माण्ड में ही शयन करते हैं।

इसके बाद प्रजापतियों का वर्णन, वाराह भगवान द्वारा पृथ्वी का उद्धार, ब्रह्मा के दिन-रात का परिमाण तथा आयु की गणना बताई है। ब्रह्मा के वर्ष कल्प और युग देवताओं के, मनुष्यों के तथा ध्रुव आदि वर्षों की गणना है। पित्रीश्वरों के वर्षों का वर्णन, चारों आश्रमों के धर्म संसार की अभिवृद्धि, देवी का अविर्भाव कहा गया है। स्त्री पुरुष के जोड़े के द्वारा ब्रह्मा का सृष्टि विधान, रोदानान्तर के बाद रुद्र के अष्टक का वर्णन, ब्रह्मा-विष्णु का विवाद, पुनः लिंग रूप से शिव की

उत्पत्ति का वर्णन है। शिलाद की तपस्या का वर्णन तथा वृत्रादि इन्द्र के दर्शन का वर्णन, व्यावतार तथा कल्प और मन्वंतरों का वर्णन इस पुराण में किया गया है।

कल्प कल्पान्तरों की कथा तथा कल्प भेदों के क्रम से वाराह कल्प में वाराह भगवान के अवतार की कथा, मेघ वाराह कल्प में रुद्र के गौरव का गान, पुनः ऋषियों के मध्य में पिनाकी (शिव) के लिंग उत्पत्ति का वर्णन हुआ है।

लिंग की आराधना, स्थान, पूजा का विधान, शौच (पवित्रता), काल लक्षण, वाराह के महात्म्य एवं उनके क्षेत्र का वर्णन, पृथ्वी के स्थानों की संख्या की गिनती, विष्णु के स्थानों की गणना का वर्णन किया गया है। पुनः स्वारोचिष कल्प में दक्ष का पृथ्वी पर पतन, दक्ष का शाप तथा दक्ष का शाप मोचन, कैलाश का वर्णन, चन्द्ररेखा की उत्पत्ति, शिव विवाह की कथा तथा शिव के संध्या वृत्तों की कथा का शुभ वर्णन है। पाशुपात योग का वर्णन चारों युगों का परिमाण तथा युग धर्म का विस्तार पूर्वक वर्णन हुआ है। शिवजी के द्वारा पुत्र उत्पत्ति तथा मैथुन के प्रग से जगत के नाश का भय, देवताओं को सती का शाप, विष्णु भगवान द्वारा रक्षा होना, शिवजी का वीर्योत्सर्ग, स्कन्द का जन्म, ग्रहण

आदि पर्व में शिव लिंग को स्नान कराने का फल, क्षुब्दधी का विवाद, दधीचि और विष्णु की कथा, नन्दी नाम वाले देवाधिदेव महादेव की उत्पत्ति, पतिव्रताओं का आख्यान, पशु-पाश का विचार, प्रवृत्ति लक्षण तथा निवृत्ति लक्षण का ज्ञान, वशिष्ठ के पुत्रों की उत्पत्ति तथा वशिष्ठ के पुत्र महात्मा मुनियों का वंशविस्तार, राजशक्ति का नाश, विश्वामित्र का दुष्ट भाव तथा कामधेनु का बांधा जाना, वशिष्ठ का पुत्र शोक, अरुन्धती का विलाप, स्नुषा का भेजा जाना, गर्भ स्थित बालक का बोलना, पाराशर, व्यास, शुकदेव जी का अवतार, शक्ति पुत्रों द्वारा राक्षसों का विनाश, पुलस्त्य की आज्ञा से देवताओं का उपकार, विज्ञान और पुराणों का निर्माण का वर्णन इसमें है।

लोकों का प्रमाण, ग्रह, नक्षत्रों की गति,जीवितों के श्राद्ध का विधान, श्राद्ध एवं श्राद्ध योग्य ब्राह्मणों के लक्षण, पंच महायज्ञों का प्रभाव और पंच यज्ञ की विधि, रजस्वला के नियम, उसमें नियम पालने से पुत्र की विशेषता, मैथुन की विधि, क्रम से हर एक वर्ण का वर्णन, सभी के लिये भक्ष, अभक्ष का विचार, प्रायश्चित का वर्णन विस्तार से किया गया है।

नरकों के तस्करों का वर्णन तथा कर्म के अनुसार दंड का विधान और दूसरे जन्म में स्वर्गीय तथा नारकीय

कर्मों का ज्ञान, नाना प्रकार के दान तथा प्रेतराज के पुर का वर्णन, पंचाक्षर रुद्र तथा कल्प महात्म्य, वृत्रासुर और इन्द्र का महान युद्ध, श्वेत मुनि और मृत्यु का सम्वाद तथा श्वेत मुनि के लिए काल का नाश तथा देवदारु वन में शिवजी का प्रवेश, सुदर्शन की कथा, संन्यास के लक्षणों का वर्णन हुआ है।

इसके बाद ब्रह्मा जी द्वारा भगवान शंकर का श्रद्धा साध्य कहा जाना, मधुकैटभ दैत्यों द्वारा ब्रह्मा जी की गति क्षीण करना, विष्णु का मत्स्य रूप धारण करना, सभी अवस्थाओं में लीलाओं का वर्णन, शंकर की कृपा से विष्णु और विष्णु की उत्पत्ति, मंदराचल को धारण करने के लिए कूर्म अवतार, संकर्षण भगवान और कौशिकी देवी की उत्पत्ति तथा यादवों में स्वयं भगवान का अवतार लेना। कंस की दुष्टता, श्रीकृष्ण की बाल लीलायें, पुत्रों के लिए शिवजी का पूजन करना, विष्णु और रुद्र द्वारा कपाल से जल की उत्पत्ति, पृथ्वी के भार को दूर करने के लिए विष्णु द्वारा रुद्र की आराधना का वर्णन इस पुराण में किया गया है।

पूर्व काल में वेनु राजा के पुत्र पृथु द्वारा पृथ्वी का दुहा जाना, भगवान द्वारा भृगमुनि का शाप धारण करना, देव तथा दानवों को भृगु का शाप, श्रीकृष्ण का द्वारका में निवास, लोक कल्याण के लिए दुर्वासा के मुख से

शाप ग्रहण करना, वृष्णि अंधकों के नाश के लिये ऋषियों का शाप, एरक तथा तोमर की उत्पत्ति, एरक की प्राप्ति पर यादवों में विवाद, युद्ध और उनका नाश, श्रीकृष्ण का जाना, मोक्ष धर्म वर्णन, इन्द्र, हाथी, मृग रूप धारी अंधक, अग्नि और दक्ष का वर्णन, आदि देव ब्रह्मा जी, कामदेव तथा दैत्यों का वर्णन इसमें आया है।

इसमें महादेव जी के द्वारा दैत्य हलाहल की आज्ञा का वर्णन, जलंधर का वध तथा सुदर्शन चक्र की उत्पत्ति, भगवान विष्णु को उत्तम शस्त्रों की प्राप्ति तथा शिवजी के और भी हजारों उत्तम चरित्रों का वर्णन है। ब्रह्मा, विष्णु और महान तेज वाले इन्द्र के प्रभाव का वर्णन है। शिवलोक का वर्णन, पृथ्वी पर रुद्र लोक वर्णन और पाताल में तारकेश्वर का वर्णन, सब मूर्तियों में शिवालय की विशेषता तथा लिंग का प्रारम्भ से विस्तार पूर्वक वर्णन इस महापुराण में किया गया है।

इस प्रकार संक्षेप में जानकर भी जो मनुष्य इसका गुणगान करता है। वह सब पापों से छूट कर ब्रह्म (शिव) लोक को प्राप्त करता है।

प्रथम सृष्टि का वर्णन

सूतजी कहने लगे—अदृश्य जो शिव है वह दृश्य प्रपंच (लिंग) का मूल है। इससे शिव को अलिंग कहते हैं और अव्यक्त प्रकृति को लिंग कहा गया है। इसलिये यह दृश्य जगत भी शैव यानी शिवस्वरूप है। प्रधान और प्रकृति को ही उत्तमौलिंग कहते हैं। वह गंध, वर्ण, रस हीन है तथा शब्द, स्पर्श, रूप आदि से रहित है परन्तु शिव अगुणी, ध्रुव और अक्षय हैं। उनमें गंध, रस, वर्ण तथा शब्द, स्पर्श आदि लक्षण हैं। जगत आदि कारण, पंचभूत स्थूल और सूक्ष्म शरीर जगत का स्वरूप सभी अलिंग शिव से ही उत्पन्न होता है।

यह संसार पहले सात प्रकार से, आठ प्रकार से और ग्यारह प्रकार से (१० इन्द्रियाँ, एक मन) उत्पन्न होता है। यह सभी अलिंग शिव की माया से व्याप्त हैं। सर्व प्रधान तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र) शिव रूप ही हैं। उनमें वे एक स्वरूप से उत्पत्ति, दूसरे से पालन तथा तीसरे से संहार करते हैं। अत: उनको शिव का ही स्वरूप जानना चाहिये। यथार्थ में कहा जाये तो ब्रह्म रूप ही जगत है और अलिंग स्वरूप स्वयं इसके बीज बोने वाले हैं तथा वही परमेश्वर हैं। क्योंकि योनि (प्रकृति) और बीज तो निर्जीव हैं यानी व्यर्थ हैं। किन्तु

शिवजी ही इसके असली बीज हैं। बीज और योनि में आत्मा रूप शिव ही हैं। स्वभाव से ही परमात्मा हैं वही मुनि, वही ब्रह्मा तथा नित्य बुद्ध है वही विशुद्ध है। पुराणों में उन्हें शिव कहा गया है।

हे ब्राह्मणों! शिव के द्वारा देखी गई प्रकृति शैवी है। वह प्रकृति रचना आदि में सतोगुणादि गुणों से युक्त होती है। वह पहले से तो अव्यक्त है।

अव्यक्त से लेकर पृथ्वी तक सब उसी का स्वरूप बताया गया है। विश्व को धारण करने वाली जो यह प्रकृति है वह सब शिव की माया है। उसी माया को अजा कहते हैं। उसके लाल, सफेद तथा काले स्वरूप क्रमशः रज, सत् तथा तमोगुण की बहुत सी रचनायें हैं। संसार को पैदा करने वाली इस माया को सेवन करते हुए मनुष्य इसमें फंस जाते हैं तथा अन्य इस मुक्त भोग माया को त्याग देते हैं। यह अजा (माया) शिव के आधीन है।

सर्ग (सर्जन) की इच्छा से परमात्मा अव्यक्त में प्रवेश करता है, उससे महत् तत्व की सृष्टि होती है। उससे त्रिगुण अहंकार जिसमें रजोगुण की विशेषता है, उत्पन्न होता है। अहंकार से तन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) उत्पन्न हुई। इनमें सबसे पहले शब्द, शब्द से आकाश, आकाश से स्पर्श तन्मात्रा तथा स्पर्श से वायु,

वायु से रूप तन्मात्रा, रूप से तेज (अग्नि) अग्नि से रस तन्मात्रा की उत्पत्ति, उस से जल फिर गन्ध और गन्ध से पृथ्वी की उत्पत्ति होती है।

हे ब्राह्मणो! पृथ्वी में शब्द स्पर्शादि पांचों गुण हैं तथा जल आदि में एक-एक गुण कम है अर्थात् जल में चार गुण हैं, अग्नि में तीन गुण हैं, वायु में दो गुण और आकाश में केवल एक ही गुण है। तन्मात्रा से ही पञ्चभूतों की उत्पत्ति को जानना चाहिये।

सात्विक अहंकार से पांच ज्ञानेन्द्री, पांच कर्मेन्द्री तथा उभयात्मक मन की उत्पत्ति हुई। महत् से लेकर पृथ्वी तक सभी तत्वों का एक अण्ड बन गया। उसमें जल के बबूले के समान पितामह ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। वह भी भगवान रुद्र हैं तथा रुद्र ही भगवान विष्णु हैं। उसी अण्ड के भीतर ही सभी लोक और यह विश्व है।

यह अण्ड दशगुने जल से घिरा हुआ है, जल दशगुने वायु से, वायु दशगुने आकाश से घिरा हुआ है। आकाश से घिरी हुई वायु अहंकार से शब्द पैदा करती है। आकाश महत् तत्व से तथा महत् तत्व प्रधान से व्याप्त है।

अण्ड के सात आवरण बताये गये हैं। इसकी आत्मा कमलासन ब्रह्मा है। कोटि कोटि संख्या से युक्त कोटि कोटि ब्रह्माण्ड और उसमें चतुर्मुख ब्रह्मा, हरि तथा रुद्र अलग-अलग बताये गये हैं। प्रधान तत्व माया से रचे

गये हैं। ये सभी शिव की सन्निधि में प्राप्त होते हैं, इसलिये इन्हें आदि और अन्त वाला कहा गया है। रचना, पालन और नाश के कर्त्ता महेश्वर शिवजी ही हैं।

सृष्टि की रचना में वे रजोगुण से युक्त ब्रह्मा कहलाते हैं, पालन करने में सतोगुण से युक्त विष्णु तथा नाश करने में तमोगुण से युक्त कालरुद्र होते हैं। अतः क्रम से तीनों रूप शिव के ही हैं। वे ही प्रथम प्राणियों के कर्त्ता हैं फिर पालन करने वाले भी वही हैं और पुनः संहार करते हैं इसलिए महेश्वर देव ही ब्रह्मा के भी स्वामी हैं।

हे ब्राह्मणो! वही शिव विष्णु रूप हैं, वही ब्रह्मा हैं, ब्रह्मा के बनाये इस ब्रह्माण्ड में जितने लोक हैं, ये सब परम पुरुष से अधिष्ठित हैं तथा ये सभी प्रकृति (माया) से रचे गये हैं। अतः यह प्रथम कही गई रचना परमात्मा शिव की अबुद्धि पूर्वक रचना शुभ है।

सृष्टि का प्रारम्भ

सूतजी कहते हैं—प्राथमिक रचना का जो समय है वह ब्रह्म का एक दिन है और उतनी ही रात्रि है। संक्षेप से वह प्राकृतिक पदार्थों का वर्णन है। वह प्रभु दिन में

सृष्टि करता है और रात्रि में प्रलय करता है। इस उपचार से ब्रह्मा का सृष्टि करने का समय रात कहलाता है। दिन में विकार (१६ प्रकार के) विश्वेदेवा, सभी प्रजापति, सभी ऋषि स्थिर रहते हैं। रात्रि में सभी प्रलय को प्राप्त होते हैं और रात्रि के अन्त में सभी फिर उत्पन्न होते हैं। ब्रह्मा का एक दिन ही कल्प है और उसी प्रकार की रात्रि है।

हे ब्राह्मणो! चारों युगों के हजार बार बीतने पर १४ मनु होते हैं। चार हजार वर्ष वाला सतयुग कहा है, उतने ही सैंकड़ा तक तीन, दो एक शतक क्रम से संध्या और संध्यांश होते हैं। संध्या की संख्या छः सौ है जो संध्यांश के बिना कही गई है।

अब त्रेता, द्वापर आदि युगों को कहता हूँ। १५ निमेष की एक काष्ठा होती है। मनुष्यों के नेत्रों के ३० पलक मारने के समय को कला कहते हैं। हे ब्राह्मणो! ३० कला का एक मुहूर्त होता है। १५ मुहूर्त की एक रात्रि तथा उतना ही दिन होता है।

फिर पित्रीश्वरों के रात, दिन, महीना और विभाग कहते हैं। कृष्ण पक्ष उनका दिन तथा शुक्ल पक्ष उनकी रात है। पित्रीश्वरों का एक दिन रात मनुष्यों के ३० महीना होते हैं। ३६० महीनों का उनका एक वर्ष होता है। मनुष्यों के मान से जब १०० वर्ष होते हैं तब पित्रीश्वरों

के तीन वर्ष होते हैं।

पुनः देवताओं के दिन, रात्रि का विभाग बताते हैं। उत्तरायण सूर्य रहें तब तक दिन तथा दक्षिणायन में रात्रि होती है। यही दिन रात देवताओं के विशेष रूप से कहे हैं। ३० वर्षों का एक दिव्य वर्ष होता है। मनुष्यों के १०० महीने देवताओं के तीन महीने होते हैं। मनुष्यों के हिसाब से ३६० वर्ष का देवताओं का एक वर्ष होता है।

मनुष्यों के वर्षों के अनुसार तीन हजार तीन सौ वर्षों का सप्त ऋषियों का एक वर्ष होता है। नौ हजार ९० वर्षों का ध्रुव वर्ष होता है। इस प्रकार ३६ हजार मनुष्यों के वर्ष के अनुसार दिव्य (देवताओं) के सौ वर्ष होते हैं। तीन लाख साठ हजार मनुष्यों के वर्षों का देवताओं का एक हजार वर्ष होता है। ऐसा जानने वाले विद्वान लोग कहते हैं।

दिव्य वर्ष के परिमाण से ही युगों की कल्पना की गई है। पहले सतयुग, त्रेता, द्वापर फिर कलयुग कहा है। मनुष्यों के मान से तथा दिव्य वर्षों के प्रभाव से कृत युग सौ हजार वर्षों का तथा ४० हजार वर्ष का है। १० हजार एक सौ वर्ष पुरुषों की संख्या से तथा दिव्य वर्ष अस्सी हजार वर्ष त्रेता के कहे हैं। मनुष्यों का सात लाख तथा देवताओं के २० हजार वर्षों का द्वापर का काल कहा है तथा १०० हजार तीन वर्ष मनुष्यों के मत के अनुसार

तथा दिव्य ६० हजार वर्ष का कलयुग कहा है। इस प्रकार यह चतुर्युग का काल संध्या और संध्यांशों के बिना ही कहा गया है। हे ब्राह्मणो! चतुर्युग की संख्या कह दी। हजार चतुर्युगी का एक कल्प होता है।

रात्रि के अन्त में ब्रह्मा सब लोकों को रचता है और रात्रि में सब लोक नष्ट हो जाते हैं। कल्प के अन्त में जब प्रलय होती है तो महर्लोक से जन, जन लोक में चले जाते हैं। ब्रह्मा के आठ हजार वर्ष का ब्रह्मयुग होताहै। युग सहस्त्र दिन का होता है, उसमें सब देवों की उत्पत्ति होती है। कालात्मा ब्रह्मा के काल अनेक नाभ से कहे हैं जैसे भवोद्भव, तप, भव्य, रम्भ, ऋतु, वह्नि, हव्याह, सचित्र, शुक, उशिक, कशिक इत्यादि अनेक नाम हैं। इस प्रकार ब्रह्मा के कल्पों आदि की संख्या कही जो करोड़ों है। उसके बहुत सा काल बीत गया तथा बहुत सा शेष है। कल्प के अन्त में सब विकार कारण में लय हो जाते हैं। शिव की आज्ञा से सब विकारों का संहार होता है। विकारों के नाश होने पर प्रधान और पुरुष दोनों रहते हैं। गुणों की समानता में प्रलय होती है और गुणों की विषमता में सृष्टि होने लगती है। आत्मा से अधिष्ठित प्रधान से अनेक कल्प तथा अनेक ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं और विष्णु भी असंख्यातः उत्पन्न होते हैं और महेश्वर शिव तो एक ही रहता है।

ब्रह्मा का द्वितीय परार्द्ध, जब तक दिन है तब तक सृष्टि है। रात्रि होने पर सब नाश को प्राप्त होंगे। भूः भुवः स्वः महः ऊपर के लोक हैं। स्थावर, जंगम लय होने पर ब्रह्मा जल के भीतर सोता है। तब उसको नारायण कहा जाता है। रात्रि के अन्त में वह जागता है तब सर्वत्र शून्य देखता है और तभी वह सृष्टि रचने की इच्छा करता है। जल में डूबी हुई पृथ्वी को भगवान वाराह रूप धारण करके उसका उद्धार करते हैं। नदी, नद, समुद्र आदि पूर्ववत् स्थापित करते हैं। पृथ्वी को ऊंची नीची से रहित एक सी करते हैं और पृथ्वी पर जले हुये पर्वतों को पूर्ववत् स्थापित करते हैं। भूः आदि चारों लोकों को रचने के लिए सृष्टा पुनःअपनी मति (इच्छा) करता है।

सृष्टि की प्रथम उत्पत्ति का वर्णन

सूतजी कहते हैं—हे ब्राह्मणो! ब्रह्मा ने सर्वप्रथम जो सृष्टि को रचने की मति की वह अबुद्धि पूर्वक की अर्थात् ब्रह्माजी ने सबसे पहले सृष्टि बिना विचारे की। उससे ब्रह्माजी ने तम, मोह, महामोह, तामिस्त्र, अंध

नामवाली पांच प्रकार की सृष्टि रची। इसलिए इस रचना को अविद्या पूर्वक बनी हुई कहते हैं। प्रजापति ब्रह्मा की यह मुख्य रचना असाधक कहलाती है। उससे नग (वृक्ष पर्वतादि) की उत्पत्ति हुई। सत, रज, तम गुणों की सृष्टि रचना करने के कारण उस ब्रह्म (शिव) का कण्ठ तीन रेखा वाला पड़ गया। जिसका आप सभी लोग ध्यान करते हो।

उस महात्मा ब्रह्मा ने सर्व प्रथम पशु पक्षी आदि तिर्यक योनि के जीवों की उत्पत्ति की। फिर सात्विक बुद्धि से उर्ध्व स्रोत (ऊपर की ओर जाने वाले) जीवों की रचना की। इसके बाद भूत (पंच-भूतों) की रचना की।

इसके बाद ब्रह्माजी ने महत् तत्व से दूसरी भौतिक सृष्टि रची, तीसरी इन्द्रियों सम्बन्धी रची तथा चौथी जो सृष्टि रची, उसको मुख्य कहा गया है। पांचवी को तिर्य्यक योनि तथा छठवीं को दैविक कहा गया है। हे ब्राह्मणो! सातवीं को मानुषी सृष्टि तथा आठवीं को अनुग्रह पूर्वक रची हुई कहा गया है। नवमी को कोमार कहते हैं। यह रचना प्राकृत (माया से बनी) तथा वैकृत (विचारों से युक्त) कही गई है।

हे मुनियो! पहले ब्रह्मा ने फल की इच्छा न रखने वाले सनक, सनन्दन को उत्पन्न किया। फिर मरीचि,

भृगु, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, ऋतु, दक्ष, अत्रि, वशिष्ठ को अपनी योग विद्या से उत्पन्न किया। ये नौ ब्रह्मा के पुत्र हैं। अतः ब्रह्मा के ही समान इन्हें मानना चाहिए। ब्राह्मणों में उत्तम और ब्रह्मा को जानने वाले ब्रह्मवादी ये सभी ब्रह्मा के ही समान हैं।

इसके पश्चात् ब्रह्माजी ने बारह प्रजापति पैदा किए। ऋभु, सनत्कुमार और सनातन आदि बनाए। ये कुमार ऊर्ध्वगामी, दिव्य, ब्रह्मवादी सर्व प्रथम पैदा हुए। ये ब्रह्मा के समान ही सर्वज्ञ और सब भावों वाले हैं।

हे श्रेष्ठ मुनियो! अब मैं प्रथम पैदा हुए मुनियों की पत्नियों का वर्णन करता हूँ तथा संक्षेप में उनके द्वारा उत्पन्न उनकी सन्तान को भी कहता हूँ। शतरूपा रानी ने विराट को उत्पन्न किया। अयोनिजा शतरूपा रानी ने स्वायंभुवमनु के द्वारा पुत्र तथा दो कन्यायें पैदा कीं। उनमें उत्तानपाद छोटा तथा बुद्धिमान प्रियव्रत बड़ा पुत्र हुआ। उनकी अति सुन्दर और बड़ी आकूति नाम की तथा छोटी प्रसूति नाम की दो कन्यायें हुईं। श्रीमद्भागवत में देवहूति नाम की तीसरी कन्या भी बतलाई गई है।

आकूति नाम की पुत्री का रुचि नाम के प्रजापति के साथ विवाह हुआ और प्रसूति दक्ष नाम के प्रजापति की पत्नी हुई। जो संसार की माता और योगिनी कहलाईं। आकूति ने दक्षिणा नाम की पुत्री और यज्ञ नाम का पुत्र

पैदा किया। दक्षिणा ने सुन्दर बारह पुत्रों को उत्पन्न किया।

हे ब्राह्मणो! प्रसूति ने दक्ष के द्वारा चौबीस पुत्रियां उत्पन्न कीं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—श्रद्धा, लक्ष्मी, धृति, तुष्टि, पुष्टि, मेधा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, वपु, सिद्धि, कीर्ति, ख्याति, सम्भूति, स्मृति, प्रीति, क्षमा, सन्नति, अनुसूया, ऊर्जा, स्वाहा, सुरा, अरणी, स्वधा। श्रद्धा से लेकर कीर्ति तक तेरह जो कन्यायें हैं उन्होंने धर्म नामक परम दुर्लभ प्रजापति को अपना पति बनाया और परम बुद्धिमान भृगु से ख्याति नाम की कन्या का विवाह हुआ। भार्गव को अरणि, मरीचि को सम्भूति, अंगिरा को स्मृति, पुलस्त्य को प्रीति, पुलह नाम के मुनि को क्षमा, ऋतु को सन्नति, बुद्धिमान अत्रि को अनुसूया और भगवान वशिष्ठ को कमल के से नेत्र वाली ऊर्जा ब्याही गईं। विभावसु को स्वाहा और पित्रीश्वरों को स्वधा नाम की कन्यायें ब्याही गईं।

भगवान शिव के द्वारा प्रकट की हुई अपनी मानसी पुत्री सती को दक्ष प्रजापति ने संसार की धाय मानकर भगवान रुद्र को समर्पित कर दिया। उन भगवान रुद्र ने प्रारम्भ में कहा कि ''मेरे शरीर का आधा विभाजन करो'' ऐसे आदि सर्ग में ब्रह्मा के भी कर्त्ता अर्धनारीश्वर शिव को देखकर दक्ष ने सती जी को उन्हें सौंप दिया। तीनों लोकों की सभी स्त्रियां सती जी की वंशज हैं तथा ग्यारह

रुद्र भी उन्हीं के अंश से उत्पन्न हैं। जितनी सृष्टि है उसमें जितना स्त्री लिंग है वह सब सती का अंश है तथा समस्त पुल्लिंग भगवान रुद्र का ही अंश है। यह देखकर ब्रह्माजी ने दक्ष से कहा था कि ''यह सती संसार की जननी है इसकी सेवा करो। यह मेरी भी तथा तुम्हारी भी माता है। पुंनाम के नरक से रक्षा करने के कारण ही इसे पुत्री कहा गया है।'' ब्रह्माजी के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर दक्ष प्रजापति ने उस सती नाम की पुत्री को अत्यन्त आदर पूर्वक रुद्र के लिए अर्पित कर दिया।

हे ब्राह्मणो! श्रद्धा से लेकर कीर्ति तक जो तेरह धर्म की पत्नियां हैं उनसे यथा क्रम उत्पन्न होने वाली सन्तान को कहता हूँ। उनसे काम, दर्प, नियम, सन्तोष, अलोभ, श्रुत, दण्ड, समय, बोध, महाद्युति, अप्रमाद, विनय, व्यवसाय, क्षेम, सुख, यश नाम के पुत्र उत्पन्न हुए। धर्म के क्रिया नाम की भार्या से दण्ड और समय दो पुत्र उत्पन्न हुए तथा बुद्धि नाम की भार्या से अप्रमाद तथा बोध नाम के दो पुत्र हुए हैं। इस प्रकार धर्म के १५ आत्मज पुत्र हुए।

भृगु की पत्नी ख्याति के गर्भ से विष्णु भगवान की प्रिया श्री उत्पन्न हुई तथा धाता और विधाता नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। जो मेरु नाम के प्रजापति जामाता हुए।

मरीचि नाम के ऋषि के प्रभूति नाम की पत्नी से दो

पुत्र उत्पन्न हुए—पूर्णमा और मारीच तथा चार कन्यायें भी हुईं। सबसे बड़ी तुष्टि तथा इसके बाद दृष्टि, कृषि तथा अपचि।

हे मुनियो! क्षमा ने पुलह नाम के ऋषि से बहुत से पुत्र तथा पुत्री पैदा कीं। मुख्यतः कर्दम तथा सहिष्णु पुत्र तथा स्वर्ण के से रंग वाली पृथ्वी के समान क्षमा शील पीवरी नाम की कन्या हुई।

इसके बाद प्रीति नाम की पुलस्त्य ऋषि की भार्या से दत्तर्णव और दवाहु पुत्र तथा द्रषद्वती पुत्री उत्पन्न हुई। क्रतु की भार्या सन्नति से छः हजार पुत्र पैदा हुए जो सभी बालखिल्य मुनि कहलाए। अङ्गिरस की पत्नी स्मृति से सिनी, वाली, कुहू, राका तथा अनुमति आदि कन्यायें पैदा हुईं।

अत्रि की पत्नी अनुसूया से छः सन्तानें हुईं। एक श्रुति नाम की कन्या हुई। सत्यनेत्र, भव्यमुनि, मूर्तिराय, शनैश्चर तथा सोम पांच लड़के तथा छठी श्रुति नाम की कन्या हुई।

वशिष्ठ मुनि की पत्नी ऊर्जा से भी पुत्र उत्पन्न हुए। ज्यायजी, पुण्डरीकाक्ष, रज, सुहोत्र, बाहु, निष्पाप, स्रवन, तपस्वी, शुक्र आदि सात पुत्र हुए। भगवान शिव की आत्मा रूप पितामह अग्नि के स्वाहा नाम की पत्नी से संसार की भलाई के लिए तीन पुत्र पैदा हुए, जिनका

वर्णन आगे के अध्याय में किया गया है।

पित्रीश्वर तथा देवताओं आदि का वर्णन तथा शंकरजी का महात्म्य

सूतजी कहने लगे—अग्नि के पवमान, पावक और शुचि नाम के तीन पुत्र हुए। पवमान निर्मंथ्य (प्रकृत) कहलाया, पावक वैद्युत (बिजली सम्बन्धी) तथा शुचि सौर (सूर्य सम्बन्धी) अग्नि देने वाले कहलाये। इस प्रकार स्वाहा के ये तीन पुत्र बड़े ही तेजस्वी हुए। इनके पुत्र पौत्र तो बहुत ही तेजस्वी हुए हैं किन्तु यहां संक्षेप में उनकी संख्या बताते हैं। विसृज्य, ससक आदि ४९ हैं तथा व्रत का पालन करने वाले हैं। ये सभी प्रजापति हैं और भगवान रुद्र की आत्मा हैं।

मैना नाम की एक मानसी पुत्री स्वधा से उत्पन्न हुई। वह संसार में बहुत ही प्रसिद्ध हुई। मैना के दो पुत्र मैनाक और क्रौंच तथा एक उमा नाम की कन्या हुई। गङ्गा और हेमवती को भी पैदा किया जो शिव के शरीर का स्पर्श पाकर परम पवित्र हुईं। यज्ञों की जननी धरती को पैदा किया जो उनकी मानसी पुत्री हैं। कमल के से नेत्र वाली

स्वधा मेरु राजा की पुत्री हुई।

अब अमृत पान करने वाले पितरों का वर्णन करता हूँ तथा सभी ऋषियों के कुलों का भी विस्तार से वर्णन करता हूँ, उसे आप सभी ध्यान पूर्वक सुनें। दक्ष की पुत्री जो सती है उन्होंने भगवान शिव की समीपता प्राप्त की। पीछे उन्होंने अपने पिता दक्ष की निन्दा करके नीललोहित भगवान शम्भु का ध्यान करते हुए पार्वतीजी का रूप प्राप्त किया और शिवजी को पुनः पति रूप में प्राप्त किया।

उन निर्मल नीललोहित सभी रुद्रों के स्वरूप, जिनसे ये सभी १४ लोक आच्छादित हैं तथा जो जरा और मरण से रहित हैं उन रुद्र भगवान से ब्रह्मा जी बोले—हे महादेव, हे तीन नेत्र वाले! हे नीललोहित आपको नमस्कार है। आप सर्वज्ञ हो, सबकी गति हो, दीर्घ ह्रस्व तथा वामन भी आप ही हो। आप शुभ हो तथा आप नित्य हो, निर्मल हो, वीतराग हो, आप सभी संसार की आत्मा हो। इस प्रकार कनकाण्डज ब्रह्माजी ने रुद्र भगवान की सतुति करके परिक्रमा की और पुनः बोले—आप मृत्यु से रहित सृष्टि को बनाओ। तब शिवजी ने कहा कि यह तो असम्भव है। हे ब्रह्माजी! आप ही जरा मरण से युक्त जैसी चाहो वैसी सृष्टि बना लीजिए। तब ब्रह्मा ने शंकर भगवान के आदेशानुसार जरा और मरण से युक्त इस चराचर जगत की रचना की। भगवान तो

निवृत्त होकर ही स्थित रहे। हे ब्राह्मणो! उस समय शंकर जी स्थाणु (निश्चल ठूँठ के समान) बन गये। शिवजी तो आत्मभाव से निष्कल हैं, वे तो अपनी इच्छा से ही शरीर धारण करते हैं। अपनी दयालुता से सभी का कल्याण करते हैं। शंकर जी अपनी योग विद्या से बिना ही प्रयत्न के योग में स्थित रहते हैं, विरक्त के लिए वे मुक्ति हैं, वे सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हैं। मनुष्य संसार के भय से विषयों का त्याग करके वैराग्य द्वारा विराग को प्राप्त करते हैं। यह उनके दर्शनों की कृपा है। धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य शंकर जी से ही प्राप्त होते हैं। वे पिनाकी नीललोहित ही साक्षात् शंकर भगवान हैं। जो मनुष्य शंकर जी के आश्रित रहते हैं वे सभी बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं, इसमें संशय नहीं है। अत्यन्त पापी लोग भी शंकर जी की कृपा से दारुण नरक में नहीं जाते हैं। वे शंकर जी के आश्रित हो जाने से अमरता को प्राप्त हो जाता है।

ऋषि बोले—घोर आदि अट्ठाईस प्रकार की माया से युक्त पापीजन करोड़ों प्रकार के नरकों में पकाये जाते हैं। क्योंकि वे पापीजन नीललोहित शंकर भगवान के आश्रित नहीं होते हैं। भगवान शिव सभी प्राणियों के आश्रय हैं, अव्यय हैं, संसार के स्वामी हैं, पुरुष हैं, परमात्मा हैं। तमोगुण से वे कालरुद्र हैं, रजोगुण से ब्रह्मा

हैं और सतोगुण से वे सर्व प्रकार जाने गये विष्णु भगवान हैं, निर्गुण रूप से वे महेश्वर हैं। हे महामते सूतजी! अब आप कृपा कर यह बतलाइये कि मनुष्य किस कर्म या अकर्म से किस नरक में जाते हैं, यह सुनने का हमें बड़ा कौतूहल है?

मनु सहित योगेश्वर व्यास और उनके शिष्यों का प्रतिपादन तथा शंकर जी के रहस्य का कथन

सूतजी बोले—अब मैं आप लोगों के सामने भगवान शंकर जी के अत्यन्त तेजशाली रहस्य को कहूँगा। सबको प्रिय लगने वाले भगवान शंकर का प्रभाव पहले संक्षेप में कहता हूँ। परमतत्व को जानने वाले परम वैरागी लोग प्राणायाम आदि आठ प्रकार के साधनों का प्रयोग करते हैं तथा अरुणा आदि गुणों से युक्त विविध प्रकार के कर्म करते हुए अपने कर्म के अनुसार स्वर्ग और नरक को जाते हैं। भगवान शंकर के प्रसाद से ज्ञान प्राप्त होता

है तथा ज्ञान से योग होता है। योग से इस सम्पूर्ण संसार को भगवान शिव की कृपा से मुक्ति मिलती है।

ऋषि बोले—हे योग को जानने वाले सूतजी! यदि भगवान के प्रसाद से आप दिव्य योग को और महेश्वर भगवान को विज्ञान स्वरूप बतलाते हैं तो विज्ञान स्वरूप महादेव जी जो सभी प्रकार की चिन्ताओं से रहित हैं, वे योग मार्ग के द्वारा किस काल में मनुष्यों को कैसे उत्पन्न करते हैं ?

रोमहर्षण जी बोले—प्राचीन काल में देवता, ऋषि पित्रीश्वर और शैल आदि मुनियों ने ब्रह्मपुत्रों से जो सुना था, उसे मैं आप लोगों से कहता हूँ। द्वापर के अन्त में व्यासों के अवतार तथा योगाचार्यों और शिष्यों के अवतारों को कहता हूँ।

विभू (ब्रह्मा) के क्षमाशील चार शिष्य हुए और ईश्वर की कृपा से शिष्य तो बहुत से हुए। उन्हीं के मुख से, क्रम परम्परा से आया हुआ ज्ञान मनुष्यों को प्राप्त हुआ। भगवान की कृपा से प्रथम ब्राह्मणों को तथा अन्त में वैश्यों को वह ज्ञान मिला।

ऋषि लोग बोले—कौन-कौन से द्वापर में कौन-कौन से युगान्तर में तथा किन-किन कल्पों में कौन-कौन व्यास हुए। उनका चरित्र हमारे से आप कहो, क्योंकि आप यह सभी कहने में समर्थ हो।

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो! वाराह कल्प के वैवस्वत-मनवन्तर और उनके अन्तरों के व्यासों तथा रुद्रों को इस समय आपसे कहता हूँ। वेद पुराण और ज्ञान के प्रकाशक व्यासों को यथाक्रम इस समय आपसे कहता हूँ। ऋतु, सत्य, भार्गव, अंगिरा, सविता, मृत्यु, शतकृतु, वशिष्ठ, सारस्वत, त्रिधात्मा, त्रिवृत, स्वयं, धर्म, नारायण, तरक्षु, अरुणि तथा कृतंजय, तृण, बिन्दु, रुक्ष, मुनि, शक्ति, पाराशर, जातुकर्ण्य और साक्षात् विष्णु स्वरूप श्रीकृष्ण द्वैपायन मुनि व्यास हुए। अब आप लोग योगेश्वरों को क्रम से सुनिए—

कल्पों और कल्पान्तरों में कलियुग में रुद्र और व्यासों के अवतारों के गौरव से असंख्य योगेश्वर हुए हैं। वाराह कल्प के वैवस्वत अन्तर के योगेश्वरों के अवतारों को इस समय कहता हूँ तथा पुनः औरों से कहूँगा।

ऋषि बोले—इस समय आप वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर तथा ऊर्ध्व कल्प के सिद्धों को ही कहिये।

रोमहर्षण जी बोले—हे ब्राह्मणो! स्वायंभू मुनि सबसे प्रथम इसके बाद स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्णि, धर्मसावर्णि, विशंग, अविशंग, शबल, वर्णक नाम के मनु हुए। अकार से लेकर औकार तक मनु कहे गए हैं। श्वेत, पाण्डु, रक्त,

ताम्र, पीत, कपिल, कृष्ण, श्याम तथा धूम्र, सुधूम्र, अपिशाँग, पिशाँग, त्रिवर्ण, शबल तथा कालन्धु वर्ण के मनु हुए हैं, जो नाम और वर्ण से समान हैं तथा ये सभी शुभ हैं। वैवस्वत मनु ऋकार स्वरूप तथा कृष्ण वर्ण के हैं। युगों के आवर्त में होने वाले अब मैं सातवें योगियों को कहता हूँ। प्रथम वाराह कल्प के सावर्त अन्तर में होने वाले योगावतार उनके शिष्य तथा सन्तानों को क्रमशः कहूँगा। आद्य में श्वेत, रुद्र, सुतार, मदन, सुहोत्र, कंकण तथा लोकाक्षि मुनि, जैगीषव्यु भगवान, दधि वाहन, ऋषभ, बुद्धिमान, उग्र, अत्रि, सुबलक, गौतम, वेदशीर्ष, गोकर्ण, शिखण्डभूत, जटामाली, अट्ठाहास, दारुक, लाडली तथा महाकाय मुनि, शूली, दण्डी, मुण्डीश्वर, सहिष्णु, सोमशर्मा, चल, कुलीश नाम के संसार के गुरु ये योग में अवतार हुए। हे श्रेष्ठ व्रती ऋषियो! वैवस्वत मन्वन्तर में होने वाले परमात्मा के स्वरूप योगाचार्यों के अवतार आपसे कहे तथा द्वापर में होने वाले व्यासों के नाम भी कहे। अब योगाचार्यों के शिष्य प्रशिष्यों को बतलाता हूँ।

योगेश्वरों के चार शिष्य हुए। श्वेत, श्वेत शिखण्डी, श्वेताश्व तथा श्वेत लोहित, ये चार शिष्य हुए। इसके बाद दुँदुभी शतरूप, ऋचीक केतु, विशोक, विकेश, विपाश, पापनाशन सुमुख, दुर्मुख, दुर्दम, दुरितक्रम,

सनक, सनन्द, सनातन, ऋभु सनत्कुमार, सुधामा, विरजा, शंखपाद, वैरज, मेघ, सारस्वत सुवाहन, मेघवाह, महाद्युति, कपिल, आसुरि तथा पंचशिखामुनि, महायोगी धर्माता बाल्कल, महातेजस्वी, गर्ग, भृगु, अंगिरा, बलबन्धु, निरामित्र, तपस्वी केतु श्रृङ्ग, लम्बोदर, लम्ब, लम्बाक्ष, लम्बकेशक, सर्वज्ञ, समबुद्धि साध्य, सर्व, सुधामा, काश्यप, वशिष्ठ, विरजा, अत्रि, देवसद, श्रवण, श्रविष्टक, कुणि, कुणबाहु, कुशरीर कुनेत्रक, कश्यप, उपनाश, च्यवन, बृहस्पति, उतश्यो, वामदेव, वाचश्रवा, सुधीक, श्यावाश्व, हिरण्यनाभ, कौशल्य, लीगाक्षि, कुशुमि, सुमन्तु, बर्बरी, विद्वान कबन्ध, कुशिकन्धर, प्लक्ष, वाल्भ्य, यणि, केतुमान, गोपन, भल्लावी, मधुपिङ्गश्नेतकेतु, उशिक वृहदश्व, देवल, शालिहोत्र, अग्निवेश, युवनाश्व, शरद्वस, छगल, कुण्डकर्ण, कुम्भ, प्रवाहक, उलूक, विद्युत, मण्डूक, आश्वलायन, अक्षपाद, कुमार, उलूकवत्स, कुशिक, गर्भ मित्र, क्रौरुष्य आदि इतने योगीश्वरों के शिष्य सभी आवर्तों के हुए हैं। ये सभी विमल, ब्रह्म भूमिष्ठ तथा ज्ञान और योग में परायण हैं तथा सभी पाशुपत हैं, सिद्ध हैं और अपने शरीर को भस्म में लपेटे रहते हैं। इन शिष्यों के शिष्य प्रशिष्य तो सैकड़ों और हजारों हैं। जो पाशुपत योग को प्राप्त करके रुद्रलोक में स्थित हैं।

देवताओं से लेकर पिशाच आदि तक सभी पशु संज्ञा वाले हैं। शिव सबके पति हैं, इससे उन्हें पशुपति कहा गया है। अतः उन पशुपति रुद्र के द्वारा बनाया गया योग पाशुपत योग जानना चाहिए।

शिव तत्व को साक्षात्कार करने के लिए योग के स्थानों का वर्णन

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो! संसार के कल्याण के लिए इस समय मैं योग के स्थानों को संक्षेप में कहूँगा। गले से नीचे और नाभी से ऊपर एक वितस्त्य (बालिस्त) की दूरी पर तथा नाभि के नीचे आवर्त में और दोनों भौंहों के मध्य में योग के स्थान कहे गये हैं।

सभी प्रकार के अर्थ और ज्ञान का प्राप्त हो जाना ही योग कहा गया है। शिवजी की कृपा से उसमें हमेशा एकाग्रता होनी चाहिए। भगवान की कृपा से जो ज्ञान प्राप्त होता है, उसको ब्रह्मा आदि देवता भी कहने में समर्थ नहीं हैं। योग शब्द से ही निर्वाण (मोक्ष) अर्थात् महेश्वर शिव का लोक प्राप्त हो कहा गया है। उसका हेतु ऋषियों का ज्ञान है, जो शिव की कृपा से ही प्राप्त

होता है।

ज्ञान से इन्द्रियों के विषयों को रोक कर पाप को जला देना चाहिए। इन्द्रियों की वृत्ति के निरोध से ही योग की सिद्धि होगी।

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग कहा है। योग की सिद्धि के निम्न आठ प्रकार के साधन कहे हैं। प्रथम यम, दूसरा नियम, तीसरा आसन, चौथा प्राणायाम, पाँचवाँ प्रत्याहार, छठा धारण, सातवाँ ध्यान तथा आठवाँ समाधि।

परम तपस्या ही यम कहा जाता है। हे योगियों में श्रेष्ठ मुनियो! अहिंसा सबसे पहला यम का हेतु है। इसके बाद सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह (अधिक इकट्ठा न करना) आदि भी यम के हेतु हैं। यहाँ तक कि नियम का मूल भी यम ही है, इसमें कोई संशय नहीं है।

अपने सामने ही संसार के सभी प्राणियों को समझना ही अहिंसा कही है, जो आत्मज्ञान की सिद्धि को देने वाली है।

देखी हुई, सुनी हुई, अनुमान की हुई, अनुभव की हुई तथा दूसरे को भी पीड़ा पहुंचाने वाली न हो; ऐसी कही हुई बात को सत्य कहते हैं। ब्राह्मणों के लिए अश्लील बात न कहना तथा दूसरों के दोष जानकर भी

न कहना चाहिए। ऐसा वेदों का आदेश है।

अपने ऊपर या दूसरे के ऊपर आई हुई मुसीबत में भी किसी का धन न लेना ही संक्षेप में अस्तेय कहा गया है तथा मन से, कर्म से, वाणी से भी लेने की इच्छा न करें।

मन, वाणी और कर्म से मैथुन में प्रवृत्ति न रखना ही यतियों को और ब्रह्मचारियों को ब्रह्मचर्य कहा है। यह बात वैखानस (संन्यासी) तथा जिनके पास पत्नियाँ नहीं हैं, ऐसे महात्माओं को विशेषरूप से पालन करने को कही हैं। सपत्नीक गृहस्थी को भी इसका पालन बताता हूँ। उनको तो केवल अपनी पत्नी के साथ विधिपूर्वक मैथुन करना तथा अन्यों की पत्नियों से अपनी निवृत्ति मन, कर्म और वाणी से करनी चाहिये, ऐसा स्मृतियों को बताया धर्म है। विधिपूर्वक अपनी ही पत्नी से सम्भोग करके स्नान करना चाहिये, ऐसा सद् गृहस्थी भी आत्मयुक्त ब्रह्मचारी कहा गया है।

ब्राह्मण, गुरु तथा अग्नि के पूजन में अहिंसा का त्याग भी हो जाए तो भी कोई बात नहीं है, क्योंकि इस प्रकार की विधिपूर्वक की गई हिंसा भी अहिंसा ही है, ऐसा स्मृतियों तथा (वेद) का भी मत है।

स्त्रियों को सदा परित्याग करे, उनका साथ कभी भी न करे। मुर्दे में जिस प्रकार का चित्त हो जाता है,

निवृत्ति का, वैसा ही निवृत्ति का चित्त स्त्रियों के प्रति रखना चाहिए। स्त्री अंगार के समान और पुरुष घी के समान है। इससे नारी का संसर्ग दूर से ही परित्याग कर देना चाहिए। भोग से विषयों की तृप्ति कदापि नहीं हो सकती है। मन कर्म वाणी से विचार करके तथा वैराग्य से ही विषय शान्त हो सकते हैं। इन्द्रियों के द्वारा विषयों को भोगने से काम (इच्छायें) शान्त नहीं होतीं, अपितु अग्नि में घी आहुति देने के समान वे अधिक बढ़ती हैं।

हे वेद शास्त्र जानने वाले ऋषियो! त्याग से ही अमरत्व मिलता है। वह कर्म, सन्तान या द्रव्य से प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए मन, वाणी और कर्म से विराग करना चाहिए और ऋतु काल को छोड़कर मैथुन से निवृत्ति रखना ब्रह्मचर्य कहा है।

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! ये मैंने आपसे यम कहे। अब नियमों को बताता हूँ। शौच, यज्ञ, तप, दान, स्वाध्याय, इन्द्रिय निग्रह, व्रत, उपवास, स्नान, अनिच्छा,ये दस नियम कहे हैं। शिव मन्त्र का जप तथा पद्म आदि आसन कहे हैं। भीतरी-बाहरी पवित्रता ही शौच है। बाहरी पवित्रता से युक्त होकर भीतरी पवित्रता का आचरण करना चाहिए। शिवजी की पूजा करने वाले को अग्नि, वरुण तथा ब्राह्मण सम्बन्धी कर्त्तव्य करने चाहिए। विधान पूर्वक स्नान आदि करके पुनः भीतरी पवित्रता का आचरण

करना चाहिये। तीर्थ के जल में सदा ही मिट्टी आदि (भस्म) शरीर में लगानी चाहिए।

स्नान आदि करने पर भी मनुष्य भीतरी पवित्रता से हीन होते हैं, जैसे शैवाल, मगर, मछली आदि जीव। सदा मछली के द्वारा जीवन यापन करने वाले धीवर आदि भी सदा जल में रहते हुए भी मलिन (अपवित्र) रहते हैं। इसलिए हे ब्राह्मणो! सदा जल में अवगाहन करने से ही मनुष्य पवित्र नहीं होते, विधान पूर्वक हमेशा भीतरी पवित्रता भी रखनी चाहिए। आत्म ज्ञान रूपी पवित्रता जल में सदा स्नान करके सुन्दर वैराग रूपी मिट्टी का चन्दन लगाकर अपने को पवित्र करना चाहिए। शुद्ध के लिए ही सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, अशुद्ध को नहीं। अर्थ सिद्धि के लिए सन्तोष पूर्वक चान्द्रायण व्रत आदि से पवित्रता प्राप्त करनी चाहिए।

ओंकार का जप ही स्वाध्याय कहा गया है जो तीन प्रकार का होता है। वाणी के द्वारा किया हुआ जप अधम कहा है। उपाँशु जप ही सर्वोत्तम है। मानसिक जप भी श्रेष्ठ है। इनका विस्तार से वर्णन आगे पंचाक्षर वाले अध्याय में किया गया है। गुरु की अचल भक्ति से शिव का ज्ञान प्राप्त होता है।

इन्द्रियों को विषयों से रोकना प्रत्याहार कहा गया है। चित्त की धारणा को संक्षेप से बताता हूँ। स्वस्थ

चित्त से विचार पूर्वक एक चित्त होकर दूसरी तरफ से मन हटा कर ध्यान करना ही समाधि कहा गया है। समाधि में अपने शरीर को शून्य मात्र समझता हुआ चिद् आनन्द का आभास होता है। समाधि का मूल कारण प्राणायाम है। प्राणायाम में अपने देह की वायु को निरोध करते हैं। मन्द, मध्यम और उत्तम तीन प्रकार का प्राणायाम कहा है। प्राणवायु का रोकना ही प्राणायाम कहा है, प्राणायाम का मान बारह मात्राओं का कहा गया है। नीचे की ओर भी बारह मात्रा तथा ऊपर भी बारह मात्राओं का उसका मान होता है। मध्यम में तो चौबीस मात्राओं का मान होता है। मुख्य रूप से तीनों ३६ मात्रा के ही कहे हैं। आनन्द की उत्पत्ति के योग के लिए प्रस्वेद, कम्पन, उत्थान, रोमाँच, ध्वनि, अङ्गों का मोटन तथा कम्पन गर्भ में क्रमानुसार जप करना चाहिए।

न्यायपूर्वक योग का सेवन करता हुआ स्वस्थपने को प्राप्त करता है। जैसे जंगल का मतवाला सिंह, हाथी तथा आठ पैर वाला शरभ नाम का पशु स्वस्थ घूमते हैं, वैसे ही योगी भी निर्द्वन्द विचरते हैं। योग के अभ्यास से व्यसन (शौक) नहीं लगते। इसका अभ्यास करते हुए मुनि लोगों को मन और वाणी से उत्पन्न दोषों को जला देना चाहिए। बुद्धिमान लोग प्राणायाम से भली भांति दोषों को नष्ट करते हैं तथा स्वाँस के द्वारा उन्हें जीर्ण

कर लेते हैं। प्राणायाम से ही दिव्य शान्ति, प्रशान्ति, दीप्ति तथा प्रसाद आदि सिद्धियों को साध लेते हैं। हे द्विजो! इन चारों में प्रथम शान्ति कही गई है। सहज ही आये हुए पापों को नष्ट कर देना ही शान्ति है। भली प्रकार वाणी के द्वारा संयम करना अशान्ति है। प्रकाश को दीप्ति कहा गया है। बुद्धि के द्वारा सभी इन्द्रियों को तथा वायु को भी वश में करना प्रसाद कहा गया है। इन चारों में प्रसाद तो अपने अन्दर ही होता है। इसमें प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कुकर, देवदत्त, धनंजय आदि दस पवनों को भी जीतना पड़ता है।

प्रयाण (चलना) करती है, इससे वायु को प्राण वायु कहते हैं। आहार आदि क्रम से जो वायु नीचे की तरफ जाये, वह अपानवायु (पाद) है। व्यान नाम की वायु अङ्गों में व्याधियाँ पैदा करती है तथा ऊपर की ओर चलती है। मर्मों को जो झकझोरती है वह उदान नाम की वायु कहती है। अङ्गो को जो समान रूप से ले जाती है वह समान नाम की वायु है। उद्‌गार (डकार) को नाग नाम की वायु कहा है। उन्मीलन को कूर्म कहा है। भूख लगाने वाली वायु को कृकर कहते हैं। जंभाई वाली वायु को देवदत्त कहा है। बड़ी भारी आवाज करने वाली वायु को धनंजय कहते हैं। वह मरने पर भी रहती है। इस प्रकार ये दस वायु प्राणायाम से सिद्ध की जाती

हैं। शान्ति आदि चारों सिद्धियों में प्रसाद चौथी है। विस्वर, महान, मन, ब्रह्मा, चित्त, स्मृति, ख्याति, ईश्वर, मति, बुद्धि इनको महत नाम वाला कहा गया है और ये बुद्धि प्रसाद तथा प्राणायाम से सिद्ध होते हैं। सभी द्वन्द्वों (दो में) में जो स्विरी (विनास्वर) भाव है, उसे विस्वर कहा जाता है। सभी तत्वों में सर्व प्रथम पैदा होने से दूसरा महान कहा है। हे ब्रह्म को जानने वाले मुनियो! जो प्रमाण में छोटा है उसे मनन करने के कारण मन कहा है। बड़ा और चौड़ा होने से ब्रह्म कहते हैं। सर्व कर्मों को भोग के लिए जो चुनता है उसे चित्ति कहा है। सभी सम्बन्धों को स्मरण करता है इससे स्मृति कहा है। ज्ञान आदि के द्वारा अनेकों की व्याख्या करता है इससे उसे ख्याति कहते हैं। सभी तत्वों का स्वामी सभी कुछ जानने वाला ईश्वर कहा गया है। मनन करती है तथा मानती है इससे मति कहते हैं। अर्थ का बोध कराती है तथा बोध करती है इससे उसे बुद्धि कहते हैं। इस बुद्धि के प्रसाद से प्राणायाम सिद्ध होता है। यम का पालन करने वाला आदि में सब दोषों को जलाकर प्राणायाम करता है।

धारणा के द्वारा पातकों को प्रत्याहार से जला देना चाहिए। विषयों को विष के समान जानकर ईश्वर के गुणों का ध्यान करना चाहिए। समाधि द्वारा प्रज्ञा को बढ़ाना चाहिए। स्नान करके अष्टाँग योग को क्रम पूर्वक

करना चाहिए। विधिवत् योग सिद्धि के लिए आसन प्राप्त करके आत्मा को देखे। अदेश और असमय में योग साधन न करे।

अग्नि के अभ्यास में, जल में, सूखे पत्तों में, जन्तुओं से व्याप्त जगह में, श्मशान में, जीर्ण पशुओं के कोष्ठ में, शब्द होने वाले स्थान में तथा शब्द वाले समय में, दीमक के घर में (बमई), अशुभ जगह में, दुष्ट पुरुषों से आक्रान्त जगह में, मच्छर आदि से युक्त स्थान में, शरीर में बाधा उत्पन्न होने पर, दुर्मन होने पर योग साधन न करे तथा गुप्त शुभ स्थान में रमणीक पर्वत की गुफा में, शिवजी के क्षेत्र में, शिवजी के बगीचे में, वन में, अथवा घर में, शुभ देश में, जन्तुओं से रहित निर्जन देश में, अत्यन्त निर्मल, अच्छी प्रकार लिपा पुता, चित्रित, दर्पण के दरस से युक्त, अगर धूप आदि से सुगन्धित अनेक प्रकार के फूलों के वितान से घिरा हुआ फल पत्ते तथा मूल आदि से युक्त, कुशा पुष्प आदि के सहित स्थान में, सम आसन पर बैठकर बुद्धिमान को स्वयं योगाभ्यास करना चाहिए। सबसे प्रथम गुरु को प्रणाम करे इसके बाद शिव को, देवी को, गणेश को, शिष्यों सहित योगीश्वरों को प्रणाम करके युक्ति पूर्वक योग में लगना चाहिए। आसन पर बैठकर पद्म अथवा अर्धासन बाँध कर बैठे। सम जंघाओं से अथवा एक जंघा से दोनों पैरों

को सिकोड़ कर दृढ़ पूर्वक आसन बाँध कर रहे। आँखों को एक जगह स्थिर करके छाती को सीधी रखे। पास की एड़ियों से अंडकोषों की तथा मूत्र इन्द्री की रक्षा करे। कुछ-कुछ ऊपर को उठा हुआ सिर रखे। दाँतों को दाँतों से स्पर्श न करे। नासिका के अग्र भाग को ही देखे, इधर उधर न देखे। तमोगुण को रजोगुण से, रजोगुण को सतोगुण से ढक लेना चाहिए तथा अपने में स्थिर होकर शिव के ध्यान में अभ्यास करे। ओंकार का, शुद्ध दीपशिखा का, श्वेत कमल की पंखुड़ी पर शिव का ध्यान करे। नाभि के नीचे विद्वान पुरुष कमल का ध्यान करके तीन या आठ अंगुल के कोण में अथवा पंचकोण में या त्रिकोण में अग्नि, सोम तथा सूर्य की शक्तियों के द्वारा सूर्य, चन्द्र, अग्नि अथवा अग्नि, सूर्य और चन्द्रमा का इस क्रम से ध्यान करे। तीन गुणों के क्रम से ऊपर के इन तीन मण्डलों की भावना करनी चाहिये। अपने में स्थित होकर रुद्र का अपनी शक्ति के अनुसार शक्ति के सहित चिन्तन करे।

नाभि में अथवा गले में अथवा दोनों भौंहों के मध्य में यथा विधि ललाट की फलिका में मध्य सिर में योगस्थ होकर ध्यान करना चाहिए।

दो दल में, सोलह में, बारह में, दस में, छः में अथवा चार कोणों में शिव का ध्यान करे। स्वर्ण की सी आभा

वाले, अंगार के समान, श्वेत अथवा द्वादश आदित्य के समान तेजस्वी अथवा चन्द्रमा की परछाईं के समान, बिजली की चमक के समान, अग्नि के वर्ण वाला अथवा बिजली की लपट के समान आभा वाले परमेश्वर का चिन्तन करना चाहिए अथवा करोड़ों वज्र (हीराओं) की सी चमक वाले अथवा पद्म राग मार्ग की आभा वाले नीललोहित शिव का ध्यान योगी को करना चाहिए।

महेश्वर का हृदय में ध्यान करे, नाभि में सदाशिव का, चन्द्रचूड़ का ललाट में तथा दोनों भौंहों के मध्य भाग में शंकरजी का ध्यान करना चाहिए।

निर्मल, निष्कल, ब्रह्म, शांत, ज्ञान के साक्षात् स्वरूप, लक्षण रहित, शुभ, निरालम्ब, अतर्क्य, नाश और उत्पत्ति से रहित कैवल्य, निर्वाण, निश्रेयस, अमृत, अक्षर, मोक्ष, अद्भुत महानन्द, परमानन्द, योगानन्द, हेय उपायों से रहित, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, शिव स्वयं जाना जाय ऐसे न जाने गये परम ज्ञान के स्वरूप अतीन्द्रिय, अनाभास, परात्पर तत्व, सब उपाधियों से अलग, विचार पूर्वक ज्ञान से ही जानने योग्य, अद्वैतरूप महादेव को हृदय रूपी कमल में चिन्तन करना चाहिए।

नाभि में सदाशिव का सर्व देवताओं के ईश्वर के रूप में चिन्तन करे। देह के मध्य में शुद्ध ज्ञान मय शिव का ध्यान करे। क्रमशः छोटे, मध्यम तथा उत्तम मार्ग

विद्वान पुरुष को कुम्भक के द्वारा अभ्यास करना चाहिये।

बुद्धिमान पुरुष ३२ रेचक को हृदय और नाभि में समाहित करके कुम्भक के द्वारा देह के मध्यं में शिव का स्मरण करे और इस प्रकार का एकीभाव पैदा करे कि जिससे रस (आनन्द) की उत्पत्ति होवे। रस की समान स्थिति में ही ब्रह्मवादी विद्वान आनन्द मानते हैं। द्वादश धारणा आदि के द्वारा समाधि में जब तक स्थित रहता है, तब तक आनन्द उत्पन्न होता है अथवा ज्ञानियों के सम्पर्क से पैदा होता है अथवा प्रयत्न से शीघ्र या देर में पुनः पुनः लगने से ज्ञान प्राप्त होता है। गुरु के द्वारा बताये जाने पर अभ्यास करते हुए भी नाश को प्राप्त होते हैं।

योग में आपत्तियों तथा रुकावटों का वर्णन

सूतजी बोले—हे ऋषियो! योग साधन में सर्व प्रथम आलस्य नाम की आपत्ति आती है। दूसरी व्याधि पीड़ा, प्रमाद, संशय चित्त की चंचलता, दर्शन में अश्रद्धा, भ्रान्ति, तीन प्रकार के दुःख दुर्मनस्थता, अयोग्य विषयों में योग्यता होना ये दस प्रकार की बाधायें मुनि लोगों को बताई हैं।

आलस्य का कारण तो शरीर का मोटा हो जाना तथा चित्त का योग में न लगना होता है। व्याधि धातु की विषमता से दो प्रकार की होती है। एक कर्म के द्वारा होने वाली तथा दूसरी दोषों (वातपित्त आदि) के द्वारा होने वाली। प्रमाद साधनों के अभाव से होता है। भय के द्वारा ऐसा होगा या नहीं कहना ही संशय है। चित्त की चंचलता (एकाग्र न होने) से योगी का आदर नहीं रहता। संसार के बन्धनों से भूमि आदि प्राप्त करने पर भी यदि मन नहीं एकाग्र होता तो योगी की प्रतिष्ठा नहीं होती। योग साधन में भाव रहित वृत्ति का नाम अश्रद्धा है। गुरुज्ञान, आचार, शिव आदि में साधक की भावना न होना ही अश्रद्धा है, ज्ञान का विपर्यय (उलटा समझना) ही भ्रान्ति है। जैसे शरीर को ही आत्मा समझना आदि।

दुःख आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक तीन प्रकार के कहे हैं। दुर्मनस्यता को वैराग्य के द्वारा निरोध करना चाहिये। तमोगुण तथा रजोगुण के द्वारा छुआ हुआ मन ही दुर्मन होता है। योग्य और अयोग्य विषयों में विवेक के द्वारा स्वीकृति ही योग्यता है तथा हठ पूर्वक करना अयोग्यता है। इस प्रकार योगियों को योग योग मार्ग के साधने में यह दश आपत्तियाँ आती हैं। किन्तु अति अधिक उत्साह वाले मनुष्यों के द्वारा यह नष्ट कर दी जाती हैं। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

इन आपत्तियों के नष्ट हो जाने पर सिद्धि की सूचक बाधायें उत्पन्न होती हैं। इनमें प्रतिभा नाम की पहली सिद्धि है। दूसरी श्रवण कही गई है। तीसरी वार्ता, चौथी दर्शना, पाँचवीं आस्वादा, छठी वेदना कही गई है। मनुष्य इन छः सिद्धियों को त्यागने पर ही सिद्ध होता है।

प्रतिभा को दूसरों पर प्रभाव डालने वाली सिद्धि कहा है। इसके द्वारा सिद्ध लोग दूसरों को प्रभावित करते हैं। जैसे सूक्ष्म वस्तु को तथा व्यवहार की बात को, बीती हुई तथा आगे की बात को बुद्धि के विवेचन द्वारा बता देना। सभी प्रकार का ज्ञान प्रतिभा का अनुयायी होता है।

योगी लोग बिना ही प्रयत्न के सभी शब्दों को श्रवण सिद्धि के बता देते हैं। ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत का ज्ञान भी उन्हें श्रवण सिद्धि के द्वारा सहज ही में हो जाता है। स्पर्श के द्वारा वेदना सिद्धि का मान होता है। दर्शना सिद्धि के द्वारा बिना ही प्रयत्न के दिव्य रूपों के दर्शन होने लगते हैं। दिव्य रसों का स्वाद बिना प्रयत्न के ही जिस सिद्धि से मिलता है, उसको आस्वादा सिद्धि कहा गया है। तन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) के द्वारा दिव्य गन्धों का बिना ही प्रयत्न के आभास कराने वाली सिद्धि वार्ता है।

इस संसार में औपसर्गिक आदि ६४ प्रकार के गुण

कहे हैं, परन्तु योगी को आत्म कामना के लिए इन्हें सर्वथा त्याग कर देना चाहिए। इन गुणों के पिशाच, पार्थिव, राक्षस, याक्ष, गान्धर्व, ऐन्द्र, व्योमात्मक, प्रजापत्य अहंकार, ब्राह्म आदि नाम बताये हैं। इनमें आदि को आठ रूपों वाला दूसरे को सोलह रूपों वाला बताया है। इसी प्रकार तीसरे को चौबीस, चौथे को बत्तीस, पाँचवें को चालीस भूतमात्रा का बताया है। ६४ गुणों से युक्त ब्राह्म गुण होता है। औपसर्गिक आदि गुणों का त्याग करके लोक में ही गुणों को देखकर योगी को योग में तत्पर रहना चाहिए।

मोटापन, हल्कापन, बालकपन तथा जवानी आदि अनेक प्रकार की जाति देहधारियों के लिए कही गई हैं। पृथ्वी आदिक अंशों के बिना ही सुन्दर गन्ध से युक्त जो ऐश्वर्य हैं वह आठ गुण वाला होता है उसे महा पार्थिव गुण कहा है। जल में रहता हुआ भी भूमि पर निकल आना, इच्छा शक्ति के द्वारा सम्पूर्ण समुद्र को भी पीने की सामर्थ रखना, संसार में जो देखने की इच्छा हो उसे जल में देख लेना, जो भी वस्तु हों उन्हें कामना के द्वारा ही भोगने की इच्छा से ही भोग लेना, बिना बर्तन के ही हाथ पर जल को पिंड के समान रख लेना, शरीर से अग्नि की लौ निकलते रहने पर भी जलने का भय न होना, शरीर का घाव रहित रहना आदि सोलह प्रकार के

ऐश्वर्य कहे हैं। संसार को जलता हुआ दीखने पर भी जले नहीं, जल के बीच में अग्नि जलकर अपनी रक्षा करना, हाथ पर आँच को धारण कर लेना, किसी भी वस्तु को जलाकर भस्म कर देना तथा उसे फिर ज्यों का त्यों बना देना, आदि तेज सम्बन्धी २४ गुण कहे गये हैं।

प्राणियों के मन की बात को जान लेना, पर्वत आदि महान वस्तुओं को कन्धे पर धारण कर लेना, अत्यन्त छोटा बन जाना तथा अत्यधिक बड़ा बन जाना, हाथों के द्वारा वायु को पकड़ लेना, अंगूठे के द्वारा दबा देने पर पृथ्वी का काँप जाना आदि ऐश्वर्यशाली गुण वात (वायु) के सम्बन्धी बताये हैं। आकाश गमन, शरीर को छाया से रहित दिखाना आदि इन्द्रिय सम्बन्धी गुण कहे हैं। दूर से शब्द ग्रहण कर लेना, सभी शब्दों का ज्ञान होना, तन्मात्रता (रूप, रस आदि) का ग्रहण कर लेना, सभी प्राणियों का दर्शन आदि ऐश्वर्य भी इन्द्रिय सम्बन्धी हैं। इच्छानुसार अपनी इन्द्रियों को वश में कर लेना, संसार का दर्शन करना आदि मानस गुण के लक्षण हैं। छेदना, ताड़ना देना, बाँध देना, संसार को पलट देना, सब प्राणियों की कृपा होना, काल और मृत्यु को जीत लेना, ये प्रजापत्य अहंकार के लक्षण हैं।

बिना ही कारण के सृष्टि रच देना, पालन करना, संसार बनाने की प्रवृत्ति तथा प्रलय कर देना, इस अदृश्य

का तथा व्यक्त जगत का निर्माण तथा अलग अलग बाँटना आदि ब्रह्म सम्बन्धी तेज का गुण है।

इस प्रकार ये प्रधान वैष्णव पद भी कहे गए हैं। इनके गुणों को ब्रह्म ही जान सकता है, अन्य किसी में जानने की सामर्थ नहीं है। ये असंख्य गुण हैं; शिव से अन्य और कौन जान सकता है। इन परम ऐश्वर्यों को शैवी गुण कहा है और विष्णु के द्वारा जाने गए हैं।

योग के उत्थान में ये सिद्धियाँ बाधा रूप आती हैं। इनको प्रयत्न के द्वारा वैराग्य पूर्वक रोकना चाहिए। विषयों के भय का नाश तथा अतिशयता जानकर अश्रद्धा से इन सिद्धियों का त्यागना ही विरक्ति है। अतः इन सिद्धियों को वैराग के द्वारा योग में विघ्न समझ कर त्यागना चाहिए। इन औपसर्गिक का परित्याग करने से महेश्वर प्रसन्न होते हैं। उनके प्रसन्न होने पर विमल मुक्ति, अथवा अनुग्रह या लीला को योगी प्राप्त होते हैं। इस प्रकार इन बाधाओं को निरोध करके विशेष चेष्टा से वह मुनि सुखी होता है। कभी-कभी इस भूमि को छोड़कर आकाश में शोभायुक्त होकर क्रीड़ा करता है। कभी वह वेदों का उच्चारण करने लगता है। कभी उनके सूक्ष्म अर्थों को बतलाता है। कभी कभी श्रुतियों के अर्थों को बतलाता हुआ श्लोक (कविता) बनाने लगता है। कभी हजारों प्रकार के बन्धनों से बंध जाता है। कभी मृग

पक्षियों के शब्द ज्ञान का बखान करने लगता है।

ब्रह्मा से लेकर स्थावर जंगम तक सभी को हाथ में रखे हुए आँवले के समान देखने लगता है। बहुत कहने से क्या लाभ अनेक प्रकार के विज्ञानों को उत्पन्न करता है। हे श्रेष्ठ मुनियो! उस महात्मा मुनि के अभ्यास के द्वारा विशुद्ध विज्ञान स्थिर होता है।

वह योग में लगा हुआ सभी तेजधारी रूपों को देखता है। अनेकों प्रकार के देवताओं के प्रतिबिम्ब और हजारों विमानों को देखता है। वह योगी, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अग्नि, वरुण, आदिक, ग्रह, नक्षत्र, तारे अनेकों हजारों भुवन, पाताल, तलों की संख्या आदि को समाधि में बैठा हुआ आत्म विद्या के दीपक के प्रकाश से स्वस्थचित्त से अचल होकर देखता है।

भगवान की कृपा रूपी अमृत से भरे हुए सत्व के पात्र को देखता है तथा अपने हृदय के अंधकार को हटाकर वह पुरुष अपने आत्मा में ही ईश्वर को देखता है। भगवान की कृपा से धर्म ऐश्वर्य, ज्ञान, वैराग्य, अपवर्ग (मोक्ष) प्राप्त होती है इसमें अन्य विचार नहीं करना चाहिए। दस हजार वर्ष, हजार बार बीत जाएँ तो भी उनकी कृपा के विस्तार को नहीं कहा जा सकता। हे मुनीश्वरो! पाशुपत योग में स्थित योगी की महिमा बड़ी अपार है।

योग सिद्धि प्राप्त साधु पुरुष के लक्षण तथा शिव से साक्षात्कार कराने वाले उपायों का वर्णन

सूतजी बोले—हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! जिनके ऊपर भगवान शंकर कृपा करते हैं उनको बताता हूँ। महेश्वर भगवान, सज्जनों पर, आत्मा को जीतने वालों पर, द्विजातियों (ब्राह्मणों, क्षत्री, वैश्य) पर, धर्म के जानने वाले पर, साधु पुरुषों पर, आचार में श्रेष्ठ आचार्यों पर, आत्मा में शिव को जानने वालों पर, दयालु पुरुषों पर, तपस्वियों पर, संन्यासियों पर, ज्ञानियों पर, आत्मा को वश में करने वालों पर, योग में तत्पर रहने वाले पुरुष पर, श्रुति स्मृति को जानने में श्रेष्ठ तथा हे द्विजो! श्रौत स्मार्त कर्म के जो विरोधी न हों, ऐसे मनुष्यों पर कृपा करते हैं।

अब इन सबकी अलग अलग व्याख्या करते हुए सूतजी कहते हैं कि हे द्विजो! जो श्रेष्ठ पुरुष ब्रह्म के पास ले जाये अथवा जायें वे सन्त कहे हैं। दशों इन्द्रियों के विषयों को दूर करके आठों प्रकार के लक्षणों से युक्त जो पुरुष हैं तथा जो सामान्य स्थिति में और धन की कमी व अधिकता में न क्रोध करते हैं, न हर्ष करते

हैं, वे जितात्मा पुरुष कहे जाते हैं। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य में युक्त पुरुष द्विजाती कहलाते हैं। वर्ण आश्रमों में युक्त ये द्विजाती जन सुख से करने वाले हैं। श्रौत स्मार्त के धर्म का ज्ञान करना ही धर्मज्ञ कहा है। विद्या के साधन के द्वारा तथा ब्रह्मचारी और गुरु की सेवा में रहने वाला पुरुष साधु है। क्रिया की साधना के द्वारा गृहस्थ भी साधु है, ऐसा कहा है। तपस्या की साधना करने के कारण वन में रहने वाला वखान सभी साधु कहा गया है। यत्न करने वाला यति भी साधु ही है। क्योंकि वह योग साधना करता है। इस प्रकार धर्म आश्रमों के साधन करने वाले को साधु कहा गया है। चाहे वह गृहस्थ हो, ब्रह्मचारी हो, वानप्रस्थ हो या यति हो।

धर्म अधर्म शब्दों को समझाकर जो कर्म में तत्पर होता है तथा क्रियाशील होता है उस धर्मज्ञ को आचार्य कहना चाहिए। कार्य को कुशलपूर्वक करना धर्म तथा अकुशलता से करना ही अधर्म है। धारण करने योग्य कर्मों को करने के कारण ही उसे धर्म कहा गया है। अधारण करने योग्य कर्म ही अधर्म कहे गए हैं। धर्म के द्वारा इष्ट की प्राप्ति आचार्यों द्वारा उपदेश की गई है तथा अधर्म से अनिष्ट की प्राप्ति बताई गई है।

वृद्ध, जो लोलुप न हों, आत्म ज्ञानी हों, अदम्भी हों, अच्छी प्रकार विनीत हों, सरल हों आदि गुण सम्पन्न

जन आचार्य कहे गए हैं। अपने आप भी जो धर्म आचरण करते हैं तथा दूसरों में भी आचार स्थापित करते हैं, शास्त्र और उनके धर्मों का भली भाँति आचरण करने वाले आचार्य कहलाते हैं।

श्रवण करने से जो कर्म किया जाता है उसे श्रौत तथा स्मरण करने से जो कर्म है उसे स्मार्त कहा जाता है। वेद विहित जो यज्ञ आदि कर्म हैं, वे श्रौत कर्म हैं तथा वर्ण आश्रमों को बताये हुए जो कर्म हैं, वे स्मार्त कर्म हैं। देखे हुए अनुरूप अर्थ को तथा पूछे गए अर्थ को जो कभी नहीं छिपाते तथा जो देखा है वही सत्य कह देते हैं तथा जो ब्रह्मचर्य से रहते हों, निराहारी हों, अहिंसा और शान्ति में सर्वथा तत्पर रहते हों, उसे तप कहा गया है।

जो हित, अनहित समझ कर सभी प्राणियों में अपने समान ही बर्ताव करता है उस पुण्यमयी वृत्ति को ही दया कहते हैं। जो द्रव्य उचित न्याय पूर्वक आया हो और वह गुणवान को दिया जाए, वह दान का लक्षण कहा है। छोटा, बीच का तथा बड़ा इस प्रकार का ही कहा है। करुणा पूर्वक सभी प्राणियों को बराबर भागों में बाँट दिया जाए, उसे मध्यम यानी बीच का दान कहा है।

श्रुति स्मृति के द्वारा बताया गया तथा वर्ण आश्रमों

को बताया गया माया और कर्म के फल को त्याग देने वाला योगी ही शिवात्मा है अर्थात् वह अपने अन्दर ही शिव को देखता है। सभी दोषों को त्याग देने वाला पुरुष ही युक्त योगी कहा गया है। जो पुरुष असंयमी न हो तथा विषयों में आसक्त न हो, विचारवान हो, लोभी न हो, वही सच्चा संयमकारी है। अपने लिए अथवा दूसरों के लिए अपनी इन्द्रियों को समान रूप से प्रयोग करता है तथा कभी झूँठ में अपनी आत्मा को प्रवेश नहीं होने देता, यह शम के लक्षण हैं। अनिष्ट में कभी भयभीत नहीं होता हो तथा इष्ट में कभी प्रसन्न न होता हो, ताप तथा विषाद निवृत्ति और विरक्ति से सदा अलग रहे वह संन्यास का लक्षण है। कर्मों से आसक्ति न रखना अर्थात् कर्मों से अलग रहना ही संन्यास है। चेतना तथा अचेतना का विशेष ज्ञान ही वास्तव में ज्ञान कहा है। इसी प्रकार के ज्ञान युक्त तथा श्रद्धायुक्त योगी पर भगवान शंकर की कृपा होती है। उसी पर वे प्रसन्न होते हैं। इसमें संशय नहीं है। हे ब्राह्मणो! वास्तव में यही धर्म है किन्तु परमेश्वर के विषय में गुह्य (छुपा हुआ) जो रहस्य है उसे सब जगह प्रकट न करे। शिव की भक्ति ऐसे पुरुष को बिना संदेह के ही मुक्ति प्रदान कर देती है। भगवान शिव अपने भक्त के वश में रहते हैं चाहे वे अयोग्य ही क्यों न हो। उसे अनेक प्रकार के अन्धकार से छुड़ाकर उस पर

प्रसन्न होते हैं। उसे ज्ञान, अध्ययन (पढ़ना), पढ़ाना, हवन करना, ध्यान, तप, वेद शास्त्र पढ़ना या सुनना, दान देना तथा हजारों चन्द्रायण व्रत करना तथा और भी अनेक प्रकार के व्रतादि रखना भक्त के लिए जरूरी नहीं है उस पर तो शिव सदा प्रसन्न रहते हैं। हे श्रेष्ठ मुनियो! जो लोग भगवान शिव की भक्ति नहीं करते वे इस पर्वत की गुफा के समान संसार में गिरते हैं और भक्त भगवान के द्वारा उठा लिए जाते हैं।

हे ब्राह्मणो! जब मनुष्य इस संसार में भक्तों के दर्शन मात्र से ही स्वर्ग आदि लोकों को प्राप्त कर लेते हैं तो भक्तों के लिए तो दुर्लभ ही क्या है। भक्त लोग भगवान शिव की कृपा से ब्रह्मा, विष्णु तथा देवताओं के राजा इन्द्र तथा और भी अन्य उत्तम स्थानों व पदों को प्राप्त कर लेते हैं। भक्ति से मुनि लोगों को बल एवं सौभाग्य की प्राप्ति होती है।

हे ब्राह्मणो! प्राचीन समय में बनारस के अविमुक्त क्षेत्र में विराजमान भगवान श्री महेश्वर जो रुद्र हैं उनसे भगवती पार्वती ने जो बात पूछी थी और जो भगवान रुद्र ने रुद्राणी देवी पार्वती को जो बताया था वह सुनाता हूँ। वाराणसी पुरी में भगवान रुद्र को प्राप्त कर भगवती इस प्रकार पूछने लगीं। देवी बोली—हे प्रभो! हे महादेव जी! आप किस उपाय या पूजा के द्वारा वश में हो जाते

हो ? विद्या के द्वारा या तपस्या के द्वारा अथवा योग के द्वारा, सो मुझे आप कृपा करके बतलाइये।

सूतजी कहने लगे—हे ऋषियो! इस प्रकार भगवती के वचनों को सुनकर शिवजी ने पार्वती जी को देखा। फिर बाल चन्द्रमा के तिलक को धारण करने वाले शिवजी पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख वाली पार्वती जी से हँसते हुए इस प्रकार बोले—हे देवि! इस सुन्दर पुरी को प्राप्त करके बहुत ही सुन्दर प्रश्न तुमने पूछा है। हे पार्वती जी! इसी प्रकार का प्रश्न बहुत समय पहले हिमालय की पत्नी मैना ने हिमालय से किया था, उसका मुझे स्मरण हो रहा है। हे विलासिनि! जो तुमने आज पूछा है, वह पूर्व काल में पितामह ब्रह्मा जी ने पूछा था। हे कल्याणी! ब्रह्मा ने मुझे श्वेत नामक कल्प में श्वेत वर्ण का देखा तथा सद्योजात नामक मेरे अवतार को देखा, रक्त कल्प में मुझे लाल रङ्ग का देखा, ईशान कल्प में विश्वरूपाख्य को देखा। इस प्रकार से मुझ विश्व रूप शिव को देखकर ब्रह्मा जी बोले—

हे वामदेव! हे तत्पुरुष! हे अघोर! हे दयानिधे! देवाधिदेव महादेव जी आप मुझे गायत्री के साथ दीखे हैं और हे प्रभो! आप किस प्रकार वश में हो जाते हो और किस प्रकार आपका ध्यान करना चाहिए अथवा आप कहाँ ध्यान किये जाते हैं, आप कहाँ देखे जाते हैं

तथा कहाँ पूजे जाते हैं, सो आप हमें कृपापूर्वक बताइये। क्योंकि आप बताने में सब प्रकार समर्थ हैं। भगवान बोले—हे कमल से पैदा होने वाले ब्रह्मा जी! मैं तो केवल श्रद्धा से ही वश में होता हूँ। मैं लिङ्ग में हमेशा ध्यान करने योग्य हूँ तथा क्षीर समुद्र में विष्णु के द्वारा देखा गया हूँ और इस पंचरूप के द्वारा पाँच ब्राह्मणों से पूज्य हूँ। मेरे ऐसा कहने पर ब्रह्मा जी बड़े भाव से बोले—हे जगतगुरो! वास्तव में आप मुझे आज भी भक्ति से ही दीखे हो। ऐसा कहकर मेरे लिए अधिक श्रद्धा भाव दिखाया। सो हे पार्वती जी! मैं श्रद्धा से वश में होता हूँ और लिङ्ग में ही पूज्य हूँ। श्रद्धा पूर्वक ब्राह्मणों के द्वारा मेरी पूजा करनी चाहिए। क्योंकि श्रद्धा में ही परम धर्म है, श्रद्धा ही सूक्ष्म ज्ञान, तप, हवन है, श्रद्धा ही मोक्ष स्वर्ग आदि सभी है और श्रद्धा से ही सदा मैं दर्शन देता हूँ।

श्वेत लोहित कल्प में सद्योजात की महिमा का वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! पुराण पुरुषोत्तम महात्मा वामदेव महेश्वर जो सद्योजात जी हैं उन्हें ब्रह्मा जी ने

किस प्रकार देखा ? उन अघोर और ईशान रूप सद्योजात भगवान के महात्म्य को कहने में आप समर्थ हैं सो हमें कृपा पूर्वक उसे कहने की कृपा करिये।

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो! उन्तीसवें कल्प को श्वेत लोहित कल्प कहा है। उस कल्प में ध्यान करते हुए ब्रह्मा के सामने शिखा से युक्त सफेद और लाल रंग का एक कुमार उत्पन्न हुआ। उस शोभा सम्पन्न पुरुष को देख कर ब्रह्मा ने हृदय में ध्यान करके उस महात्मा को ब्रह्म स्वरूप माना और उस झट या शीघ्र पैदा होने वाले (सद्योजात) को परात्पर ब्रह्म जानकर वन्दना की तथा ब्रह्म रूप से ही उसका चिन्तन किया।

उन सद्योजात के पात से ही महान यशस्वी श्वेत रंग के सुनन्द, नन्दन, विश्वनन्द और उपनन्द नाम के शिष्य भी प्रगट हुए, जिनसे वे सदा घिरे रहते हैं। उनके आगे श्वेत वर्ण की आत्मा वाले श्वेत नाम के महामुनि विराजमान रहते हैं। तब वे सभी मुनि लोग महेश्वर सद्योजात को प्राप्त करके उन शाश्वत का बहुत ही भक्ति भाव से गुणगान करने लगे और अन्त में उन्हीं को प्राप्त हुए।

हे ब्राह्मणो! इस प्रकार जो कोई भी उन विश्वेश्वर की मन से तत्पर होकर प्राणायाम पूर्वक ध्यान करके शरण में आते हैं, वे सभी पापों से छूटकर विष्णु लोक

को भी लांघकर रुद्र लोक को प्राप्त करते हैं।

श्री वामदेव जी की महिमा का वर्णन

सूतजी बोले—तीसवाँ कल्प रक्त नाम का कल्प कहा जाता है। इस कल्प में महान तेजस्वी ब्रह्मा लाल रंग को धारण करते हैं। पुत्र की कामना से महान तेजस्वी ब्रह्मा जी ने परमेष्ठी शिव का ध्यान किया। तब एक महान तेजस्वी कुमार प्रगट हुए जो लाल रंग के आभूषण और लाल ही वस्त्र तथा माला पहने हुए थे। उनके लाल नेत्र थे तथा वे बड़े ही प्रतापवान थे। रक्त वस्त्र पहने हुए उन महान आत्मा कुमार को देखकर ध्यान के सहारे से ये देव ईश्वर हैं, ऐसा जान लिया और उनको ब्रह्मा जी ने प्रणाम किया।

उन वामदेव भगवान की ब्रह्मा जी ने ब्रह्म मानकर स्तुति की। हृदय में प्रतीत हुए उन वामदेव ने ब्रह्मा जी से यह कहा कि हे पितामह! आपने मुझे पुत्र की कामना से ध्यान किया है तथा ब्रह्म जानकर बड़ी भक्ति से मेरी स्तुति की है। इससे आप हर एक कल्प में ध्यान योग्य के बल को प्राप्त करके मुझ सभी लोकों के दाता ईश्वर

को जान सकोगे।

इसके बाद उस महान आत्मा के द्वारा विशुद्ध ब्रह्म तेज से युक्त महान चार कुमार प्रकट हुए। उनके नाम विरिजा, विवाहु, विशोक और विश्व भावना हैं। ये चारों बड़े भारी ब्रह्मण्य और ब्रह्म के समान ही वीर और अध्यवसायी हुए, जो रक्त वस्त्र और रक्त माला को धारण करने वाले तथा लाल चन्दन का लेपन करने वाले हैं। लाल कुमकुम तथा लाल भस्म को शरीर में लगाते हैं।

हजारों वर्षों के अन्त में ब्रह्म-वामदेव जी का गुणगान करते हुए, संसार के हित की कामना से, अपने शिष्यों को समस्त धर्म का उपदेश देकर पुनः वे अविनाशी रुद्र, महादेव जी में ही लीन हो जाते हैं।

ये तथा दूसरे श्रेष्ठ द्विजाती लोग उस ईश्वर को जानकर तथा महादेव और उनके भक्तों में परायण होकर ध्यान से उन्हें देखते हैं वे सभी निर्मल और ब्रह्मचारी मनुष्य पापों से छूटकर रुद्र लोक को जाते हैं तथा संसार के आवागमन से भी मुक्त हो जाते हैं।

तत्पुरुष (ब्रह्म) का महात्म्य

सूतजी बोले—इकत्तीसवाँ कल्प पीतकल्प कहा गया है। इस कल्प में ब्रह्मा जी पीले वस्त्र धारण करते हैं। परमेष्ठि ब्रह्मा के द्वारा शिव का ध्यान करते हुए महान तेजस्वी पीले वस्त्र धारण किये हुए एक कुमार का जन्म हुआ। वह कुमार पीले गन्ध का लेपन किए हुए तथा पीले रंग की माला को धारण किए था। सुनहरा जनेऊ तथा पीले रंग की पगड़ी पहने हुए था, उस युवक की बड़ी लम्बी भुजायें थीं। तब ध्यान के द्वारा ब्रह्मा! जी ने उन लोक के विधाता महेश्वर को जान लिया और उनकी शरण को प्राप्त हुए।

इसके अनन्तर ध्यान करते हुए ब्रह्मा जी ने महेश्वर भगवान के मुख से [illegible] वेश्वरूपा एक गौ को देखा। जो [illegible] मुख वाली, चार हाथ वाली, [illegible] वाली, चार सींग वाली, चार [illegible] बत्तीस गुणों से युक्त थी। उस [illegible] महादेवी स्वरूपा गाय को देख [illegible] आदि नाम ले लेकर महादेव जी उस [illegible] देवि! इस समस्त विश्व को अपने मे [illegible] ग के द्वारा सम्पूर्ण संसार को वश में करो। इसके बाद महादेव जी ने कहा—हे देवि! तुम

रुद्राणी होओगी और ब्राह्मणों के हित के लिये परमार्थ स्वरूपिणी होओगी।

इस चार पैर वाली गाय की पुत्र की इच्छा से ध्यान करने वाले परमेष्ठि ब्रह्मा ने परिक्रमा की और ध्यान के द्वारा उसे परमेश्वरी जानकर संसार के गुरु महेश्वर ने यह बताया कि यह गायत्री तथा रुद्राणी है।

उस वैदिकी, विद्या, रुद्राणी, गायत्री तथा लोकों के द्वारा नमस्कार की हुई को जपकर ध्यान योग के द्वारा ब्रह्मा ने महादेव जी को प्रसन्न किया। तब महादेव जी ने उन्हें दिव्य योग, ऐश्वर्य, ज्ञान, सम्पत्ति और वैराग्य दिया।

उसी समय उनके पास से (शरीर में से ही) पीले वस्त्र पहने हुए, पीली माला धारण किये हुए तथा पीले चन्दन का लेप लगाये हुए दिव्य अनेकों कुमारों का प्रादुर्भाव हुआ। उनके पीले ही सिर के वस्त्र पगड़ी आदि थे तथा पीले ही रंग के वे सभी कुमार थे, उन्होंने हजारों वर्षों तक निर्मल यश को प्राप्त करके अपने को योग में लगाकर तपस्या का आनन्द प्राप्त किया। ब्राह्मणों का कल्याण करते हुए धर्म, योग और बल से युक्त, बहुत समय तक मुनियों की रक्षा करके, महान योग का उपदेश देकर वे महादेव जी में ही लीन हो गये। इस प्रकार वे सभी कुमार महेश्वर भगवान को प्राप्त हुए।

अन्य भी जो ध्यान योग के द्वारा अपने को नियमित करके तथा इन्द्रियों को जीतकर महादेव को प्रसन्न करते हैं वे सभी ब्रह्मचर्य पूर्वक निर्मल होकर और सभी पापों से छूटकर रुद्र जो महादेव जी हैं उनमें प्रवेश करते हैं और फिर न होने वाले मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

अघोर की उत्पत्ति का विवरण

सूतजी बोले—उस पीतवर्ण कल्प के बीत जाने पर प्रघृत्त नाम का काले वर्ण वाला कल्प हुआ। उसमें देवताओं के हजार वर्ष के समय में जब समस्त ब्रह्माण्ड एक समुद्र से ही व्याप्त था और चारों ओर जल ही जल था, तब ब्रह्मा ने प्रजा रचने की इच्छा व्यक्त की। तब दुखी होकर ब्रह्मा ने पुत्र की कामना से चिन्ता करते हुए कृष्ण वर्ण वाले भगवान का ध्यान किया।

इसके बाद एक महान तेजस्वी कुमार प्रकट हुआ जो काले रंग का, महावीर और अपने तेज से प्रकाशित था। वह काले वस्त्र पहने हुए काला सिर पर उष्णीश और काला जनेऊ धारण किये था। काली मालायें तथा मुकुट और काले रंग का लेप अपने अंगों पर लगाये हुए

था।

तब उस घोर पराक्रम वाले महात्मा अघोर रूप कुमार को देव देवेश जानकर ब्रह्मा जी ने उनकी वन्दना की। प्राणायाम में तत्पर होकर महेश्वर का हृदय में ध्यान करने पर भगवान महेश्वर प्रसन्न हुए और उन ब्रह्म स्वरूप अघोर जो घोर पराक्रम वाले हैं, ब्रह्मा के ध्यान करने पर दर्शन दिये और उनके पास से काले वर्ण वाले काले, चन्दन से लेप किये हुए चार महान तेजस्वी कुमारों का प्रादुर्भाव हुआ। वे सभी कृष्ण वर्ण के काली शिखा से युक्त और काले वस्त्र धारण किये हुए थे।

इसके बाद हजारों वर्ष तक योग में तत्पर हुये उपासना की। योग में तत्पर हुये वे सभी मन के द्वारा योगेश्वर शिव में प्रवेश करके ईश्वर के निर्मल निर्गुण स्थान को प्राप्त हुए।

इस प्रकार योग के द्वारा वे तथा दूसरे मनीषी लोग महादेव का ध्यान करके अविनाशी रुद्र भगवान को प्राप्त करते हैं।

अघोरेश के महात्म्य का वर्णन

सूतजी बोले—इसके बाद कृष्ण वर्ण कल्प के बीत

जाने पर देवाधिदेव ब्रह्म स्वरूप अघोरेश को ब्रह्मा जी ने प्रसन्न किया, तब वे सन्तुष्ट हुए। भगवान ब्रह्मा जी से अनुग्रह पूर्वक बोले—हे महाभाग! मैं इसी रूप से ब्रह्महत्या आदि घोर पापों को नष्ट कर देता हूँ। हे पितामह ब्रह्मा जी! मन, वाणी और कर्म के द्वारा बुद्धि पूर्वक किये तथा स्वाभाविक रूप से होने वाले, माता के शरीर से उत्पन्न तथा पिता की देह से उत्पन्न सभी पापों को संहार कर देता हूँ, इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

अघोर नाम के मन्त्र को एक लाख जप कर मनुष्य ब्रह्महत्या से छूट जाते हैं। उससे आधा फल वाणी के द्वारा तथा उससे आधा फल मन के द्वारा जपने से मिलता है। चार गुना बुद्धि पूर्वक पापी के जपने से तथा क्रोधी के द्वारा आठ गुना जपने से, लाख गुना जपने से वीर हत्यारा, करोड़ गुना जपने से भ्रूण हत्यारा, दस करोड़ गुना जपने से माता का वध करने वाला शुद्ध हो जाता है, इसमें संशय नहीं है।

गौ हत्यारा, दूसरे का अहसान न मानने वाला, स्त्री का वध करने वाला, दस करोड़ मन्त्र का नाम जप करने वाला पाप से मुक्त हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं है। सुरापान करने वाले को एक लाख जप द्वारा तथा बुद्धि पूर्वक पाप करने वाले भी इसके जप से छूट जाते हैं। निश्चय ही और आधा लाख जप करने से वारुणी

का पान करने वाला पापी भी पाप मुक्त हो जाता है।

स्नान, जप, हवन आदि न करने वाला ब्राह्मण एक हजार जप करने से शुद्ध हो जाता है। ब्राह्मण की चोरी करने वाला तथा सोना चुराने वाला अधम मनुष्य भी दस लाख मानसी जप द्वारा पापों से छूट जाता है। गुरु पत्नी में रत तथा माता का वध करने वाला नीच जन भी तथा ब्रह्म हत्यारा भी इस अघोर मन से जपने से पाप से मुक्त होता है। पापियों के साथ रहने वाले भी पापी के ही समान हैं। अतः वे भी दस करोड़ जप करने से पाप से मुक्त होते हैं। पापियों के साथ सम्पर्क करने वाले पापी भी एक लाख मानसी जप द्वारा शुद्ध हो जाते हैं। उपांशु जप चौगुना और वाणी के द्वारा बोलकर जप आठ गुना करना चाहिए। छोटे पापों के लिए इनसे आधा जप करना चाहिए।

ब्रह्महत्या, मदिरा पान, सोने की चोरी करने का और गुरु की शय्या पर शयन करने का जो पाप ब्राह्मण करे तो उसे रुद्र गायत्री और कपिला गौ के मूत्र द्वारा ही ग्रहण करना चाहिये। वह पापी ब्राह्मण ''गन्ध द्वारा'' आदि मन्त्र द्वारा गोबर को खावे तथा ''तेजोऽसि शुक्रामित्य'' मन्त्र से कपिला गाय का मूत्र पान। ''अप्याय स्वा'' आदि मन्त्र से साक्षात कपिला गौ के गव्य, दही, दूध का पंचामृत बनाकर पान करे। ''देवस्य इति'' मन्त्र

से कुशा द्वारा जल को अपने शरीर पर छिड़के। पंच गव्य आदि को सोने के अथवा ताँबे के अथवा कमल के या पलाश (ढाक) के पत्ते के दोने में रख ले और सभी रत्नों की अथवा सोने की शलाका द्वारा उसे चलावे।

अघोरेश मन्त्र का एक लाख जप करे तथा घी, चरु, तिल, जौ, चावल आदि से हर एक का अलग सात बार हवन करे। यदि अन्य सामग्री न हो तो घी से ही हवन करना चाहिए।

हे ब्राह्मणो! अघोर के द्वारा भगवान को निमित्त करके हवन करने के बाद अघोर मन्त्र से ही स्नान करना चाहिये। आठ द्रोण घी से स्नान करने पर शुद्ध होता है। रात दिन में स्नान आदि करने के बाद उस पंचामृत को कुची से चला कर शिवजी के सामने ही पीवे। ब्राह्मण जप आदि करके तथा आचमन करके पवित्र होवे। इस प्रकार करने से कृतघ्न, ब्रह्म हत्यारा तथा भ्रूण हत्यारा (गर्भपात करने वाला), वीर घाती, गुरु घाती, मित्र के साथ विश्वासघात करने वाला, चोर, सोने की चोरी करने वाला, गुरु की शय्या पर सोने वाला, शराब पीने वाला, दूसरे की स्त्री में रत रहने वाला, ब्राह्मण का हत्यारा, गौ का हत्यारा, माता पिता का हत्यारा, देवताओं की निन्दा करने वाला, शिवलिंग को तोड़ने वाला तथा अन्य प्रकार से मानसिक पाप आदि करने वाला भी

चाहे वह ब्राह्मण ही हो, पापों से मुक्त हो जाता है। अन्य भी वाणी या शरीर द्वारा हजारों पापों से इस विधान को करके मुक्त हो जाता है। इससे जन्म जन्मान्तरों के भी सभी पाप शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। यह अघोरेश का रहस्य मैंने आप लोगों के प्रसंग से सुना दिया। इसको नित्य द्विजाती मात्र जपने से सभी पापों से छूट जाते हैं।

ईशान की महिमा का कथन

सूतजी बोले—हे मुनियों में उत्तम ब्राह्मणो! एक अन्य ब्रह्मा का कल्प हुआ जो विश्वरूप नाम का था। वह बड़ा भारी विचित्र था। संहार का कार्य समाप्त हो जाने पर तथा पुनः सृष्टि रचना प्रारम्भ हो जाने पर ब्रह्मा जी ने पुत्र की कामना से भगवान का ध्यान किया। तब विश्वरूप सरस्वती जी प्रकट हुईं वह विश्वमाला तथा वस्त्र धारण किये हुए तथा विश्व यज्ञोपवीत, विश्व का ही सिर पर उष्णीष (सिर का वस्त्र) धारण किये थीं। वह विश्व गन्ध से युक्त विश्व मातामह हैं।

इसके बाद पितामह ब्रह्मा जी ने मन से आत्मयुक्त होकर भगवान ईशान जो परमेश्वर हैं उनका यथाविधि

ध्यान किया। उनका स्वरूप शुद्ध स्फटिक मणि के समान सफेद तथा सभी प्रकार के आभूषणों से भूषित हैं। उन सर्वेश्वर प्रभु की ब्रह्मा जी ने इस प्रकार वन्दना की।

हे ईशान! महादेव! ओ३म्! आपको नमस्कार है। हे सभी विद्याओं के स्वामी आपको नमस्कार है। हे सभी प्राणियों के ईश्वर वृष वाहन आपको नमस्कार है। हे ब्रह्मा के अधिपति! हे ब्रह्म स्वरूप! हे शिव! हे सदाशिव! आपको नमस्कार है। हे ओंकार मूर्ते! हे देवेश! हे सद्योजात! आपको बारम्बार नमस्कार है। मैं आपकी शरण में आया हूँ, आप मेरी रक्षा करो। आप होने वाले हैं तथा नहीं होने वाले हैं तथा अधिक होने वाले भी नहीं हैं। हे संसार को उत्पन्न करने वाले! हे भाव! हे ईशान! हे महान शोभा वाले! हे वामदेव! हे ज्येष्ठ! हे वरदान देने वाले! हे रुद्र! हे काल के भी काल! आपको नमस्कार है। हे विकरणाय! हे काल वर्णाय! हे बल को मंथन करने वाले! ब्रह्म स्वरूप, सभी भूतों के स्वामी तथा भूतों का दमन करने वाले! हे कामदेव का मंथन करने वाले देव! आपको नमस्कार है। हे सबसे बड़े तथा सब में श्रेष्ठ वर देने वाले रुद्र स्वरूप काल का नाश करने वाले वामदेव महेश्वर भगवान आपको बारम्बार नमस्कार है। इस प्रकार इस स्तोत्र से जो वृषभध्वज भगवान की

स्तुति करता है तथा पढ़ता है वह शीघ्र ही ब्रह्म लोक को प्राप्त करता है। जो श्रद्धा पूर्वक ब्राह्मणों से इसको सुनता है तथा सुनाता है, वह परम गति को प्राप्त करता है। इस प्रकार इस स्तोत्र के द्वारा ध्यान करके ब्रह्मा जी ने वहाँ भगवान को प्रणाम किया।

तब भगवान ईश्वर (रुद्र) ने कहा—कि हे ब्रह्मा जी! कहिये आप क्या चाहते हैं ? मैं आप पर प्रसन्न हूँ। तब भगवान रुद्र को प्रणाम करके ब्रह्मा जी ने कहा—हे भगवान! यह विश्वरूप जो गौ अथवा सरस्वती हैं वह कौन है यह जाने की इच्छा है। यह भगवती, चार पैर वाली, चार मुख वाली, चार दाँत वाली, चार स्तन वाली, चार हाथ वाली, चार नेत्र वाली, यह विश्वरूपा कौन है ? यह किस नाम की है तथा किस गोत्र की है ? उनके इस वचन को सुनकर देवोत्तम वृषभध्वज अपने शरीर से उत्पन्न हुए ब्रह्मा से बोले—हे ब्रह्मन्! यह जो कल्प है उसको विश्वरूप कल्प कहते हैं। यह सभी मन्त्रों का रहस्य है तथा पुष्टि वर्धक है। यह परम गोपनीय है। आदि सर्ग में जैसा था वह तुमसे कहता हूँ। यह ब्रह्मा का स्थान जो तुमने प्राप्त कर लिया है उससे परे विष्णु के पद से भी शुभ तथा बैकुण्ठ से भी शुद्ध, मेरे वामाङ्ग से उत्पन्न यह तेतीसवाँ कल्प है। हे महामते! यह कल्प आनन्द ही जानना चाहिए तथा आनन्द में ही स्थित है। इस कल्प

का माण्डव्य गोत्र है। तपस्या के द्वारा मेरे पुत्र अपने को प्राप्त हुआ है। हे ब्रह्मा जी! मेरी कृपा से आप में, योग, साँख्य, तप, विद्या, विधि क्रिया, ऋतु, सत्य, दया, ब्रह्म, अहिंसा, सम्मति, क्षमा, ध्यान, ध्येय, दम, शान्ति, विद्या, मति, घृति, कान्ति, नीति, पृथ्वी, मेधा, लज्जा, दृष्टि, सरस्वती, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया इत्यादि बत्तीस गुण प्रतिष्ठित हैं तथा ये बत्तीस गुण बत्तीस अक्षर की संज्ञा वाले हैं।

यह मेरे द्वारा उत्पन्न भगवती देवी है जो चतुर्मुखी है, जगत की योनी है, प्रकृति है तथा गौ रूप है। वह गौरी माया है, विद्या है, हेमवती है, प्रधान प्रकृति है, तत्व चिन्तक लोग ऐसा कहते हैं। वह अजन्मा है, लोहित है, शुक्ल कृष्ण है, विश्व की जननी है। हे ब्रह्मा जी! अज तो मैं ही हूँ और उस विश्व रूपा गायत्री गौ स्वरूपा को विश्व स्वरूप ही जानना चाहिए।

इस प्रकार कहकर महादेव जी ने उस देवी के पार्श्व द्वारा सर्व रूप कुमारों को पैदा किया। जटी, मुण्डी, शिखण्डी तथा अर्ध मुण्ड नाम के कुमार उत्पन्न किये। वे सभी महान तेजस्वी थे तथा वे सभी हजारों दिव्य वर्षों तक महेश्वर की उपासना करके, समस्त धर्मों का उपदेश करके योग के पथ में दृढ़ हुये। इसके बाद वे सभी शिष्ट पुरुष अपनी आत्मा को वश में करने वाले कुमार

रुद्र भगवान में ही प्रवेश कर गये अर्थात् उन्हीं के स्वरूप में लीन हो गये।

लिंग के उत्पन्न होने का वर्णन

सूतजी बोले—हे ऋषियो! मैंने आप लोगों को यह कथा सुनाई। जिसके सुनने, पढ़ने तथा ब्राह्मणों को सुनाने से भगवान की कृपा से मनुष्य मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं।

ऋषि बोले—हे सूतजी! भगवान तो अलिंगी हैं फिर उनके लिंग किस प्रकार हैं तथा उन शंकर भगवान के लिंग की अर्चना कैसे की जाती है? लिंग क्या है तथा लिंगी क्या है? यह सब आप बताने में समर्थ हैं। कृपा करके हमें बताइये।

रोम हर्षण जी बोले—हे ऋषियो! इस प्रकार एक बार देवताओं ने पितामह ब्रह्मा जी से पूछा था कि भगवान का लिंग किस प्रकार का है तथा लिंग में महेश्वर रुद्र की किस प्रकार पूजा अर्चना की जाती है? तब ब्रह्मा जी ने जो कहा था, वह मैं आपसे कहता हूँ।

ब्रह्मा जी बोले—प्रधान (प्रकृति) को तो लिंग कहा

गया है और लिंगी तो स्वयं परमेश्वर ही हैं। हे श्रेष्ठ देवताओ! सृष्टि के स्थिति काल में सभी देवताओं के जन लोक में चले जाने पर जल में मेरी रक्षा के लिये भगवान विष्णु थे। चारों युगों में हजारों बार बीत जाने पर तथा देवताओं के सत्य लोक में चले जाने पर, मुझ ब्रह्मा के बिना अधिपति पद पर रहने पर, बिना वर्षा के सभी स्थावर (वृक्षादि) के सूख जाने पर, पशु, मनुष्य, वृक्ष, पिशाच, राक्षस, गन्धर्व आदि सूर्य की किरणों से क्रमशः जल गये थे।

तब उस महान् घोर अन्धकारमय समुद्र में वह विश्वात्मा महान् योगी परब्रह्म जिसके हजारों सिर हैं तथा हजारों नेत्र हैं, हजारों पैर हैं, हजारों बाहु हैं तथा जो सर्वज्ञ हैं और सम्पूर्ण संसार को उत्पन्न करने वाले हैं तथा जिनके रजोगुण से ब्रह्मा, तमोगुण से शंकर एवं सतोगुण से विष्णु की उत्पत्ति है। ऐसे काल के भी काल निर्गुण नारायण स्वरूप को मैंने देखा। उन कमलनयन भगवान को उस घोर समुद्र के जल में शयन करते देख कर उनकी माया से मोहित होकर मैं बैर के स्वभाव में उनसे बोला—आप कौन हैं ? यह मुझे बताइये। ऐसा कह कर मैंने उन शयन करते हुए हरि को हाथ से उठाया। मेरे हाथ के तीव्र और दृढ़ प्रहार के कारण वह शीघ्र शयन से उठ बैठे। वह निर्मल कमल के से नेत्र वाले हरि

भगवान मेरे सामने निद्रा त्याग कर स्थित हुए और मीठी प्यारी वाणी में मुझसे कहने लगे।

हे महान शोभा वाले पितामह! हे वत्स! आपका स्वागत है, स्वागत है। उनके इस प्रकार के वचन सुनकर मुझे बहुत ही आश्चर्य हुआ। रजोगुण के कारण बढ़ गया है वैर जिसमें ऐसा मैं उन जनार्दन भगवान से बोला—आप सृष्टि के संहार के कारण होकर मुझे वत्स! वत्स! कहकर पुकारते हो। हे अनघ! मेरे साथ आप गुरु शिष्य के समान बर्ताव करते हो। मोह में पड़कर इस प्रकार आप क्यों कह रहे हो? इसके बाद भगवान शंकर विष्णु मुझ अहंकार से युक्त को देखकर बोले—हे पितामह! मैं ही परब्रह्म हूँ, मैं ही परमतत्व हूँ, संसार का कर्त्ता हूँ, चलाने वाला हूँ तथा मैं ही इस संसार का नाश करने वाला हूँ। मैं स्वयं ही परम ज्योति स्वरूप हूँ, परमात्मा हूँ, ईश्वर हूँ। संसार में चर अचर जो भी दीख रहा है अथवा सुनाई दे रहा है, उस सबको सब कुछ मेरे ही निहित जानना चाहिए। यह संसार पूर्व में मेरे द्वारा ही चौबीस तत्वों से मिलकर बनाया गया है। अपने प्रसाद (कृपा) से अनेकों ब्रह्माण्डों को लीला मात्र में बना देता हूँ। मेरी बुद्धि के द्वारा पहले सत, रज, तम, तीन प्रकार का अहंकार उत्पन्न हुआ इसके बाद पाँच प्रकार की तन्मात्रा (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश) छटा

मन इसके बाद दस इन्द्रियाँ उत्पन्न हुए। आकाश से लेकर पृथ्वी तक सभी की रचना लीला मात्र ही हुई हैं।

हे देवताओ! भगवान हरि के ऐसा कहने पर हम दोनों का घोर युद्ध हुआ। उस युद्ध को देखकर रोंगटे खड़े हो जाते थे। वह युद्ध उसी प्रलय के सागर के मध्य मेरे द्वारा रजोगुण की वृद्धि होने पर बैर बढ़ जाने के कारण हुआ।

उसी अवसर पर हम दोनों के बीच में अत्यन्त प्रकाशमान एक लिंग हमारे प्रबोध करने के लिए प्रकट हो गया। वह लिंग अनेकों प्रकार की ज्वाला से घिरा हुआ सैकड़ों कालाग्नि से भी महान तेजस्वी, घटने और बढ़ने से रहित, आदि, मध्य, अन्त से भी रहित अव्यक्त विश्व की उत्पत्ति का कारण था। उसे देखकर भगवान हरि तथा मैं भी स्वयं मोहित हो गये। उस लिंग को देखकर भगवान हरि मुझसे कहने लगे कि इस अग्नि को उत्पन्न करने वाले तेजस्वी लिंग की परीक्षा करनी चाहिये। मैं इसके नीचे की तरफ इसके मूल को देखूंगा तथा आप ऊपर की ओर शीघ्र प्रयत्न पूर्वक जाइये। हे देवताओ! तब उसी समय भगवान विष्णु ने वाराह का स्वरूप धारण किया और मैंने शीघ्र ही हंस का स्वरूप बनाया। तभी से लेकर मुझे मनुष्य हंस भगवान कहने लगे। सफेद पंख, सफेद वर्ण का मैं सुन्दर हंस बन गया।

मन और हवा के वेग के समान मैं ऊपर को उड़ा। नारायण भगवान ने भी दस योजन लम्बे चौड़े सौ योजन के आयत वाले मेरु पर्वत के समान आकार धारण करके वाराह रूप बनाया। उनके सफेद पैने-पैने दाँत थे। काल के समान महान तेजस्वी चमकते हुए सूर्य के समान काले वाराह का रूप धारण करके पृथ्वी में नीचे की ओर चले गये। इस प्रकार भगवान विष्णु एक हजार वर्ष तक बड़ी शीघ्रता से नीचे ही चलते चले गए। परन्तु उन सूकर रूपधारी नारायण ने लिंग के मूल का कुछ भी पता नहीं पाया। उसी प्रकार उतने ही समय तक मैं भी ऊपर को गया। परन्तु अहंकार के कारण थककर मैं नीचे आकर गिर पड़ा। उसी तरह विष्णु भगवान भी क्लान्त होकर ऊपर आकर चुपचाप पड़ गये। उनका चित्त बड़ा खिन्न था तथा नेत्र थक गये थे।

उसी समय उस लिंगमें से बड़े जोर का शब्द हुआ। उसमें से "ॐ" ऐसी ध्वनि प्लुत लक्षण से निकली।

उस महान घोर नाद को सुनकर "यह क्या" ऐसा हमने कहा। तभी उस लिंग के दाहिने भाग में सनातन भगवान को भी देखा। उस 'ॐ' सनातन भगवान के आदि में अकार इसके बाद उकार तथा उससे परे में मकार है, मध्य में नाद है। इस प्रकार 'ॐ' ऐसा स्वरूप है। आदि वर्ण सूर्य मण्डलवत् देखे तथा उत्तर में उकार

है जो पावक नाम से प्रसिद्ध है। मकार चन्द्रमण्डल की संज्ञा वाला है जो मध्य में है उसके ऊपर शुद्ध स्फटिक वर्ण स्वरूप प्रभु विराजमान हैं। वह प्रभु तुरीया अवस्था से भी परे हैं। द्वन्द्व रहित हैं, शून्य हैं, भीतर बाहर से परम पवित्र हैं। आदि अन्त और मध्य से रहित हैं, आनन्द के भी मूल कारण हैं। ऋगु, यजु, सामवेद के तथा मात्राओं के द्वारा उन्हें ब्रह्म कहा जाता है, वे माधव हैं। वेद शब्द से उन विश्वात्मा का तत्व चिन्तन किया जाता है। इसलिये ऋषियों के परम सार कारण वेद को भी ऋषिर्वेद कहते हैं। इसी से परमेश्वर ऋषियों के द्वारा जाना जाता है।

देवता बोले—वह रुद्र भगवान वाणी और चिन्ता से रहित हैं। उन एकाक्षर ब्रह्म को वाणी भी प्राप्त न करके लौट आती है। उन एकाक्षर ब्रह्म को ही अमृत तथा परम कारण सत्य आनन्द, परब्रह्म परमात्मा जानना चाहिए। उन एकाक्षर से जो अकार स्वरूप हैं वह ब्रह्मा के स्वरूप हैं। एकाक्षर से उकार स्वरूप परम कारण भगवान हरि हैं तथा एकाक्षर से मकार नाम वाले नीललोहित शंकर जी हैं। सृष्टि के कर्त्ता जो अकार नाम वाले हैं, उकार उसमें मोहने वाले हैं तथा मकार नाम वाले नित्य ही कृपा करने वाले हैं। मकार नाम वाले बीजी हैं तथा अकार वाले बीज हैं। उकार वाले जो हरि हैं वह उत्पत्ति स्थान हैं, प्रधान हैं, पुरुषेश्वर हैं। बीजी

बीज तथा योनी तीनों ही नाम वाले भगवान महेश्वर हैं। इस लिंग में अकार तो बीज है प्रभु ही बीजी हैं तथा उकार योनि है।

अन्तरिक्ष आदि एक सोने के पिंड में लिपटा हुआ एक अण्ड था। अनेकों वर्षों तक वह दिव्य अण्ड भली भांति रखा रहा। हजारों वर्षों के बाद उस अण्ड के दो भाग हो गये। उस सुवर्ण के अण्ड का ऊपर का कपाल जैसा भाग आकाश कहलाया तथा नीचे का कपाल जैसा भाग रूप, रस, गन्ध आदि पाँच लक्षणों सहित पृथ्वी जाननी चाहिये। उस अण्ड से अकार नाम वाले चुतुर्मुख ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए हैं, जो सम्पूर्ण लोकों के रचने वाले हैं।

इस प्रकार वेदों के जानने वाले ऋषि लोग उस ॐ का वर्णन करते हैं। इस प्रकार यजुर्वेद के जानकारों के वचनों को सुनकर ऋग् और सामवेद के ज्ञाता भी आदर सहित यही कहते हैं कि वह ऐसा ही है। अकार उस ब्रह्म का मूर्धा अर्थात् दीर्घ ललाट है। इकार दायाँ नेत्र है ईकार वाम नेत्र है, उकार दक्षिण कान है, ऊकार बायाँ कान है, ऋकार उस ब्रह्म का दायाँ कपोल है, ॠकार उसका बायाँ कपोल है तथा ऌ ॡ उसके दोनों नाक के छेद हैं। एकार उसका होंठ है, ऐकार उसका अधर है। ओ और औ क्रमशः उसकी दोनों दन्त पंक्ति हैं। अं उसका

तालु स्थान है। क आदि (क ख ग घ ङ) उसके दायें तरफ से पाँच हाथ हैं। च आदि (च छ ज झ ञ) उसके बायें ओर के पाँच हाथ हैं। ट आदि (ट ठ ड ढ ण) तथा त आदि (त थ द ध न) उसके दोनों तरफ के पैर हैं। पकार उसका उदर, फकार दायीं ओर की बगल हैं। व कार बायीं ओर की बगल है। व, भ, कार दोनों कन्धे हैं, म कार उस महादेव जी का हृदय है। य कार से स कार तक उसकी सात धातु हैं। ह कार आत्म रूप है, क्ष कार उसका क्रोध है।

इस प्रकार के स्वरूप वाले उन महादेव जी को उमा के साथ देखकर भगवान विष्णु ने उन्हें प्रणाम किया और उन भगवान शंकर को जो ॐकार मन्त्र से युक्त हैं, शुद्ध स्फटिक माला से युक्त या स्फटिक माला के समान सफेद हैं बुद्धि करने वाले हैं, सर्व धर्मों के साधन करने वाले हैं, गायत्री मन्त्र के प्रभु हैं तथा सबको वश में करने वाले हैं, चौबीस वर्णों से युक्त हैं, अथर्व वेद के मन्त्रों के स्वरूप हैं, कला काष्ठ से युक्त हैं, ३ ३ अक्षरों से शुभ स्वरूप हैं, श्वेत हैं, शान्ति कारण हैं, तेरह कला से युक्त हैं, संसार के आदि, अन्त और वृद्धि के कारक हैं, इस प्रकार के शिव को देखकर भगवान विष्णु ने पंचाक्षर मन्त्र (नमः शिवाय) से जप किया।

इसके बाद उन काल, वर्ण, ऋग, यजु, सामवेद के

जो स्वरूप हैं, ऐसे पुरुष पुरातन, ईशान, मुकुट, जिनका अघोर मन्त्र ही हृदय है, सर्प राज भूषण सदाशिव को, जो ब्रह्मादि की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के कारण हैं, उन वाणी और वरदान को देने वाले ईश्वर महादेव जी को देखकर प्रसन्न करने के लिये विष्णु भगवान स्तुति करने लगे।

विष्णु के द्वारा शिव की स्तुति

विष्णु भगवान कहने लगे—हे एकाक्षर रूप! हे रुद्र! हे अकार स्वरूप! हे आदि देव! हे विद्या के स्थान! आपको नमस्कार है। हे मकार स्वरूप! हे शिव स्वरूप! हे परमात्मा! सूर्य, अग्नि और चन्द्रमा के वर्ण वाले! हे यजमान स्वरूप! आपको नमस्कार है। आप अग्नि स्वरूप हो, रुद्र रूप हो। हे रुद्रों के स्वामी! आपको नमस्कार है। आप शिव हैं, शिव मन्त्र हैं, वामदेव हैं, वाम हैं, अमृत्व के वरदायक हैं, अघोर हैं, अत्यन्त घोर हैं, ईशान हैं, श्मशान हैं, अत्यन्त वेगशाली हैं, श्रुतियाँ जिनकी पाद है, ऊर्ध्वलिंग हैं, हेमलिंग हैं, स्वर्ण स्वरूप ही हैं, शिवलिंग हैं, शिव हैं, आकाश व्यापी हैं, वायु के समान वेग वाले हैं, वायु के समान व्यास हैं, ऐसे तेजस्वी संसार

के भरण करने वाले आपको नमस्कार है।

आप जल स्वरूप हैं, जल भूत हैं, जल के समान व्यापक हैं, आप पृथ्वी और अन्तरिक्ष हैं, ऐसे आपको नमस्कार है। आप एक स्पर्श रूप रस गन्ध रूप हैं, आप गुह्य से भी गुह्यतम हैं, हे गणाधिपतये! आपको नमस्कार है। आप अनन्त हैं, विश्व रूप हैं वरिष्ठ हैं, आपके गर्भ में जल है, आप योगी हो, आप बिना रूप के हैं तथा कामदेव के रूप को भी हरण करने वाले हैं, भस्म से शरीर लिपटा हुआ है, सूर्य, अग्नि तथा चन्द्रमा के कारण रूप हो, श्वेत वर्ण के हैं, बर्फ से भी अधिक श्वेत हैं। सुन्दर मुख है, श्वेत शिखा है, हे श्वेत लोहित! आपको नमस्कार है। हे ऋद्धि, शोक और विशोक रूप! हे पिनाकी! हे कपर्दो! हे विपाश! हे पाप नाशन! हे सुहोत्र! हे हविष्य! हे सुब्रह्मण्य! हे सूर! हे दुर्दमन! हे कंकाय! हे कंकरूप! हे सनक सनातन! हे सनन्दन! हे सनत्कुमार! हे संसार की आँख! हे शंख पाल! हे शंख! हे रज! हे तम! हे सारस्वत! हे मेघ! हे मेघ वाहन! आपको नमस्कार है। हे मोक्ष! हे मोक्ष स्वरूप! हे मोक्ष करने वाले! हे आत्मन! हे ऋषि! हे विष्णु के स्वामी! आपको नमस्कार है। हे भगवान! आपको नमस्कार है। हे नागों के स्वामी! आपको नमस्कार है। हे ओंकार रूप! हे सर्वज्ञ! हे सर्व! हे नारायण! हे हिरण्यगर्भ! हे आदि देव! हे महादेव! हे

ईशान! हे ईश्वर! आपको नमस्कार है। हे शर्व! हे सत्य! हे सर्वज्ञ! हे ज्ञान! हे ज्ञान के जानने के योग्य! हे शेखर! हे नीलकण्ठ! हे अर्धनारीश्वर! हे अव्यक्त! आपको नमस्कार है। हे स्थाणु! हे सोम! हे सूर्य! हे भव! हे यश करने वाले! हे देव! हे शंकर! हे अम्बिका पति! हे उमापति! हे नीलकेश! हे वित्त! हे सर्पों के शरीर में आभूषण पहनने वाले! नन्दी बैल पर सवारी करने वाले! सभी के कर्त्ता! भर्त्ता आदि, रामजी के नाथ! हे राजाधिराज! पालन करने वालों के स्वामी! केयूर के आभूषण पहनने वाले! श्रीकण्ठ (विष्णु) के भी नाथ! त्रिशूल हाथ में धारण करने वाले! भुवनों के ईश्वर! हे देव! आपको नमस्कार है। हे सारंग, हे राजहंस! हे सर्पों के हार वाले! हे यज्ञोपवीत वाले! सर्प की कुण्डली की माला वाले! कमर में सर्पों का सूत्र धारण करने वाले! हे वेद गर्भाय! हे संसार को अपने पेट (गर्भ) में रखने वाले! हे संसार के गर्भ! हे शिव! आपको बारम्बार नमस्कार है।

ब्रह्मा जी बोले—हे देवताओ! इस प्रकार मुझ ब्रह्मा के साथ भगवान विष्णु महादेव जी की स्तुति करके रुक गए। इस पुण्य, सब पापों को नाश करने वाले स्तोत्र के द्वारा जो स्तुति करता है, पढ़ता है अथवा ब्राह्मण या वेद पारंगत विद्वानों के द्वारा श्रवण करता है, वह

चाहे पापी ही क्यों न हो परन्तु ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है। इसलिए सभी पापों से शुद्ध होने के लिए विष्णु भगवान के द्वारा कहे गए इस स्तोत्र को नित्य ही जपना चाहिए अथवा श्रेष्ठ ब्राह्मणों के द्वारा इसे श्रवण करना चाहिए।

विष्णु प्रबोध

सूतजी बोले—इस प्रकार ब्रह्मा तथा विष्णु के द्वारा स्तुति किए जाने पर प्रसन्न होकर महादेव जी उन दोनों से बोले—हे श्रेष्ठ देवों! सभी भय से छुड़ाने वाले मुझ महादेव को देखो। मैं तुम दोनों पर प्रसन्न हूँ। तुम दोनों पूर्वकाल में मेरे शरीर से ही उत्पन्न हुए हो। ये जो लोकों के पितामह ब्रह्मा जी हैं, वे मेरे दाहिने भाग हैं तथा हृदय से उत्पन्न विश्वात्मा विष्णु मेरे बायें भाग हैं। मैं तुम पर प्रसन्न हूँ जो इच्छा हो आप वरदान माँगिये। इस प्रकार उनके कहने पर विष्णु भगवान ने उन कृपा के सागर लिंग में स्थित तथा लिंग से जो रहित हैं उन नारायण रूप महेश्वर को हाथ से स्पर्श किया और बोले—हे प्रभो! यदि आप हम पर प्रसन्न हैं तो कृपया आप हमें अपनी अव्यभिचारिणी भक्ति प्रदान कीजिये तथा हे देव! हम

दोनों में जो विवाद पैदा हो गया है, कृपया आप यहाँ उपस्थित हैं, हे नाथ! आप ही इस विवाद का शमन कीजिये।

उनके वचनों को सुनकर भगवान शिव विष्णु से कहने लगे—हे वत्स! हे विष्णु! हे हरे! तुम इस सृष्टि के स्थिति, प्रलय और नाश करने वाले हो, परन्तु तुम इस चराचर जगत का पालन कीजिए। हे विष्णु! मैं तो तुम ब्रह्मा, विष्णु, शिव नाम वाले देवों से सर्वथा भिन्न हूँ। सर्ग, स्थिति और प्रलय से परे हूँ। मैं तो परमेश्वर हूँ। हे विष्णु! हे पितामह! आगे जब पद्म नाम का कल्प होगा, तब तुम भी पद्म से उत्पन्न होकर मुझ महेश्वर को देखोगे। ऐसा कहकर भगवान स्वयं परमेश्वर वहाँ ही अन्तरध्यान हो गए। तब से लेकर इस संसार में लिंग पूजा की प्रतिष्ठा हुई। हे ऋषियो! लिंगवेदी जो महादेवी हैं तथा जो लिंग हैं, वह साक्षात् परमेश्वर ही हैं। सभी देवताओं का लय हो जाने पर ही लिंग शब्द बना है (लयनात् लिंग)। जो कोई भी इस लिंग पुराण के आख्यान को पढ़ता है, वह लिंग (महेश्वर) के समीप जाता है तथा हे ब्राह्मणो! वह शिवत्व को प्राप्त हो जाता है, इसमें अन्यथा विचार नहीं करना चाहिए।

ॐ

ब्रह्मा के प्रबोध का वर्णन

ऋषि लोग पूछने लगे—हे सूतजी! प्राचीनकाल के पद्म कल्प में ब्रह्मा जी पद्म से किस प्रकार उत्पन्न हुए और उन्होंने किस प्रकार शंकर जी के दर्शन प्राप्त किए ? इस सबको कृपया विस्तार से हमें कहिये, उसके लिए आप सर्वथा योग्य हैं।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! जब प्रलय काल में एक ही घोर अविभाजित अन्धकारमय समुद्र था तब उस एकान्त अकेले महा समुद्र में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण करने वाले श्री पति विष्णु जो पुरुषोत्तम नारायण हैं, आठ जिनकी भुजा हैं तथा सभी लोकों का उत्पत्ति स्थान हैं, वे शेषनाग की शैय्या पर योग में स्थित होकर शयन करने लगे। तब महान सर्प की शैय्या पर योग में स्थित होकर शयन करते हुए उस महान समुद्र के मध्य ही महान आत्माराम विष्णु नाम वाले उन प्रभु ने क्रीड़ा के लिए महान तरुण सूर्य के समान कान्तिवाला एक सौ योजन लम्बा कमल का वज्रदण्ड अपनी नाभि से उत्पन्न किया।

तब उस कमल दण्ड के समीप में ही सोने के अण्डे से उत्पन्न होने वाले इन्द्री विजयी चार मुख वाले, विशाल नेत्र वाले, दिव्य सुगन्धि से युक्त ब्रह्मा जी भी प्रकट

होकर पद्म से क्रीड़ा करते हुए उन विष्णु भगवान को देखकर विस्मय पूर्वक बोले—आप इस जल के मध्य में कौन शयन कर रहे हो ?

इसके बाद ब्रह्मा के ऐसे शुभ वचन सुनकर खिले हुए कमल के से नेत्र वाले भगवान अपनी शैय्या से उठकर उनसे बोले—तुम कौन हो और कहाँ से आए हो ? कहाँ जाना है ? यहाँ मेरे पास तक क्यों आए हो ? भगवान के ऐसा कहने पर बैकुण्ठाधिपति से ब्रह्मा जी ने कहा—आप भगवान शम्भो की माया से मोहित हैं जिसः आप अपने को आदि कर्त्ता मान रहे हो। तब भगवान विष्णु ब्रह्मा के ऐसे वचनों को सुनकर योग के द्वारा ब्रह्मा जी के मुख में होकर पेट में चले गए और १८ द्वीप सभी समुद्र सभी पर्वत तथा ब्रह्मा के स्तम्भ पर्यन्त सातों लोकों को ब्रह्मा के उदर में ही विष्णु ने देख लिया। तब विष्णु ने विस्मय पूर्वक इस तपस्वी महा बलशाली को देखने की इच्छा से हजारों वर्षों तक उनके पेट में अनेकों लोकों में घूमकर थक गए, परन्तु उनका अन्त ही नहीं पाया।

इसके बाद जगत के कर्त्ता नारायण भगवान उनके मुख से निकल आये तो पुनः ब्रह्मा जी से कहने लगे—आप आदि अन्त से रहित हैं तथा मध्य भी नहीं हैं, न कोई दिशा हैं। मैंने आपके उदर में आपका अन्त ही नहीं

देखा। ऐसा कहकर पुनः भगवान हरि ब्रह्मा से कहने लगे—हे निष्पाप ब्रह्मा जी! ऐसा ही आदि अन्त से रहित शाश्वत मेरा भी उदर है उसमें भी प्रवेश करके आप सभी चीजों को देखेंगे। तब उनकी विस्मय की आनन्दमयी वाणी को सुनकर ब्रह्माजी उन श्रीपते हरि के उदर में प्रवेश कर गए। उनके पेट में अनेकों वर्षों तक घूमते रहे, परन्तु उनका अन्त नहीं देखा। तब भगवान विष्णु ने ब्रह्मा जी की गति पहचान कर अपने शरीर के सभी द्वार बन्द कर लिए, यहाँ तक कि सूक्ष्म से सूक्ष्म छिद्र भी बन्द कर दिए। सभी द्वारों को बन्द जान कर अपने शरीर को सूक्ष्म करके कमल की नली के द्वारा ब्रह्मा जी बाहर आये। तब दोनों में उस समुद्र के बीच में ही संघर्ष होने लगा। उसी अवसर पर शूलपाणी महादेव जी वहाँ आए। शीघ्रता से चलते हुए उनके पैरों से पीड़ित जल की बड़ी बड़ी बूंदें शीघ्र ही आकाश में उठ गईं और अति गर्म और अति शीतल वायु चलने लगी।

इस प्रकार का आश्चर्य देखकर ब्रह्मा जी विष्णु से बोले—जल की गर्म और ठण्डी बूंद और वायु कमल को भी कम्पायमान कर रही हैं, सो आप कहो कि आपसे अन्य यह और कौन है तथा आप क्या करने की इच्छा कर रहे हो। ब्रह्मा जी के द्वारा मुख से ऐसा कहने पर भगवान बोले कि कमल पर स्थित तुम को क्यों ऐसा

संशय हो रहा है।

इस पर वेद निधि ब्रह्मा जी बोले कि मैं पूर्व तुम्हारे जानने की इच्छा से उदर में घुसा था। मेरे उदर में जैसे लोक हैं, हे प्रभो! वैसे ही मैंने आपके भी उदर में देखे। तुमको वश में करने की इच्छा से हजार वर्ष तक घूमा तब हे महाभाग! आपके शरीर के सब द्वारा बन्द हो गए। तब तो विचार पूर्वक अपने तेज से नाभि प्रदेश कमल सूत्र से निकल कर बाहर आया। हे प्रभो! अब आपको कुछ भी खेद नहीं होना चाहिए। अब मेरे लिए क्या आज्ञा है ? मैं क्या करूँ ?

ब्रह्मा की इस श्रेष्ठ प्रिय वाणी को सुनकर विष्णु भगवान बोले—मैंने तुमको बोध कराने की इच्छा से क्रीड़ा पूर्वक अपने शरीर के द्वारा बन्द कर लिए थे अन्य भाव नहीं था। आप मेरे मान्य और पूज्य हो, जो आपका उपकार हुआ है उसे हे कल्याण! सहन कर लो। मेरे धारण किये इस कमल से उतरो मैं तेज रूप तुम्हें धारण करने में असमर्थ हूँ। ब्रह्मा बोले—वर माँगो। भगवान ने कहा—कमल से उतरो मेरे पुत्र हो तुम सब प्रकार आनन्द पाओगे। और आज से आप श्वेत पगड़ी से सुशोभित पद्मयोनि नाम से प्रसिद्ध होंगे। हे ब्रह्मन्! तुम मेरे पुत्र हो। सातों लोकों के अधपति हो ऐसा कहकर भगवान वरदान देकर प्रसन्न हुए। उस समय समीप आते हुए सूर्य के

समान तेज वाले दीर्घ मुख वाले अद्भुत रूप शिवजी को देखकर ब्रह्मा नारायण से बोले—यह अप्रमेय शरीर वाला बड़े मुख और बड़े दाँतों वाला जिसके सिर के बाल बिखरे हुए हैं, दश भुजा वाले, मूँज की मेखला वाले भयंकर शब्द करने वाले महान कान्ति से युक्त यह कौन है जो आकार से और ज्यादा व्याप्त हो रहे हैं ? यह कौन आ रहे हैं ? ब्रह्मा के पूछने पर नारायण बोले—जिनके द्वारा वेग पूर्वक चलने से समुद्र का जल इनके पैर के तलों से उठकर आकाश में जलाशय हो गए हैं। ऐसा मालूम हो रहा है कि ये भवानी पति महादेव जी आ रहे हैं। जिस जल की मोटी मोटी जलधारा से तुम भीगे जा रहे हो तथा जिनकी श्वास की वायु से मेरी नाभि में स्थित कमल भी काँप रहा है। अतः ये प्रलय करने वाले श्री महादेव जी ही आ रहे हैं। आओ हम तुम दोनों वृषध्वज महादेव जी की स्तुति करें।

यह सुनकर ब्रह्मा क्रुद्ध होकर विष्णु से बोले—कि आप अपने को लोक का स्वामी जानते हो और मुझको लोकों का रचने वाला ब्रह्मा जानते हो, हम दोनों के अतिरिक्त यह शंकर नाम वाला और कौन है ? ऐसे क्रोध के वचन ब्रह्मा के द्वारा सुनकर श्री विष्णु भगवान बोले—ऐसा कहकर महात्मा शंकर की निन्दा मत करो। महा योगेश्वर दुराधर्ष वरप्रद इस जगत के कारण पुरुष बीजी

ज्याति स्वरूप शंकर हैं, बालकों के खिलौने की तरह वह क्रीड़ा करते हैं। उसे ही प्रधान, अव्यक्त, योनी, अविनाशी, अव्यय कहते हैं, वह शिव ही है। ब्रह्मा जी ने पूछा—हे भगवान! आप योनि हो, मैं बीज हूँ। महेश्वर कैसे बीजी हैं? भगवान बोले—कि शिव से अधिक और कोई गुह्य वस्तु नहीं है। महत् का भी परम तत्व शिव ही हैं। जो आत्मज्ञानियों का परम धाम है। यह शिव अपने स्वरूप को दो भागों में बाँट देते हैं। एक निष्कल, अव्यक्त और दूसरा सकल सगुण के समागम से वह समुद्र में हिरण्य अण्ड होता है। हजारों वर्ष तक वह अण्ड जल में तैरता रहता है। अन्त में वायु से उसके दो टुकड़े होते हैं। एक कपाल (टुकड़े) से ऊपर के लोक एक से नीचे के पृथ्वी आदि लोक उत्पन्न होते हैं। उसी में पंचदेव भगवान चतुर्मुख उत्पन्न होता है। शून्य आकाश में तारा नक्षत्र सूर्य चन्द्रमा देखकर मैं कौन हूँ ऐसा ध्यान करने पर कुमार होते हैं। कुमार अग्नि के सदृश तेज वाले श्रीमान सनत्कुमार तथा ऋभु नैष्ठिक ब्रह्मचारी होते हैं। फिर सनक सनातन सनन्दन संसार की स्थिति के लिए पैदा होते हैं। तीनों प्रकार के तापों से रहित ये कर्म को आरम्भ नहीं करते, क्योंकि कर्म करने से जीवन में जरा आदिक के बहुत से क्लेश हैं। स्वर्ग का सुख अल्प है, नरक अधिक दुःख है। ऋभु सनत कुमार

को अपने वशीभूत जानकर और सनकादि तीन पुत्रों को तीनों गुणों से अतीत, अति तेजस्वी, ज्ञान की बुद्धि द्वारा प्रवृत्त हुए देखकर तुम शंकर की माया से मोहित होकर वैवर्त्त कल्प में सूक्ष्म भूत और पार्थिव जो होंगे, उनको ईश्वरी माया व्याप्त होगी। जैसे सुमेरू पर्वत को देवलोक कहा है। इसके महात्म्य को श्रेष्ठ देवता का महात्म्य जानो।

इस प्रकार महादेव के सद्भाव को जानकर प्रणव द्वारा अथवा सामवेद द्वारा स्तुति करने योग्य, भूतों के प्रभु वरदान देने वाले महेश्वर को और मुझको स्तुति करो? क्रुद्ध हुए शंकर भगवान तुम्हें और मुझे श्वास से भस्म कर सकते हैं। ऐसा जानकर हे ब्रह्मन्! तुम स्थित हो जाओ। मैं तुम्हें आगे लेकर प्रभु की स्तुति करूँगा।

ब्रह्मा विष्णु के द्वारा शिव की स्तुति

सूतजी बोले—इसके बाद गरुड़ध्वज विष्णु भगवान ब्रह्मा जी को आगे करके भूत भविष्यत वर्तमान शंकर जी के नामों से छन्द से (वेद) के द्वारा इस स्तोत्र से स्तुति करने लगे।

विष्णु भगवान बोले—हे अनन्त तेज वाले! हे सुव्रत! हे भगवान! आपको नमस्कार है। हे क्षेत्र के स्वामी! हे बीजी! हे शूली! हे ज्येष्ठ! हे श्रेष्ठ! हे मान्य! हे पूज्य! हे सद्योजात! हे गहर! हे घटेश! सभी प्राणियों के स्वामी आपको नमस्कार है। वेद स्मृतियों के प्रभु कर्म द्रव्य आदि के भी प्रभु आपको नमस्कार है। हे योग सांख्य के प्रभु! हे अच्छी प्रकार बंधे ऋषि महर्षियों के भी प्रभु, ग्रहों के प्रभु आपको नमस्कार है। हे नदियों के वृक्षों के,महान औषधियों के, धर्म रूपी वृक्ष के, धर्म की स्थिति के, परार्थ के, पर के, रस के, रत्नों के प्रभु हो आपको नमस्कार है। अहो रात्रि, अर्ध मास, मास आदि के स्वामी तथा ऋतुओं के स्वामी आपको नमस्कार है। हे पुराण प्रभु सर्ग करने वाले प्रभु आपको नमस्कार है। मन्वन्तर के प्रभु, योग के प्रभु, विश्व के प्रभु, ब्रह्मा के अधिपति, हे भगवान! आपको नमस्कार है। विद्या के स्वामी, विद्या के अधिपति के स्वामी, व्रतादिक के स्वामी, मन्त्रों के प्रभु, पित्रीश्वरों के पति, पशुपति, गो वृषेन्द्रध्वज! आपको नमस्कार है। आप प्रजापतियों के भी पति हैं। सिद्ध गन्धर्व, यक्ष, दैत्य दानवों के समूहों के भी स्वामी हैं। गरुड़, सर्प, पक्षी आदि के भी स्वामी हैं। वाराह, पिशाच, गुह्य, गोकर्ण, गोत्र, शंकुकर्ण, ऋक्ष, विरज, सुर, गण आदि के पति हे भगवान! आपको

नमस्कार है।

हे प्रभो! आप जल के स्वामी हो, ओज के स्वामी हो, आप ही लक्ष्मी पति हो तथा भूपति हो ऐसे आपको बारम्बार नमस्कार है। आप बल अबल के समूह हो, प्रदीप्त शिखर के भी शिखर हो,आप अतीत हो, वर्तमान हो तथा भविष्य भी आप ही हो। आप शूरवीर हो, वर देने वाले हो, श्रेष्ठ पुरुष हो, भूत भी आप ही हो। आप महत भी आप ही हो, आपको नमस्कार है। अणु हो, महान हो, बन्धन मोक्ष, स्वर्ग नर्क आदि आप ही हो, हे भव! आपको नमस्कार है। हुताग्नि भी आप ही हो, उपहूत भी आप हो, आपको नमस्कार है। हे विश्व! हे विश्वरूप! हे विश्वत:! शिर से आपको नमस्कार है। हे रुद्र! हव्य, कव्य, हुतवाह आपको नमस्कार है। हे सिद्ध! हे मध्य! हे इष्ट! हे सुवीर! हे सुघोर! हे क्रोध न करने वाले तथा क्रोधी, बुद्धि, शुद्ध, स्थूल, सूक्ष्म, दृश्य, अदृश्य, हे सर्वेश आपको नमस्कार है। विरूपाक्ष हो, लिंग हो, पिंगल हो, वृष्टि हो, हे धूम्र! हे श्वेत! हे पूज्य! हे उपजीव्य! हे सविशेह! हे निर्विशेष! हे क्षेम्य! हे वृद्ध! हे वत्सल! आपको बारम्बार नमस्कार है। पद्म वर्ण आपको नमस्कार है, कमल हाथ में धारण करने वाले हे कपर्दी! आपको नमस्कार है। हे महेश! हे कपिल! आप तर्क्य अतर्क्य हो, हे चित्र! हे चित्र वेश वाले! हे चित्र

वर्ण वाले! हे नीलकण्ठ! आपको नमस्कार है। हे बिना नाम वाले! आर्द्र चर्म को धारण करने वाले, श्मशान में रहने वाले, प्राणों का पालन करने वाले, मुण्डमाला को धारण करने वाले, नर और नारी के दिव्य शरीर को धारण करने वाले, सर्पों के यज्ञोपवीत धारण करने वाले आपको नमस्कार है। हे विकृत वेश वाले! हे दीप्त! हे निर्गुण! आपको नमस्कार है। आप वाम हो, वाम प्रिय हो, चूड़ामणि को धारण करने वाले हो आपको नमस्कार है। आपके कण्ठ में स्वर्ण का, ब्रह्मसूत्र शोभा देता है, आप कमल का शिर पर परिधान धारण करने वाले हैं। प्रदीप्त सूर्य, चन्द्रमा के समान शरीर की कान्ति वाले हैं। आप हयशीर्ष हो, पयोधाता हो, विधाता हो, भूत भावन हो, घन्टा प्रिय हो, ध्वजी हो, छत्री हो, पिनाकी हो, कवची हो, पहिशी हो, खड़्गी हो, अधस्मर आपको नमस्कार है। आप ब्रह्मचारी हो, गाथ हो, ब्राह्मण हो, शिष्ट हो, पूज्य हो, क्रोधी हो, प्रसन्न हो, अपने स्वकर्म में रत हो, दिव्य भोगों के भागी हो, आप असंख्य तत्व वाले हो, हे शिव! हे भव! जो भी आप हो, या जो भी आपको बारम्बार नमस्कार है।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! ब्रह्मा और नारायण के द्वारा इस प्रकार की गई स्तुति का जो भी कीर्तन करता है या ब्राह्मणों द्वारा सुनता है वह दस हजार अश्वमेध

यज्ञ के फल का भागीदार होता है। मृत्यु लोक में चाहे वह पापाचारी ही क्यों न हो वह इसे सुनने से शिव की सन्निधि को पाता है और इसका जप करने पर तो ब्रह्म लोक को प्राप्त करता है। श्राद्ध में, दैनिक कार्य में, यज्ञ में, अवभृथ स्नान (यज्ञ के बाद के स्नान) में सज्जन मनुष्यों के मध्य से इसका कीर्तन करने पर ब्रह्म के पास में मनुष्य चला जाता है।

स्तुति के द्वारा प्रसन्न शिव के द्वारा ब्रह्मा और नारायण को आश्वासन देना तथा ब्रह्मा का सृष्टि रचना

सूतजी बोले—मधुर पीले सफेद नेत्र वाले महादेव जी ने उन दोनों (ब्रह्मा विष्णु) को अधिक नम्र होकर उनका कीर्तन करते हुए देखकर सब कुछ जानते हुए भी क्रीड़ा के लिए अनजान की तरह बोले—

इस घोर प्रलय के समुद्र में कमल के नेत्र वाले आप दोनों महानुभाव कौन हो, जो आपस में अत्यधिक प्रेम

पूर्वक क्रीड़ा कर रहे हो। तब वे दोनों बोले—भगवन्! ऐसा क्या है जिसे आप नहीं जानते। हे विभो! हे रुद्र! हम दोनों को आपने ही इच्छा पूर्वक बनाया है।

तब तो उनके इस प्रकार के अभिनन्दनकारी तथा मान्य वचनों को सुनकर भगवान महादेव जी मधुर वाणी में इस प्रकार कहने लगे—हे कृष्ण! हे हिरण्यगर्भ ब्रह्मा जी! आप दोनों मेरे हृदय से उत्पन्न हुए हो। तुम दोनों अपना इच्छित वरदान माँगो। तब भगवान विष्णु ने नम्र होकर कहा कि हे प्रभो! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे अपनी भक्ति प्रदान कीजिये। केशव के ऐसा कहने पर शंकर भगवान ने उन्हें अपने कमलवत् चरणों में दृढ़ भक्ति प्रदान की तथा ब्रह्मा जी से बोले—हे वत्स! तू सभी लोकों का कर्त्ता होगा। तेरा कल्याण हो। ऐसा कह कर भगवान शंकर ने ब्रह्मा को अंगुलियों से स्पर्श किया और पुनः कहा कि हे वत्स! तुम मेरे समान ही हो तुम पितामह की संज्ञा वाले भी होगे। ऐसा कहकर शंकर जी अन्तर्ध्यान हो गये।

भगवान शंकर के चले जाने पर पद्मयोनि ने गोविन्द भगवान से पितामह ऐसी नाम वाली संज्ञा प्राप्त की। प्रजा की रचना के लिये ब्रह्मा जी ने बड़ा उग्र तप किया किन्तु उस तप से कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। तब दीर्घकाल तक तप करने पर ब्रह्मा जी के नेत्रों से आँसू निकलने

लगे। तब उन आँसुओं से वात, पित्त, कफ से युक्त, स्वास्तिक से युक्त, बड़े-बड़े केशों सहित महा-विषैले सर्प उत्पन्न हुए। उन्हें देखकर ब्रह्मा जी बोले—कि मेरी तपस्या का ऐसा फल है तो मेरे लिए धिक्कार है क्योंकि यह लोकों को विनाश करने वाली प्रजा है। इस प्रकार क्रोध और पश्चाताप से ब्रह्मा जी को मूर्छा हो गई और उसी समय प्रजापति ब्रह्मा ने प्राणों को त्याग दिया। किन्तु उनको इस प्रकार शरीर त्यागने पर उनके शरीर से ग्यारह रुद्र उत्पन्न हुए, जो उत्पन्न होते ही रोने लगे। रोने के कारण ही वे रुद्र कहलाये। ये रुद्र ही ब्रह्मा के प्राण हैं तथा यह प्राणियों के भी प्राण हैं जो सभी जीवधारियों में समाये हैं। महाभाग साधु ब्रह्मा के इस उग्र कार्य से प्रसन्न होकर उन रुद्रों ने उन्हें फिर से प्राण देकर जीवित कर दिया।

तब तो प्रणों को प्राप्त कर ब्रह्म जी ने उन देवेश्वर भगवान शंकर की गायत्री के सहित पूजा उपासना की। उन विश्वेश्वर को सर्वलोकमय देखकर आश्चर्य पूर्वक बारम्बार प्रणाम किया और शिव से पूछने लगे कि हे विभो! यह "सद्य" आदि कौन हैं ?

नाना प्रकार के कल्पों के वर्णन सहित चतुर्विधि सृष्टि तथा चतुष्पाद गायत्री का प्रतिपादन

सूतजी बोले—ब्रह्मा के द्वारा इस प्रकार के वचनों को सुनकर ब्रह्मा को प्रबोध देने के लिए हँसते हुए शंकर जी उनसे कहने लगे—जब श्वेत कल्प था तब मैं सफेद वस्त्र, सफेद माला पहने हुए, सफेद अस्थि, सफेद रोम वाला, श्वेत और लोहित वर्ण वाला होकर उत्पन्न हुआ था। तब उस कल्प का नाम भी श्वेत कल्प हुआ।

तब उस समय मेरे से ही उत्पन्न श्वेत वर्ण, श्वेत लोहित ब्रह्म नाम वाली गायत्री भी उत्पन्न हुई। तुमने अपने तप के द्वारा मुझे जान लिया और सद्य (झट) ही पैदा होकर मेरे पास आये। इसलिये तुम्हें जो भी ब्राह्मण सद्योजात और गुह्य नाम से जानेंगे वे मोक्ष प्राप्त कर मेरे को प्राप्त होंगे। इसके बाद मेरे द्वारा लोहित वर्ण धारण करने पर लोहित नाम का कल्प हुआ। उस समय लोहित वर्ण के मांस, अस्थि तथा दूध वाली लोहित स्तन वाली गायत्री देवी गौ रूप से उत्पन्न हुई। तब देवी के वाम होने पर मैं वामदेव हुआ। तब उस समय भी तुमने मुझे जान लिया। उस समय मैं वामदेव नाम से भूतल पर प्रसिद्ध

हुआ। जो लोग मुझे वामदेव को जान लेंगे, वे रुद्रलोक को जायेंगे और लौटेंगे नहीं। तब मैं योग क्रम से पीत वर्ण का हुआ और मेरे द्वारा किये गये नाम से वह समय पीत कल्प हुआ। वह ब्रह्म सहित गायत्री भी पीत वर्ण, पीत लोहिता तथा पीताङ्गी गायत्री भी उत्पन्न हुई। हे महासत्व! तब तुमने योग युक्त चित्त से मुझे जाना। वहाँ पर तत्पुरुषत्व रूप से मुझको पहचान लिया। हे ब्रह्मा! तब मेरा तत्पुरुष नाम हुआ। जो मुझ रुद्र को तथा वेद माता गायत्री रुद्राणी को तप से युक्त होकर जानेंगे वे फिर लौटकर नहीं आवेंगे।

इसके बाद जब मैं कृष्ण वर्ण का उत्पन्न हुआ, तब वह कल्प भी कृष्ण नाम से कहा गया। उस समय मैं काल के सदृश तथा लोक प्रकाशक हुआ। हे ब्रह्मन्! तब मुझको घोर पराक्रमशाली तुमने जाना। उस समय गायत्री भी कृष्ण लोहिता और कृष्णांगी हुई। ब्रह्म संज्ञा वाली गायत्री जिस समय उत्पन्न हुई उस समय मैं पृथ्वी पर घोरत्व को प्राप्त हुआ। ऐसा जो मुझको भूतल पर जानेंगे उनके लिए मैं अघोर शान्त तथा अविनाशी हूँगा।

हे ब्रह्मन्! जब मेरा विश्वरूप हुआ, तब तुमने मुझे परम समाधि से जान लिया। तभी लोक धारिणी विश्वरूपा गायत्री उत्पन्न हुई। जो विश्वरूप वाले मुझको भूतल पर जानेंगे, उनके लिए मैं शिव और सौम्य हूँगा।

इससे यह कल्प विश्वरूप नाम वाला कहा है और विश्वरूपा गायत्री कही है।

सर्व रूप मेरे चार पुत्र हैं, जो लोक सम्मत हैं। जिससे प्रजा के सभी वर्ण उत्पन्न होंगे तथा सभी वर्णों में सर्व भक्ष्य और पवित्र भी होंगे। मोक्ष, धर्म, अर्थ और काम नाम वाले ये पुत्र हैं। वेद भी चार प्रकार के होंगे। चार प्रकार के ही वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र) होंगे, आश्रम भी चार प्रकार के होंगे तथा धर्म के चार पाद, चार ही मेरे पुत्र हैं। इसलिए चतुर्युग अवस्था में चराचर जगत अवस्थित हैं।

भू लोक, भुव:लोक, स्व:लोक, महलोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक तथा इसके परे विष्णु लोक है। भू, भुव:, स्व:, मह यह चार पाद कहलाते हैं। भूलोक प्रथम पाद है, भुवलोक दूसरा, स्वलोक तीसरा तथा महलोक चौथा पाद है।

पंचम लोकजन लोक है तथा छठवाँ तपलोक है तथा सातवाँ सत्यलोक है, जिसमें मोक्ष पाने वाले मनुष्य ही जाते हैं जो लौट के नहीं आते। विष्णु लोक वह उत्तम स्थान है जिसमें से पुन: जीव को लौटना नहीं पड़ता। स्कन्ध और भौम भी सभी सिद्धियों वाले स्थान हैं।

रुद्र लोक योगियों का शुभ स्थान है जिसको ममता से रहित, अहंकार से रहित, काम, क्रोध से रहित द्विजाती

लोग ही देखते हैं। हे ब्रह्मा! यह जो चार पैरों वाली गायत्री जो देखी उसके पादान्त में विष्णु लोक, कुमार, शान्त, ओम (महेश्वर) लोक कहे गए हैं। इसके द्वारा ही सभी पशु चार पैर वाले तथा चार स्तन वाले होंगे।

सोम मन्त्र से युक्त मेरे मुख से जो गिरा वह प्राणियों का जीव है, इस प्रकार उत्पन्न जीव स्तन पीने वाले होंगे। उनकी सोम, अमृत तथा जीव संज्ञा कही है।

इसके बाद दो पैर वाले तथा दो स्तन वाली सृष्टि हुई। वह सभी दो पैर वाली तथा दो स्तन वाली सावित्री देवी से उत्पन्न हुए। इसके बाद यह देवी अजा रूप से उत्पन्न हुई, इससे सब बल वाली, सर्व भूतों को धारण करने वाली यह देवी तुमने देखी। इसके द्वारा सभी यह विश्वरूप प्रजा उत्पन्न हुई।

तप से युक्त होकर जो ब्राह्मण मुझे देखेंगे, वह तमोगुण, रजोगुण रहित मनुष्य लोक को त्यागकर मुझे प्राप्त करेंगे तथा मेरे लोक से पुनः लौटकर पृथ्वी पर नहीं आवेंगे। ऐसा ब्रह्मा से शिव ने कहा।

तब प्रणाम करके नम्र होकर ब्रह्मा जी ने कहा कि हे प्रभो! गायत्री से युक्त ऐसे महेश्वर रूप विश्वात्मा आपको तथा गायत्री को जानते हैं उन्हें आप परम स्थान दीजिये। तब भगवान ने कहा ऐसा ही हो। जो महात्मा शिव के इस विश्व रूप को जानता है, वह ब्रह्मा के

वचन से ब्रह्म सायुज्य को प्राप्त करता है।

शिव तत्व से साक्षात्कार करने के लिए उनका आविर्भाव तथा उनकी शिष्य परम्परा का कथन

सूतजी बोले—ब्रह्मा जी ने रुद्र भगवान से इस प्रकार की बात सुनने पर उनको पुन: प्रणाम किया तथा वह प्रजापति ब्रह्मा रुद्र से कहने लगे—हे भगवन! हे महादेव! हे महेश्वर! आपके ये शरीर जो संसार के द्वारा पूज्य हैं, कब किस काल में अथवा युग में ब्राह्मणों के द्वारा जाने जाते हैं? अथवा इन्हें किस तरह से, तप से, ज्ञान से या ध्यान से जाना जाता है? इस प्रकार के वचनों को सुनकर भगवान रुद्र ब्रह्मा जी से कहने लगे—

श्री भगवान शंकर जी बोले—मैं तप, व्रत, दान, धर्म, तीर्थ से, वेदाध्ययन से, धन से, जाना नहीं जा सकता, केवल ध्यान से ही जाना जा सकता हूँ। सातवें वाराह कल्प में जब स्वयं वैवस्वत मनु कल्पेश्वर होंगे जो हे ब्रह्मा जी! आपके नाती होंगे, तब चतुर्युग की

अवस्था में युगों के अन्त में लोकों में अनुग्रह करने के लिए मैं भी उत्पन्न होऊँगा।

उस प्रथम युग के प्रथम द्वापर में स्वयं प्रभु ही व्यास होंगे और ब्राह्मणों के हित के लिए उस युग के अन्त में मैं भी श्वेत महामुनि नाम से उत्पन्न होऊँगा। शिखा सूत्र से युक्त हिमालय के छागल नाम के सुन्दर शिखर पर वास करूँगा। सभी मेरे चार शिष्य वेद पारंगत शिक्षा से युक्त मेरे पास ही पैदा होंगे, वे सभी श्वेत शिखा से उत्पन्न होंगे। वे सभी योग में परायण हुए मेरे समीप ही चले जायेंगे।

पुनः दूसरे द्वापर में जब सद्योजात प्रजापति व्यास होंगे तब मैं भी लोक कल्याण के लिए पैदा हूँगा, तब मेरा नाम सुतार होगा। तब मेरे ये चारों पुत्र दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक और केलुमा नाम से उत्पन्न होंगे तथा ये चारों ही साथ-साथ ध्यान और योग में परायण होकर रुद्रलोक को चले जायेंगे।

तीसरे द्वापर में जब भार्गव व्यास होंगे, तब मैं युग के अन्त में दमन नाम से प्रकट हूँगा। तब भी ये मेरे चारों पुत्र उत्पन्न होंगे। इनका नाम विकोश, विकेश, विपाश और पापनाशक होगा। तब भी ये चारों योग मार्ग के द्वारा आवागमन से छूटकर रुद्र लोक को चले जायेंगे।

चौथे द्वापर में अङ्गिरा नाम के ऋषि व्यास कहलायेंगे,

तब मैं सुहोत्र नाम से पैदा हूँगा और मेरे पुत्र भी सुमुख, दुर्मुख, दुर्धर और दुरातिक्रम नाम वाले होकर योग मार्ग से रुद्र लोक को जायेंगे।

पाँचवें द्वापर में सविता नाम के व्यास होंगे, तब मैं कंक नाम से महातपस्वी के रूप में प्रकट हूँगा। उस समय चारों महाभाग मेरे पुत्र सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार महान दृढ़ व्रती उत्पन्न होंगे तथा मेरे समीप आकर आवागमन से छूट कर दुर्लभ मोक्ष को प्राप्त करेंगे।

छठवें द्वार के काल में मृत्यु व्यास बनेंगे, तब मैं 'लौगाक्षि' नाम से विख्यात हूँगा और योगात्मा दृढ़व्रती चारों शिष्य क्रमशः सुधामा, विरजा, शंख, पाद्रज नाम से उत्पन्न होंगे। तब भी वे ध्यान योग में तत्पर हुए मेरी परम दुर्लभ समीपता को प्राप्त होंगे।

सातवें द्वार में शतक्रतु व्यास होंगे, तब मैं भी युग के अन्त में कलयुग में 'विभु' नाम से प्रकट होऊँगा। तब मुझे जैगीषव्य नाम का विभु सब कहेंगे। मेरे चारों पुत्र सारस्वत, मेघ, मेघवाह, सुवाहन नाम से होंगे। ये सभी उसी योग मार्ग के द्वारा रुद्र लोक को चले जायेंगे।

आठवें व्यास वशिष्ठ होंगे। तब मैं 'दधि वाहन' नाम वाला हूँगा। मेरे पुत्र कपिल, आसुरि, पंच शिखोमुनि तथा महायोगी वाष्कल होकर योग के द्वारा मुझ महेश्वर

को प्राप्त करेंगे।

नौवें व्यास सारस्वत होंगे, तब मेरा नाम ऋषभ होगा और मेरे उन पुत्रों का नाम पाराशर, गर्ग, भार्गव, आङ्गिरस होगा, जो वेद पारंगत विद्वान ब्राह्मण होंगे और ये सभी तपस्वी योग के द्वारा दुबारा न लौटने वाली मोक्ष को प्राप्त हो रुद्र लोक को जायेंगे।

दसवें द्वार में 'त्रिपाद्वै' व्यास होंगे। तब मैं भी सुन्दर भृगुतङ्ग नाम के श्रेष्ठ पर्वत पर 'भविता मुनि' नाम से प्रकट होकर रहूँगा। मेरे पुत्र भी बल, बन्धु, निरामित्र, केतु, भृङ्ग नाम से उत्पन्न होंगे और योग मार्ग का अनुसरण करके रुद्र लोक को प्राप्त करेंगे।

ग्यारहवें द्वापर में 'त्रिव्रत' नाम के व्यास होंगे। तब मैं भी उग्र नाम वाला महातेजस्वी गङ्गा द्वार (हरिद्वार) में उत्पन्न हूँगा। तभी मेरे ये पुत्र लम्बोदर, लम्बाक्ष, लम्बकेश भी उत्पन्न होकर योग द्वारा रुद्र लोक को जायेंगे।

बारहवें द्वापर में कवियों में श्रेष्ठ शततेज नाम के मुनि व्यास होंगे। तब मैं अत्रि नाम से प्रसिद्ध हूँगा और ये मेरे पुत्र भस्म, स्नान आदि से लेपित सर्वज्ञ, समबुद्धि, साध्य और सर्व नाम से महेश्वर के रुद्र लोक को जायेंगे।

तेरहवें द्वापर में 'धर्म' नाम के व्यास होंगे। तब मैं बालि नाम का महामुनि होऊँगा और बालखिल्य के आश्रम गन्धमादन पर्वत पर रहूँगा। तब उन मेरे पुत्रों के

नाम सुधामा, काश्यप, वशिष्ठ और विरजा होंगे। तब ये सभी महायोग में तत्पर होकर रुद्र लोक को जायेंगे।

पुनः चौदहवें द्वापर में जाकर तरक्षु नाम के व्यास होंगे। तब मैं श्रेष्ठ अङ्गिरस वंश में गौतम नाम वाला उत्पन्न हूँगा और मेरे उन पुत्रों के नाम अत्रि, देवरुद्र, श्रवण, श्रविष्ठक होंगे, जो सभी कलियुग में उत्पन्न होकर योग मार्ग से रुद्र लोक को प्राप्त करेंगे।

इसके बाद क्रम से आये हुए द्वापर के पंद्रहवें युग में 'त्रैय्यारुणि' नाम के व्यास होंगे। तब मैं वेदशिरा नाम का ब्राह्मण होऊँगा। तब मैं वेदशिरा अस्त्र को महेश्वर से प्राप्त कर महावीर्य तथा वेदशीर्ष होकर हिमालय के पृष्ठ पर जाकर सरस्वती के तट पर रहूँगा। मेरे ये पुत्र कुणि, कुणिबाहु, कुशरीर, कुनेत्रक नाम से होकर योग के द्वारा रुद्र लोक को चले जायेंगे।

पुनः सोलहवें व्यास देव नाम से होंगे। तब मैं भक्ति और योग देने के लिए अवतरित हूँगा। मेरा नाम उस समय गोकर्ण होगा। मेरे पुत्र भी कश्यप, उशना (शुक्राचार्य) च्यवन और बृहस्पति नाम वाले होंगे। वे उसी मार्ग से अर्थात् योग साधन द्वारा रुद्रत्व को प्राप्त होंगे।

इसी प्रकार सत्रहवें व्यास काल क्रम से कृतंजय नाम के होंगे। उस समय मैं भी हिमालय के उत्तम शिखर

पर जो महालय है, उसकी गुफा में रहूँगा। मेरा नाम भी गुहवासी होगा। मेरे पुत्र भी ब्रह्मज्ञानी योगी होकर उत्पन्न होंगे। उनका नाम उतथ्य, वामदेव, महायोग तथा महाबल होगा। उनके भी सौ हजार शिष्य होंगे जो सभी योगाभ्यास में निरत रह कर अति दुर्लभ महेश्वर पद को प्राप्त करेंगे।

हे ब्रह्मन्! अठरहवें द्वापर में काल क्रमागत से 'ऋतंजय' व्यास होंगे। तब मैं 'शिखण्डी' नाम से प्रकट हूँगा। सिद्दा नेत्र हिमालय की शिखण्डी नाम की चोटी पर निवास करूँगा। तब मेरे तपस्वी पुत्र भी वाचश्रवा, ऋचीक, श्यावश्व, यतीश्वर नाम से होकर अन्त में योग मार्ग द्वारा रुद्र लोक को जायेंगे।

उन्नीसवें व्यास का नाम भारद्वाज महामुनि होगा। मैं भी तब जटामाली नाम से उत्पन्न होऊँगा। तब मेरे ये चार महातेज वाले पुत्र भी उत्पन्न होंगे। उनके नाम हिरण्यनाभ, कौशल, लोंगाक्षी, कुथुमि होंगे। ये सभी योग मार्ग द्वारा महेश्वर को प्राप्त कर रुद्रलोक में निवास करेंगे।

तब बीसवें द्वापर के गौतम नाम के महामुनि व्यास बनेंगे और मैं भी अट्टहास नाम से उत्पन्न हूँगा। हिमालय की अट्टहास शिक्षा पर रहूँगा तभी मेरे ये पुत्र भी महान योगी और व्रती होकर उत्पन्न होंगे। उनके नाम सुमन्तु, वर्वरी, कवन्ध और कुशिकन्धर होंगे। ये भी योग मार्ग से रुद्र लोक को जायेंगे।

इसके बाद इक्कीसवें द्वापर के 'वाचश्रवा' नाम के व्यास होंगे। तब मैं 'दारुको' नाम से उत्पन्न हूँगा। मेरे महोजस्वी पुत्र ल्पक्षोदा, भायणि, केतुमान तथा गौतम नाम के होंगे। ये सभी योग में निरत होकर नैष्ठिक व्रत को धारण करके रुद्र लोक को जायेंगे।

बाइसवें व्यास का नाम 'शुष्मायण' होगा। तब मेरा नाम लाङ्गली भीम नाम से उत्पन्न होऊँगा। तब इन्द्र सहित सभी देवता मुझे हलायुध सहित देखेंगे। मेरे पुत्र भी धार्मिक, महायोगी, भल्लवी, मधुपिङ्ग, श्वेत, केतु तथा कुश नाम वाले होंगे। ये विमल ब्रह्म भूमिष्ठ होकर रुद्र लोक को जायेंगे।

तेईसवें द्वापर के तृणविन्दु नाम के मुनि व्यास कार्य करेंगे। तब मैं भी श्वेत नाम के महामुनि का पुत्र होकर उत्तम पर्वत पर काल को जीर्ण कर दूँगा। तब तो उस पर्वत का नाम कालंजर होगा। महा तपस्वी मेरे वे पुत्र भी उशिक, वृहदश्व, देवल, कविरेवच नाम के होंगे तथा वे सभी महेश्वर योग के साधन से रुद्र लोक को जायेंगे।

आगे के युग में ऋक्ष नाम के मुनि व्यास बनेंगे। मैं शूली नाम से विख्यात हूँगा। मेरे सभी शिष्य भी शालिहोत्र, अग्निवेश, युनाश्व, शरद्वसु होंगे जो योग करके रुद्र लोक को जायेंगे।

पच्चीसवें व्यास का नाम शक्ति होगा। तब मैं भी दंडी मुण्डीश्वर नाम से प्रकट हूँगा। छागल, कुण्डक, कुम्भाण्ड, प्रवाहज नाम से मेरे पुत्र भी उत्पन्न होकर अन्त में योग मार्ग से शिवत्व को प्राप्त करेंगे।

छब्बीसवें व्यास का काम पराशर महामुनि करेंगे। तब मैं भी सहष्णु नाम से उत्पन्न हूँगा। भद्रवट नाम के पुर में निवास करूँगा। मेरे पुत्र परम धार्मिक उलूक, विद्युत, शम्बूक तथा आश्वलायन नाम वाले होंगे और महेश्वर पद को प्राप्त करेंगे।

सत्ताईसवें द्वापर में 'जातुकर्ण्य' नाम के व्यास होंगे। उस काल में मैं भी कलयुग के अन्त में सोमशर्मा नाम का ब्राह्मण हूँगा। प्रभास क्षेत्र में रहकर मैं योग में उत्पन्न होऊँगा। मेरे ये तपस्वी शिष्य भी अक्षपाद, कुमार, उलूक तथा वत्स नाम से प्रसिद्ध होंगे। तब वे यह विमल विशुद्ध होकर योग का अनुसरण करके रुद्र लोक को प्राप्त होंगे।

काल क्रम से अट्ठाइसवें द्वापर में पराशर मुनि के पुत्र विष्णु स्वरूप श्रीमान् द्वैपायन नाम के व्यास होंगे। उसी काल में वासुदेव श्रीकृष्ण भी छठवें अंश से उत्पन्न होंगे। तब मैं भी मेरु पर्वत की पवित्र गुफा में आपके तथा विष्णु के साथ निवास करूँगा। योग में तत्पर तब मेरा नाम लकुली होगा। वह सिद्ध क्षेत्र होगा। तब मेरे

पुत्र भी कुशिक, गर्ग, मित्र, कौरुष्य नाम से उत्पन्न होंगे और योग मार्ग के द्वारा दुर्लभ रुद्रलोक को जायेंगे। ये सभी पाशुपत धर्म के मानने वाले तथा भस्मीभूत होंगे। शंकर के लिंग की अर्चना में निरत रहेंगे। मैं भी न तो सांख्य से, न पंचरात्र से और न ध्यान से प्रसन्न होता हूँ। जितना मैं पाशुपत धर्म से प्रसन्न होता हूँ और मनुष्य भी पाशुपत योग द्वारा परम गति को प्राप्त होते हैं।

हे ब्रह्मा जी! यह मैंने अपने अवतारों के लक्षण तुम्हें बताए तथा २८ मन्वन्तरों के क्रम से व्यासों के नाम भी कहे हैं। कृष्ण द्वैपायन मुनि अट्ठाइसवें द्वापर में व्यास होकर वेदों का विभाग करके धर्म के लक्षणों को कहेंगे।

सूतजी बोले—भगवान के द्वारा रुद्रावतारों को सुन कर प्रसन्न हुए। ब्रह्मा जी पुनः शंकर जी से पूछने लगे—

ब्रह्मा जी बोले—हे भगवन! सभी देवता एवं गण सब कुछ विष्णु रूप हैं। वेद भी ऐसा ही गान करते हैं। परन्तु वे भी आपके लिंग की अर्चना में तत्पर रहते हैं तथा आपको निरन्तर प्रणाम करते हैं। इसका भेद क्या है? सूतजी, ब्रह्मा के ऐसे वचन सुनकर महादेव जी प्रेम पूर्वक कहने लगे कि साक्षात् नारायण, इन्द्र तथा सभी देव और मुनि की लिंग की पूजा में जो तत्पर रहते हैं उसका कारण यह है कि लिंगार्चन के बिना निष्ठा नहीं होती। ऐसा कहकर महादेव अन्तर्ध्यान हो गए। तब ब्रह्मा

भी हाथ जोड़कर शिव को नमस्कार करके शेष सृष्टि की रचना करने लगे।

लिंगार्चन की विधि तथा स्नान और आचमन के प्रकार

ऋषि बोले—हे रोमहर्ष जी! महादेव जी की लिंग में किस प्रकार पूजा करनी चाहिए। इस समय यह भी बताने की कृपा करें।

सूतजी बोले—कैलाश पर्वत पर देवी ने महादेव जी से एक बार इसी प्रकार पूछा था। वहाँ पास में नन्दी बैठा था। उसने सब सुनकर पूर्व में ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार को लिंगार्चन विधि कही थी। उससे महातेज वाले व्यास ने सुनी थी। मैंने शैलादि से स्नान विधि पूर्वक अर्चन विधि सुनी सो उसे मैं तुम्हें कहूँगा, शैलादि बोले—

अब ब्राह्मणों के हित के लिए स्नान आदि की विधि कहूँगा जो पूर्व में गोद में बैठी हुई पार्वती को कही थी, जो सब पापों को नाश करने वाली हैं। इस विधि से स्नान करके एक बार शंकर का पूजन करके ब्रह्मसूर्य से आचमन करे वह मनुष्य सब पापों से छूट जाता है।

शिवजी ने तीन प्रकार का आचमन कहा है, जो ब्राह्मणों को बड़ा हितकारी है। वरुण स्नान (जल के द्वारा) दूसरा उससे उत्तम है वह है भस्म से, तीसरा स्नान मन्त्र के द्वारा हो जाता है। जो पुरुष दुष्ट भाव वाले हैं उनकी शुद्धि जल या भस्म से नहीं होती है। अतः शुद्ध भाव वाला ही मनुष्य पवित्र होता है।

सब नदी तालाब आदि में लय पर्यन्त जो नित्य स्नान है वह दुष्ट भाव वाला नहीं होता है। मनुष्यों का कमल रूपी चित्त तभी खिलेगा जब ज्ञान रूपी सूर्य की आभा से पवित्र हो जायेगा। मिट्टी, गोबर, तिल, पुष्प, भस्म, कुशा, तीर्थ के लिए ले जानी चाहिये। हाथ पैर धोकर आचमन करके देह के मल को दूर कर किनारे पर रखे उन द्रव्यों से स्नान करे।

'उद्धतासिवराहेन' आदि मन्त्र को बोलकर मिट्टी से स्नान करे। 'गन्ध द्वारा' मन्त्र से गोबर लगाकर स्नान करे।

मलिन वस्त्र त्याग कर शुभ वस्त्र धारण करे, तब तीन बार आचमन करें। सब पापों से शुद्ध होने के लिए वरुण देव का आह्वान करे, मानसिक पूजन करके ध्यान करे। आचमन तीन बार करके तीर्थ में गोता लगावे तथा शिव का स्मरण कर जल को अभिमन्त्रित करे, फिर गोता लगाकर अघमर्षण मन्त्र का जप करे। उसी जल में

सूर्य, सोम, अग्नि, मण्डल का ध्यान करे। पुनः आचमन करके जल से बाहर निकल कर शंख से या दौना से अथवा ढाक के पत्ता से या कुशा के जल से या पुष्प के जल से अभिषेक करे। रुद्रेण पावमानेन इत्यादि मन्त्रों से अभिषेक करता हुआ तत् तत् देवताओं के स्वरूप का, ऋषियों के स्वरूप का ध्यान स्मरण करता जाये। इस प्रकार अभिषेक करके अपने मस्तक पर जल छिड़के और हृदय में पंच मुख वाले और तीन नेत्र वाले शिवजी का ध्यान करे।

अपने शिखा सूत्र का विचार करके आचमन करे। पवित्र हाथों में धारण करके पवित्र स्थान पर बैठे। कुशा सहित दाहिने हाथ से जल उठाकर पान करे तथा तीन बार हिंसा पापादि की निवृत्ति के लिए परिक्रमा करे।

इस प्रकार संक्षेप से ब्राह्मणों के हित के लिए स्नान आचमन विधि का हे ब्राह्मणो! मैंने वर्णन किया है।

गायत्री जप विधान पूर्वक नित्य कर्म विधि में पंचयज्ञों का प्रतिपादन

नन्दीश्वर बोले—वेद माता महेश्वरी गायत्री देवी

का आह्वान करके पाद्य, अर्घ्य, आचमन आदि प्रदान करके प्राणायाम पूर्वक सुख से आसन पर बैठकर एक हजार पाँच सौ या १०८ बार प्रणव सहित गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिए। फिर अर्घ्य देकर पूजा करके सिर से नमस्कार करे। 'उत्तमे शिखरे देवि' आदि मन्त्र बोलकर विसर्जन करे। पूर्व दिशा में तेजो रूप वेद माता गायत्री को हाथ जोड़कर सूर्य की प्रार्थना करे। 'उदुत्यं चित्र देवनां तदुत्थं जात वेदसं' इत्यादि मन्त्र बोलकर उपस्थान करे। सूर्य और ब्रह्मा को अभिवादन करे। ऋक् यजु सामवेद के सूर्य सूक्तों से जप करे। पीछे अग्नि की तीन परिक्रमा करे। आत्मा, अंतरात्मा, परमात्मा, सूर्य, ब्रह्मा, अग्नि की वंदना करे। फिर मुनियों को आह्वान करे यथायोग्य पूर्व या उत्तर को मुख करके सब का तर्पण करना चाहिए।

देवताओं का पुष्प के जल से, ऋषियों का कुशा के जल से, पितरों का तिल के जल से, गन्ध युक्त तर्पण में यज्ञोपवीती ऋषियों के में निवीत्ती (कण्ठ जनेऊ) और पितरों के में प्राचीनावीती (अर्थात् उल्टा जनेऊ) धारण करे। देवों का अंगुली के अग्रभाग से तथा ऋषियों का कन्नी अंगुली की जड़ से और पितरों का दायें अंगूठे की जड़ से होकर जल छोड़ना चाहिए।

देव यज्ञ, मनुष्य यज्ञ, भूत यज्ञ, पितृ यज्ञ तथा ब्रह्म

यज्ञ ये पाँच प्रकार के कर्म ब्राह्मण को अवश्य करने चाहिए। हे ब्राह्मणो! अपनी अपनी वेद शाखाओं का अध्ययन करना ही ब्रह्म यज्ञ कहा गया है। अग्नि में हवन करना देव यज्ञ है। बलि देना (बलिवैश्वदेव) करना भूत यज्ञ है, अत्यन्त आदर पूर्वक वेदपाठी ब्राह्मण को पत्नी सहित अन्न देना मनुष्य यज्ञ है, पित्रीश्वरों को उद्देश्य करके जो दिया जाए वह पितृ यज्ञ है। इन पंच महा यज्ञों को करने से सभी सिद्धि प्राप्त होती हैं।

सभी यज्ञों में सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म यज्ञ कहा गया है। ब्रह्म यज्ञ से सभी देवता, इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव सभी प्रसन्न होते हैं। इसमें अन्यत्र विचार नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार विधि पूर्वक ब्रह्मयज्ञ करके सूत्र सहित पवित्र होवे। हे ब्राह्मणो! इस प्रकार के पंच यज्ञों को न करके मनुष्य सूकर आदि की योनि को प्राप्त करता है। इसलिए सब प्रकार से कल्याण की इच्छा के लिए ब्रह्म यज्ञ आदि तथा स्नान करके विधिवत् तीर्थ का सेवन करना चाहिए। बाहर से हाथ पैर धोकर देह शुद्धि के लिए भस्म का स्नान करे, फिर प्रणव से अग्निहोत्र करे। 'ज्योति सूर्य' आदि मन्त्र बोलकर प्रातःकाल हवन करे। 'ज्योतिःअग्नि' मन्त्र से सायं तथा प्रातः भली प्रकार हवन करना चाहिए। ईशान से शिरो देश को, मुख को तत्पुरुष से, हृदय को अघोर से, गुह्य स्थान को वामदेव से, पैरों

को सद्य आदि से तथा सम्पूर्ण अंगों को ॐ से अभिषेक करना चाहिए। तब पैरों को तथा हाथों को प्रक्षालन करे और देव को स्मरण करके भस्म लगावे। तब 'आपोहिष्ठादू' आदि मन्त्र से स्नान करके ऋग् यजु सामवेद के शुभ मन्त्रों को स्नान के मध्य में ब्राह्मणों के हितार्थ बोले। इस प्रकार संक्षेप में स्नान की इस विधि को करने वाला मनुष्य परम पद को प्राप्त करता है।

लिंगार्चन विधि का वर्णन

शैलादि बोले—अब मैं तुमसे संक्षेप में लिंग की पूजा की विधि कहूँगा, क्योंकि विस्तार से तो सौ वर्ष में भी उसका वर्णन नहीं हो सकता। ऊपर बताई विधि से स्नान आदि करके पूजा के स्थान में प्रवेश करे तथा तीन प्राणायाम करके त्र्यम्बक भगवान का ध्यान करे। पाँच मुख वाले दश पैर वाले शुद्ध स्फटिक के समान श्वेत सब प्रकार के भूषणों से युक्त चित्रित वस्त्रों से विभूषित हैं, ऐसा ध्यान करे। ऐसे शिव के शरीर में आस्था रखकर परमेश्वर का पूजन करना चाहिए।

देह की शुद्धि करके मूल मन्त्र से न्यास करे और सर्वत्र प्रणव से यथा क्रम न्यास करे। ॐ नमः शिवाय में सभी मन्त्र छिपे हैं जैसे बड़ के गूलर में सम्पूर्ण बड़ का पेड़ छिपा है और महत तत्व में जैसे ब्रह्म स्थित है। गन्ध और चन्दन के जल से पूजा स्थान को छिड़के और द्रव्यों को धो पौंछकर साफ करे। यह सब ॐकार मन्त्र से ही करे। प्रोक्षणी पात्र, अर्घ्य पात्र, पाद्यपात्र तथा आचमनीय पात्र भी क्रम से रखे। दाम से आच्छादित कर शुद्ध जल से साफ कर उनमें शीतल जल भरे। प्रणव (ॐ) के द्वारा ही पाद्य के पात्र में खस और चन्दन डाले। जाति कंकोल, कपूर, तमाल को चूर्ण करके आचमनीय पात्र में डाले। इस प्रकार सब पात्रों में चन्दन, कपूर तथा अनेकों प्रकार के पुष्प डाले। कुशाग्र, चावल, जौ और भस्म प्रणव के द्वारा प्रोक्षणी पात्र में डाले। पंचाक्षर अथवा रुद्रगायत्री का न्यास करे अथवा केवल प्रणव का ही करे। प्रणव के द्वारा प्रोक्षणी पात्र में स्थित डकों से न्यास करे।

देवाधिदेव के पास में नन्दी का तथा दीप्त अग्नि के समान चमकते हुए तीन नेत्र वाले, बाल चन्द्रमा धारण करने वाले, सम्पूर्ण आभरणों से भूषित सौम्य रूप शिवजी की पूजा करे तथा भक्ति से पुष्पाँजली दे। विविध प्रकार की धूप गन्ध से शंकर का पूजन करके स्कन्ध, विनायक

और देवी का पूजन करे तथा लिंग शुद्धि करे। प्रणव आदि से नमः तक पूरे मन्त्र का जप करे। पद्म का आसन दे। पूर्व दल में प्रथम आणिमा सिद्धि, दक्षिण में लधिमा, पश्चिम में महिमा, उत्तर में प्रासि, प्राकाम्य नैरुत में, ईशत्व वायव्य, वशित्व सिद्धि स्थापित करे। कली को सोम कहते हैं, सोम के नीचे सूर्य उसके नीचे पावक स्थापित करे। धर्मादिकों को विदशापों में,अव्यक्त आदि को चारों दिशाओं में,सोम के अन्त में तीनों गुणों को उसके समीप में शिव का आसन स्थापित करके वामदेव मन्त्र से सद्योजात शिव को आसन पर रुद्र गायत्री के समीप में स्थापित करे। अघोर मन्त्र से रुद्र गायत्री की प्रतिष्ठा करे। 'ईशानः सर्व विधानां' इस मन्त्र से पूजा करे। पाद्य अर्घ्य और आचमन प्रदान करे। गन्ध चन्दन युक्त जल से रुद्र को स्नान करावे। पंचगव्य, विधान से बनाकर प्रणव द्वारा यथा विधि स्नान करावे। घी, मधु, शक्कर से स्नान करावे। प्रणव से अभिषेक करे। पवित्र पात्रों से शुद्ध जल से मन्त्र बोलकर स्नान करावे।

इस प्रकार सफेद शुद्ध वस्त्र से उनका अंग पोंछे। जाति, चम्पक, कपूर, कन्नेर तथा चमेली, कदम्ब के पुष्पों की सुन्दर माला पहनावे। जल से सद्योजात आदि मंत्रों से न्यास करे। सोने के या चाँदी के कलश से अथवा ताँबा के पत्र से, कमल पत्र या पलाश पत्र से या

शंख से या मिट्टी के पात्र से दाम सहित तथा पुष्प सहित मन्त्र युक्त होकर शिव को स्नान कराना चाहिए। उन मन्त्रों को मैं तुम्हें बताता हूँ—इन मन्त्रों से एक बार भी लिंग को स्नान कराकर मनुष्य मुक्त हो जाता है। पवमान, वामकेन, रुद्र, नीलरूप, श्री सूक्त, रात्रि सूक्त, चमक, होतार, अथर्व, शान्ति अथवा अरुण, वारुण, वेदव्रत तथा पुरुष सूक्त से व त्वरित रुद्र से कपि, कपर्दी, सगम्य, व्रहद्रचन्द्र, विसपाक्ष, स्कन्द, शतऋग शिव, पंचब्रह्म सूक्त से अथवा केवल प्रणव (ॐ) से ही शिव देवाधि देव का स्नान करावे तो सभी पापों से मुक्त हो जाता है। पुन: देकर आचमन करावे। गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, क्रम से अर्पण करे तथा सुगन्धित जल से आचमन करावे। मुकुट, छत्र, भूषण भी प्रणव के द्वारा देव को अर्पण करे। ताम्बूल भी प्रणव से दे। फिर स्फटिक मणि से सदृश, निष्कलंक, सर्व देवों के कारण, सर्व लोक मय, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन्द्रादि तथा ऋषि गणों के अगोचर, वेद वेदज्ञों के भी अगोचर, आदि अन्त से रहित, संसार रोग की औषध, ऐसा शिव तत्व प्रसिद्ध है जो शिव लिंग में अवस्थित है। प्रणव के द्वारा लिंग की मूर्धा पर पूजा करे, स्तोत्र का जप करे और विधि पूर्वक नमस्कार करे, प्रदक्षिणा करे। विधि पूर्वक पुष्पों को चरणों में बिखेर कर देवेश का आत्मा में आरोप करे।

इस प्रकार संक्षेप में लिंगार्चन विधि मैंने कही। इसके बाद भीतरी लिंग पूजा भी आप से कहूँगा।

शिव की भीतरी पूजा का वर्णन

शैलादि कहने लगे—अग्नि रूप सूर्य रूप अमृत और बिंब तथा त्रिगुणात्मक प्रभु का रूप हृदय में धारण कर उसके ऊपर निष्कलंक सर्व स्वरूप अर्धनारीश्वर शिव का ध्यान पूजन करना चाहिए। ध्यान के द्वारा ध्येय परमेश्वर का ध्याता (यजमान) पूजन करे अन्यथा पुरुष (महेश्वर) का बोध नहीं हो सकता। पुर अर्थात् देह में शयन करने के कारण उस ब्रह्म को पुरुष कहा गया है और पूजन करने योग्य का यज्ञ द्वारा पूजन करने वाला यजमान कहा जाता है, ध्येय महेश्वर है, चिन्तन ध्यान है। निवृतिः (आनन्द) फल है। यथार्थ रूप से प्रधान पुरुष ईशान की प्राप्ति होती है। छब्बीस प्रकार का ध्येय और २५ प्रकार का ध्याता, १४ प्रकार के अव्यक्त और सात प्रकार के महतादि कहे हैं। महतत्व, अहंकार, पाँच तन्मात्रा, पाँच कर्मेन्द्री, पाँच ज्ञानेन्द्री, मन पंचभूत तथा

छब्बीसवाँ शिव है। यही ध्येय है। यही ब्रह्मा का भी कर्त्ता तथा भर्त्ता है। हिरण्य गर्भ को रुद्र ने ही जाना है। महेश्वर ही विश्वात्मा विश्वरूप है जैसे माता-पिता के बिना पुत्र नहीं होते वैसे ही महेश्वर के बिना तीनों जगत होते नहीं।

सनत्कुमार बोले—कि यदि परमात्मा महादेव कर्त्ता हैं तो कराने वाला भी वही है। नित्य शुद्ध परमेश्वर ही मुक्ति दाता तुमने कहा है।

शैलादि ने कहा—काल ही सब कुछ करता है, काल को भी कलन करने वाला निष्कल है। उसके कर्म से ही जगत प्रतिष्ठित है। देव देव महेश्वर की अष्ट मूर्ति यह सब जगत है। बिना आकाश के जगत नहीं, बिना पृथ्वी के भी नहीं, बिना आयु के, जल के, तेज के बिना, यजमान के बिना सूर्य और चन्द्रमा के बिना जगत नहीं। सो यह सब उसके शरीर हैं। विचार से सब चराचर स्थूल जगत शिव का ही रूप हैं। सूक्ष्म रूप का वर्णन करने में तो मन वाणी भी थक कर लौट आती है अर्थात् वर्णन नहीं कर सकती। उस ब्रह्म के आनन्द को जानने वाला किसी से नहीं डरता। शिव के आनन्द को जानकर निर्भय होना चाहिए। रुद्र की विभूतियों को सर्वत्र जान कर 'यह सब रुद्र है' ऐसा तत्व दर्शी मुनि कहते हैं। सर्व ब्रह्म का हेतु तथा मोक्ष का हेतु आनन्द है। सो रुद्र के

विषय में सुनिष्ठा रौद्री कहती है। इसी प्रकार इन्द्र में ऐन्द्री, सोम में सोम्या, नारायण में नारायणी तथा सूर्य और अग्नि में जाननी चाहिए।

हे विप्रो! यह चराचर ब्रह्ममय है। इसको जानकर चराचर विभाग त्याज्य, ग्राह्य, कृत्य, अकृत्य सब त्याग देना चाहिये। जिसकी ऐसी स्थिति होती है उसी तृप्तात्मा की ब्राह्मी स्थिति है अन्यथा नहीं। सो इस प्रकार अभ्यन्तरार्चन मैंने तुमसे कहा। अभ्यन्तरार्चक नमस्कार आदि से सदा पूजनीय है। चाहे वे विरूप विकृत कैसे भी हों, निन्दनीय नहीं, वे ब्रह्मवादी हैं। विशेषज्ञों को भी आभ्यंतर पूजा की परीक्षा नहीं करनी चाहिये। निन्दा करने वाले दुःखी होते हैं। जैसे दारुवन में रुद्र की निन्दा करने वाले मुनि दुःखी हुए थे। तिससे ब्रह्म ज्ञानी को सदा नमस्कार करना चाहिए।

श्वेत मुनि द्वारा मृत्यु पर जय पाना

सनत्कुमार बोले—हे विभो! दारूवन स्थित तपस्वियों का जो वृत्तान्त है उसे सुनने की हमारी इच्छा

है। दारूवन में प्राप्त भगवान नीललोहित ब्रह्मचारी दिगम्बर रूप से प्राप्त हुए, सो वृत्तान्त कहिये।

सूतजी बोले—सनत्कुमार के ऐसे वचन सुनकर शैलादि बोले—मुनि लोग स्त्री, पुत्र और अग्नि सहित देव देव महादेव के प्रसन्नार्थ दारूवन में घोर तप कर रहे थे। तब प्रसन्न हुए जगन्नाथ वृषभध्वज प्रवृत्ति लक्षण ज्ञान जानने के लिए, निवृत्ति लक्षण ज्ञान की प्रतिष्ठा के लिए, दारूवन वासी मुनियों की परीक्षा से लीला करने के लिए, विकट रूप बनाकर दिगम्बर तीन नेत्र, दो हाथ, कृष्ण शरीर वाले होकर दारूवन में गए और वहाँ मन्द-मन्द मुस्कान से स्त्रियों में कामदेव की उत्पत्ति कराने, गान तथा भ्रूविलास करने लगे। कामदेव को नाश करने वाले शंकर जी मधुर आकृति वाले उस नारी समूहों में काम वृद्धि करने लगे। वन में उस विकृत मूर्ति को देखकर पतिव्रता स्त्रियाँ भी उन नीललोहित शंकर जी के पीछे-पीछे चलने लगीं और उनकी पर्णशाला (कुटिया) के द्वार पर जाकर खड़ी हो गईं। भगवान शंकर के मुख से हँसने की चेष्टा से वे सभी ऐसी चेतनाहीन होने लगीं कि उनके वस्त्राभूषण गिरने पर भी ध्यान नहीं था। कोई स्त्री शिव को देखकर घूम रही थी और कोई भौंहों को चढ़ा-चढ़ाकर विलास करने लगीं। कोई नारी जिसके वस्त्र तथा कौंधनी गिर गई हैं, हँसती

हुई गान करने लगीं। कोई जिनके नवीन वस्त्र गिर रहे हैं, अपने कंकणों को विचित्र विचित्र बजाकर गान करने लगीं। कोई गा रही है, कोई नाच रही है, कोई धरातल पर गिर पड़ी, कोई हाथी की तरह बैठ गई।

परस्पर हँसती हुई, आलिंगन करती हुई शंकर के मार्ग को रोकती अति निपुणता करने लगीं। कोई पूछने लगी—आप कौन हैं? कोई बोली—बैठ जाओ? कहाँ जा रहे हो? प्रसन्नचित्त से कहने लगीं—हम पर ही प्रसन्न हो जाइये।

शंकर जी उनके वचन सुनकर शुभ अशुभ कुछ भी नहीं बोले। तब उनके पति मुनीश्वर अपनी स्त्रियों को व्याकुल देखकर तथा शंकर जी को देखकर कठोर वचन बोलने लगे। उनका तप शंकर के आने पर इस प्रकार अस्त हो गया, जिस प्रकार सूर्य के उदय होने पर आकाश में तारे नाश को प्राप्त हो जाते हैं। सुना जाता है कि ऋषि के शाप से ब्रह्मा का यज्ञ नाश हो गया था और भृगु के शाप से विष्णु को भी १० बार अपना शरीर धारण करना पड़ा था। गौतम के शाप से इन्द्र के व्रषण हो गए।

ऋषियों के शाप से वसुओं का गर्भ में वास हुआ, ऋषियों के ही शाप से राजा नहुष सर्प योनि को प्राप्त हुआ। हरि भगवान का निवास स्थान क्षीर सागर भी ब्राह्मणों ने अपेय कर दिया। परन्तु बाद में भगवान हरि

ने काशी में भगवान शंकर को दूध और अमृत से स्नान कराकर मुनि और ब्रह्मा के साथ उनको अभिषेक किया और क्षीर सागर को पूर्ववत कराया। मांडव्य ऋषि ने धर्म को श्राप दिया तथा दुर्वासा ने कृष्ण जी सहित यादवों को भी श्राप दिया। राम को अनुज सहित दुर्वासा का श्राप हुआ। इस प्रकार ये तथा अन्य बहुत से राजा ब्राह्मणों के वश में होंगे, परन्तु शिव किसी के वश में नहीं हुए।

इस प्रकार वे ब्राह्मण (मुनीश्वर) शंकर की माया से वशीभूत होकर शंकर जी को न जानकर कठोर वचन बोलने लगे। तब उसी क्षण शंकर जी अन्तर्ध्यान हो गये। ब्राह्मण भयभीत चित्त वाले हो गये तथा दारूवन से ब्रह्मा जी के पास गये। उन्हें दारूवन का सब वृत्तान्त सुनाया। तब ब्रह्मा क्षण मात्र ध्यान कर उठकर हाथ जोड़ शिव को प्रणाम करके कहने लगे—हे ब्राह्मणो! तुम भाग्यहीन हो जो अति उत्तम निधि को प्राप्त कर त्याग दिया। दारूवन में जो लिंगी विकृत आकार का आप लोगों ने देखा, वह साक्षात् परमेश्वर शिव ही था। गृहस्थों को अतिथियों की निन्दा नहीं करनी चाहिए। चाहे वे सुरूप हों या कुरूप हों, चाहे वे मलिन हों और अपण्डित हों। पूर्व में सुदर्शन नामक ब्राह्मण ने अतिथि पूजा से ही काल को जीत लिया था। गृहस्थों के भूमि

पर अतिथि पूजन के सिवाय तारने का दूसरा कोई उपाय नहीं है।

सुदर्शन ने पूर्व प्रतिज्ञा की और अपनी भार्या से कहा—हे सुभगे, हे सुव्रते! मेरे वचन सुनकर तुझको गृह पर आये अतिथियों का कभी अपमान नहीं करना चाहिए। सभी अतिथि शिव रूप ही हैं। इससे अपने शरीर को भी समर्पण करके अतिथि पूजा करनी चाहिए। भार्या पतिव्रता थी, पति की आज्ञा शिरोधार्य कर अतिथि सेवा करती रही। एक दिन साक्षात् धर्म ही उन दोनों की श्रद्धा की परीक्षा करने को ब्राह्मण रूप धरकर उनके घर पर आया। उस ब्राह्मणी ने पूजा की सब सामग्री से उस विप्र का पूजन भली प्रकार किया। भली प्रकार पूजा गया वह ब्राह्मण उस सुदर्शन की पत्नी से बोला—हे भद्रे! अन्नादि सामग्री की आवश्यकता नहीं, तू अपना शरीर ही अर्पण कर दे। लज्जा से युक्त वह पतिव्रता पति की आज्ञा का ध्यान करके नेत्र मूंद कर उसके पास चली और अपना शरीर उस ब्राह्मण को निवेदन कर दिया। उसी समय उसका पति सुदर्शन द्वार पर आया और बोला—हे सुभद्रे! आओ, कहाँ गई हो, तब उस समय वह अतिथि बोला—हे सुदर्शन! तुम्हारी भार्या के साथ मैं मैथुन में लिप्त हूँ। हे विप्र! सुरत के अन्त में मैं सन्तुष्ट होऊँगा। सुदर्शन बोला—हे विप्र! यथा कामना

इसका भोग करो, मैं आ रहा हूँ। ऐसा सुनकर धर्मराज ने प्रसन्न होकर अपना स्वरूप दिखाया और इच्छित वरदान देकर बोले—हे विप्रेन्द्र! यह सुशोभना मैंने मन से भी नहीं भोगी, इसमें तुम सन्देह मत करो। मैं तुम्हारी श्रद्धा जानने के लिए ही यहाँ आया था। इस तरह के धर्म से तुमने मृत्यु को भी जीत लिया है। अहो तप का कैसा प्रभाव है। ऐसा कहकर धर्मराज चले गए।

इसलिए हे भाग्यहीन ब्राह्मणो! अतिथि सब प्रकार से पूजनीय होता है। तुमने अतिथि रूप शंकर का अपमान किया है, उन्हीं की शरण में जाओ। ब्रह्मा के ऐसे वचन सुनकर वे ब्राह्मण बोले—हे महाभाव! हमने जीवन की अपेक्षा न करके शिव के दर्शन किए और अनिन्द्य शिव की निन्दा की और श्राप भी दिया। पर श्राप की शक्ति हमारी उनके दर्शन मात्र से कुंठित हो गई। अब हमको क्रम से संन्यास का उपदेश करो, तब हम देव देव शिव के दर्शन कर सकेंगे।

ब्रह्मा जी बोले—पहले गुरु द्वारा बारह वर्ष तक वेदाध्ययन करके फिर अर्थ विचार कर धर्म का ज्ञान करके स्त्री (पत्नी) की प्राप्ति करे। श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न करके और उन पुत्रों को अनुकूल वृत्ति में लगाकर अग्नि होत्रादि यज्ञों द्वारा यज्ञेश्वर भगवान का पूजन करके वन में जाकर १२ वर्ष १ मास अथवा १२ दिन तक मुनि दूध पान

करता हुआ अग्नि में सब देवों का पूजन करके मन्त्र द्वारा यज्ञ पात्रों को भी अग्नि में हवन कर दे। मिट्टी के पात्रों को जल में त्याग धातु के पात्रों को गुरु को अर्पण कर दे। धन से ब्राह्मणों को दान दे, तब गुरु को प्रणाम कर मुनि को संन्यास धारण करना चाहिये। चोटी सहित केशों को त्याग दे, यज्ञोपवीत (जनेऊ) भी त्याग कर दे। भू स्वाहा इत्यादि मन्त्र से ५ आहुति जल में छोड़ कर इसके बाद वह यति शिव रूप हो मुक्ति का विचार करे। व्रत करके, जल पीकर, पर्णावृत्ति द्वारा, दूध द्वारा अथवा फल द्वारा जीवन बिताता हुआ १ वर्ष या ६ मास होने पर प्रस्थान करता चलाचल शरीर का अन्त करके शिव सायुज्य मोक्ष को प्राप्त होता है।

इस प्रकार की भक्ति से शिव भक्त शीघ्र ही मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। रुद्र के भक्त को दान से शुभ व्रतों से यज्ञों से विविध प्रकार के होमों से अनेक प्रकार के शास्त्रों और वेदाध्ययन से क्या प्रयोजन है? महात्मा श्वेत ने तो भक्ति के द्वारा ही मृत्यु को जीत लिया था। ऐसी ही भक्ति परमात्मा शंकर में तुम सबकी ही हो।

श्वेत मुनि की कथा

शैलादि बोले—ब्रह्मा ने जब ब्राह्मणों से इस प्रकार कहा तो उन्होंने श्वेत की पुण्य कथा को पूछा, तब ब्रह्मा जी ने उनसे कहा—

श्वेत नाम के मुनि पर्वत की गुफा में 'नमस्ते रुद्र मन्येव' इस रुद्राष्टाध्यायी से शिव की स्तुति करने लगे। महातेजस्वी काल श्वेत मुनि को लेने के लिए उसके पास आया। श्वेत इस काल को देखकर शंकर भगवान की स्तुति करने लगा। त्रयम्बक, सुगन्धि, पुष्टिवर्धन इत्यादि नामों से शिव को पुकार कर कहने लगे कि मृत्यु मेरा क्या कर सकता है मैं मृत्यु का भी मृत्यु हूँ। यह देखकर काल बोला—हे श्वेत आ, आं, इस पूजा से कुछ फल नहीं होगा। रुद्र विष्णु कोई भी मेरे द्वारा पकड़े हुए तुझको अब बचा नहीं सकता।

जिसको लेने के लिये मैं उठ खड़ा हुआ, उसको क्षण मात्र में यमलोक को पहुँचा देता हूँ। अब तू आयु रहित है और मैं तुझे लेने को आया हूँ, तैयार खड़ा हूँ। उसके इस प्रकार भयंकर वचन सुनकर हा रुद्र, हा रुद्र, इस प्रकार कह के मुनि विलाप करने लगा। महादेव को और काल को देखकर श्वेत मुनि बोला—हे काल! तू मेरा क्या कर सकता है, यह मेरे नाथ वृषभध्वज हैं। इस

लिंग में सर्व देवमय शंकर मौजूद हैं। मुझ जैसे शिव भक्तों का तू क्या कर सकता है, जैसा तू आया है, वैसा ही चला जा।

तीक्ष्ण दाढ़ वाले भयंकर काल ने श्वेत मुनि के ऐसे वचन सुनकर पाश हाथ में लेकर सिंह की तरह गर्जना करके मुनि को पाश में बाँध लिया और बोला—हे श्वेत! तुझे यमलोक को ले जाने के लिए मैंने पाश में बाँध लिया। देव देव रुद्र ने क्या किया? तेरी भक्ति और पूजा ने क्या फल दिया? इस लिंग में स्थित रुद्र बिना चेष्टा वाला है, कैसे पूजनीय है। फिर सदाशिव उस द्विज को मारने के लिए आये हुए इस काल को देखकर हँसते हुए और तीन रूप में (अम्बा, गणपति और नन्दी) प्रकट हुए। उन्हें देखकर काल ने भय से क्षण मात्र में ही जीवित मुनि को छोड़ दिया और मुनि के समीप में ही ऊँचे स्वर से शब्द करता हुआ गिर पड़ा और काल के भी काल शिव को देखकर स्वयं मर गया। देवगण ऊँचे स्वर से महेश्वर, अम्बा की स्तुति करने लगे तथा शिव की मूर्धा पर फूलों की वर्षा करने लगे।

काल को मरा हुआ देखकर विस्मित हुए शैलादि ने शंकर को प्रणाम किया। शंकर भगवान भी ब्राह्मण पर अनुग्रह करके तथा काल को भस्म करके क्षण मात्र में अपने गूढ़ शरीर में प्रवेश कर गये। इसलिए हे ब्राह्मणो!

मृत्युञ्जय शंकर की पूजा करनी चाहिये। वे कलयुग में सबको भक्ति और मुक्ति देने वाले हैं।

हे ब्राह्मण! अधिक क्या कहूँ? संन्यास धारण करके शिव का भक्ति सहित पूजन करके शोक रहित हो जाओगे।

शैलादि बोले—ब्रह्मा से इस प्रकार कहे गए वे ब्राह्मण पूछने लगे किस तप से, किस यज्ञ से, किस व्रत से शिव में भक्ति होती है। ब्रह्मा ने कहा कि हे ब्राह्मणो! न दान से, न तप से, न व्रतों से, न योग शास्त्रों से भक्ति होती है किन्तु भगवान की प्रसन्नता से भक्ति होती है। यह सुनकर मुनि लोग बड़े प्रसन्न हुए तथा स्त्री पुत्रों सहित ब्रह्मा को प्रणाम किया। इस प्रकार पशुपति की भक्ति धर्म, अर्थ, काम के देने वाली है। विजय देने वाली मृत्यु से जय प्रदान करने वाली है। पहले दधीचि शिव भक्ति से देवताओं के साथ हरि को जीतकर क्षुप को पैर से मारता हुआ और वज्र के लिए अस्थि को प्राप्त किया।

अतःगत आयु श्वेत मुनि ने भी महादेव की कृपा से मृत्यु को जीत लिया था।

मुनि कृत शिव स्तोत्र

सनत्कुमार बोले—शिव की कृपा से देव दारूवन में रहने वाले मुनीश्वर शिव की शरण में प्राप्त हुए, वह हमसे कहो।

शैलादि बोले—ब्रह्मा जी उन ऋषियों से कहने लगे—ब्रह्मा बोले—कि महेश्वर ही जानने योग्य हैं। उनसे परे और कोई नहीं है। देवता, ऋषि, पित्रीश्वरों के स्वामी वही हैं। सहस्त्र युग पर्यन्त प्राणियों की प्रलय में कालरूप हो सबका संहार करते हैं। वही प्रजा की रचना करते हैं। वही श्रीवत्स आदि लक्षणों से युक्त विष्णु हो सबका पालन करते हैं। वही सतयुग में योगी रूप में, त्रेता में यज्ञ रूप में, द्वापर में कालाग्नि रूप में, धर्मकेतु रूप में अवतरित होते हैं। पण्डित लोग उसका ही ध्यान करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश उसी ब्रह्म की मूर्ति कही गई हैं।

ब्राह्मण क्रोध रहित हो इन्द्रियों को वश में करके उसकी आराधना करते हैं। यथायोग्य सर्व लक्षणों से युक्त लिंग का पूजन करते हैं। ब्राह्मण वेदी पर स्थापित स्वर्णमयी, रजतमयी, स्फटिकमयी, ताम्रमयी, शैलमयी, चतुर्कोणमयी, वर्तुलाकार त्रिकोणमयी, आदि की स्थापना करके कलश युक्त उसकी पूजा करते हैं। सुवर्ण

सहित बीज मन्त्र से या वेद मन्त्रों सहित पाँछा पवित्रियों से शिव लिंग का अभिषेक करते हैं। हे ऋषियो! समाहित चित्त होकर भाई बन्धु पुत्रों के सहित शूल पाणि शिव का पूजन करो तथा हाथ जोड़कर प्रणाम करो तब देव देव का दर्शन प्राप्त होगा। उसके दर्शन से सब अज्ञान और अधर्म का नाश हो जायेगा। ऐसा सुनकर ऋषियों ने ब्रह्मा की परिक्रमा की और शिव की आराधना के लिए देव दारूवन में चले गए।

वहाँ विचित्र गुफाओं में नदियों के तट पर, कोई जल पर, कोई आकाश में, कोई अंगूठे पर ही खड़े होकर, कोई वीरासन से, कोई मृगचर्य्या से घूमकर सबने एक वर्ष तक तपस्या की। तब वर्ष के अन्त में उनकी प्रसन्नता के लिए कृतयुग में हिमालय पर प्रसन्न होकर भस्म शरीर में लगाये हुए नग्न, विकृति आकार वाले, उल्का हाथ से लेकर लाल पीले नेत्र युक्त हँसते, गाते, नाचते, आश्रमों में भीख माँगते हुए माया रूपी शिव प्रगट हुए। तब मुनि स्तुति करने लगे और गन्ध पुष्प मालाओं से जल से पूजकर स्त्री पुत्रों सहित ये ब्राह्मण शिव से बोले—

हे देवेश! कर्म मन वाणी से जो कुछ भी आपका अज्ञान से अपमान हुआ उसे क्षमा कीजिये। आपके चरित्र ब्रह्मादि से भी दुर्जेय हैं जो हो सो हो आपको नमस्कार

है। ऐसा कहकर भगवान की स्तुति करने लगे—

हे भवरूप! भव्यरूप, भूतों के पति आपको नमस्कार है। संहार करने वाले, अव्यय, व्यय, गंगाजल धारण करने वाले, त्रिशूल वाले, कामदेव को जलाने वाले, अग्नि स्वरूप, गणपति, शतजीभ वाले आपको नमस्कार है। स्थावर जङ्गम रूप सब जगत आप से ही उत्पन्न होता है, आप ही इसका पालन और संहार करते हो। हे भगवन्! प्रसन्न होइये। ज्ञान या अज्ञान पूर्वक जो भी मनुष्य कुछ करता है वह सब आपकी माया है। इस प्रकार प्रसन्न आत्माओं से मुनियों ने शिव की स्तुति की और तप से युक्त हम आपको पहले रूप में ही देखें, ऐसी याचना की। तब प्रसन्न होकर भगवान ने उनका सुन्दर त्र्यम्बक रूप देखने के लिए दिव्य दृष्टि प्रदान की। उस दिव्य दृष्टि को प्राप्त करके दारूवन वाले मुनियों ने शिव के दर्शन प्राप्त किये और अपरा स्तुति की।

शिव की अपरा स्तुति

ऋषि बोले—हे दिगम्बर! हे नित्य! हे कृतान्त! हे शूल पाणि! हे विकट! हे कराल! हे भयंकर मुख वाले!

हे प्रभो! आपको नमस्कार है।

आपका कोई रूप नहीं फिर भी आप सुन्दर रूप वाले हो। हे विश्वरूप! आपको नमस्कार है। हे रुद्र! आप ही स्वाहाकार हो, आपको नमस्कार है। सभी देहधारियों के आप रक्षक हो और स्वयं ही प्राणियों की आत्मा हो। हे नीलकण्ठ! हे नील शिखण्ड! हे अंगों में भस्म लगाने वाले! हे नीललोहित! आपको नमस्कार है। हे सर्व प्राणियों के आत्मा रूप! आपको सांख्य शास्त्र पुरुष कहकर उच्चारण करता है। पर्वतों में आप मेरु पर्वत हो, नक्षत्रों में आप चन्द्रमा हो, ऋषियों में वशिष्ठ तथा देवताओं में वासव (इन्द्र) हो, वेदों में ॐकार हो, जंगली पशुओं में हे परमेश्वर! आप सिंह हैं और हे लोक पूजित प्रभो! ग्रामीण पशुओं में आप बैल रूप हो।

वर्तमान में भी आप जिस जिस रूप में होंगे उन उन स्वरूपों को भी हम सब देखें, जैसा कि ब्रह्मा जी ने आपको बताया है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, विषाद आदि से रहित आपको नमस्कार है। आप संहार के समय जिस अग्नि को प्रकट करते हो, उस विकृत अग्नि से ही समस्त विश्व भस्म होता है और उसी की सभी लोक अर्चना करते हैं। उसी अग्नि से काम, क्रोध, लोभादिक उपद्रव तथा स्थावर जङ्गम आदि सभी प्राणी मात्र जल जाता है। उस कालाग्नि को हम नमस्कार करते हैं। हे

सुरेश्वर! आप उस अग्नि से हमारी रक्षा कीजिये। हे महेश्वर! हे महाभाग! हे शुभ देखने वाले! लोकहित के लिए सभी प्राणियों की रक्षा कीजिए। हे प्रभो! हमको आज्ञा प्रदान कीजिए। हम आपकी आज्ञा का पालन करेंगे। करोड़ों प्राणियों के मध्य करोड़ों रूपों में भी आपको नहीं पहचाना जा सकता। अतः हे देव देव! आपको नमस्कार है।

पूजा से प्रसन्न हुए शिवजी के द्वारा यति निन्दा का निषेध

नन्दीश्वर बोले—मुनीश्वरों की स्तुति सुनकर प्रसन्न हुए महेश्वर उनसे इस प्रकार कहने लगे—आप लोगों द्वारा स्तुति से जो मेरा कीर्तन करता है या इस स्तवन को सुनता है, हे मुनीश्वरो! वह मुझ गणपति को प्राप्त करता है। हे ब्राह्मणो! मैं भक्तों के लिये हितकारी तथा पुण्य वचन कहता हूँ। समस्त विश्व में जो स्त्री लिंग है, वह मेरे शरीर से उत्पन्न देवी स्वरूप है। और जो पुलिंग है, वह सब मेरा ही स्वरूप है। दोनों के बीच मेरा ही स्वरूप जानना चाहिए। हे विप्रो! इसमें संशय नहीं होना चाहिए।

हे मुनियो! दिगम्बर, भस्म लगाये, बालकों के समान उन्मत्त ब्रह्मवादी यती की कभी निन्दा नहीं करनी चाहिए। भस्म लगाने से उनके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। जितेन्द्री 'ध्यान परायण' ब्रह्मवादी होकर वे महादेव में ही निरत रहते हैं। वाणी, मन तथा शरीर से वे महादेव की ही अर्चना करते रहते हैं। अन्त में वे रुद्र लोक को प्राप्त करते हैं तथा पुनः लौटते नहीं। इसलिए अव्यक्त और व्यक्त रूप लिंग में सदा तत्पर, व्रती, भस्म लगाये हुए, सिर मुड़ाये हुए इन यती लोगों की जो स्वयं ही विश्वरूप हैं उनकी निन्दा नहीं करनी चाहिये तथा उनकी किसी बात का उल्लंघन भी नहीं करना चाहिए। उनको देखकर जो हँसता है या अधिक बोलता है वह मूढ़ महादेव की ही निन्दा करता है और जो नित्य इनकी पूजा करता है, वह मुझ शंकर जी की ही पूजा करता है।

इस प्रकार से महादेव जी संसार के हित की कामना से युग युग में भस्म लगाये हुए क्रीड़ा करते रहते हैं। इस अतुल महाभय को नाश करने वाले शिव के परम पद को जानकर शिर से शिव को नमस्कार करते हैं, वे संसार में मोह चिन्ता आदि से छूट जाते हैं।

अतः यह सुनकर सभी ब्राह्मणों ने प्रसन्न होकर सुगन्धित जल से शुद्ध कुशा और धूप और पुष्प से मिश्रित जल से भरे हुए बड़े-बड़े घड़ों के द्वारा शिव को अनेकों

स्वर सहित मन्त्रों से अभिषेक (स्नान) कराया है। हे महादेव! हे देवाधिदेव! काले मृग का चर्म धारण करने वाले, अर्धनारीश्वर सर्प का जनेऊ पहनने वाले, विचित्र कुण्डल, माला आभूषण धारण करने वाले, हे शंकर जी! आपको नमस्कार है। इस प्रकार स्वर से स्तुति करने लगे।

तब मुनीश्वरों से उत्पन्न हुए महादेव जी बोले—हे मुनियो! मैं तुमसे प्रसन्न हूँ। आप वर माँगिये। तब सभी मुनि लोग महेश्वर को प्रणाम करने लगे। भृगु, अङ्गिरा, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, अणि, सुकेश, पुलस्त्य, पुलह, ऋतु, मरीचि, कश्यप, कण्व, सम्वर्त आदि सभी मुनि कहने लगे कि हे प्रभो! आप सेव्य हैं तथा असेव्य भी हैं, ऐसा यह स्वरूप क्या है इसको जानने की हमारी इच्छा है।

उनकी इस प्रकार की वाणी को सुनकर परमेश्वर भगवान हँसते हुए उनसे निम्न प्रकार कहने लगे—

योगियों की प्रशंसा का वर्णन

श्री भगवान बोले—बार बार अग्नि के द्वारा यह

स्थार जङ्गम संसार जलाया गया तब यह उत्तम भस्म बन गया। भस्म के द्वारा मैं वीर्य धारण करके प्राणियों का सिंचन करता हूँ। अग्नि कार्य करके जो मेरे वीर्य रूपी भस्म से 'त्रियांशु' इत्यादि मन्त्रों से भस्म धारण करता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है। भासित होने, शिव को पैदा करने से और पापों का भक्षण करने से भस्म कहते हैं। उष्मपा (गरम वस्तु खाने वाले) पित्रीश्वर होते हैं, देवता अमृत पीने वाले हैं। अग्नि सोम रूप है। मैं महा तेजस्वी अग्नि हूँ और सोम रूपी अम्बिका है। मैं पुरुष रूप हूँ और सोम (अम्बिका) प्रकृति है। इसलिए भस्म मेरा वीर्य कहलाता है। अपने वीर्य को मैं शरीर में धारण करता हूँ। लोक में रक्षा के लिए अशुभ को नाश करने के लिए गृहों में सूतिका आदि की रक्षा करता हूँ, जो जितेन्द्रिय पुरुष मेरे भस्म से स्नान करते हैं और वे मेरे पास आते हैं और संसार में नहीं लौटते। यह पाशुपत व्रत कपिल योग कहा है। शेष आश्रमियों को पीछे शम्भु ने रचा है। लज्जा, मोह, भय आदि वाली इस सृष्टि को मैंने ही रचा है।

देवता मुनि सभी नग्न उत्पन्न होते हैं। संसार में सभी मनुष्य भी बिना कपड़े के पैदा होते हैं। वस्त्र से ढका हुआ आदमी यदि जितेन्द्रिय नहीं है तो वह नग्न ही है। जितेन्द्रिय पुरुष वस्त्र बिना भी नंगा नहीं है, क्योंकि वस्त्र कारण

नहीं है। क्षमा, धैर्य, अहिंसा, वैराग्य या कामना की तुल्यता ही उत्तम वस्त्र है।

भस्म के स्नान से लिप्त है मन जिसका, ऐसा शिव का ध्यान करता है उसके हजारों अकार्य भी भस्म हो जाते हैं। जैसे अग्नि अपने तेज से वन को जलाती है उसी प्रकार भस्म सभी पापों को जलाती है। इसलिए तीनों काल में जो भस्म से स्नान करता है वह शिव की गाणपत्य पदवी को पाता है। जो भस्म लगाकर ध्यान करता है वह उत्तर मार्ग से आर्य लोगों के उत्तम वाम अमरत्व को पाता है। जो दक्षिण मार्ग का आश्रय करके श्मशान का सेवन करते हैं वह अणिमा, गरिमा, आदि, आठ सिद्धियों को प्राप्त करते हैं। इन्द्रादिक देवता 'कामिक व्रत' को करने से ऐश्वर्य को प्राप्त करते हैं। अतः मद, मोह को त्याग राग, द्वेष, रजोगुण, तमोगुण से रहित पाशुपत व्रत को धारण करना चाहिए। पाशुपत व्रत सब पापों को नाश करने वाला है। जो शुद्ध होकर जितेन्द्रिय होकर इसको पढ़ता है, वह सब पापों से मुक्त होकर रुद्र लोक को प्राप्त होता है। वे सब वशिष्ठ आदिक मुनीश्वर यह सुनकर भस्म से सफेद शरीर वाले होकर कल्पान्त तक रुद्र लोक में निवास करते रहे। इसलिए योगी लोग, विकृताङ्ग हों, मलिन हों या रूप वाले हों, उनकी निन्दा नहीं करनी चाहिए, बल्कि पूजा करनी चाहिए। हे

ब्राह्मणो! अधिक क्या शिव के भक्त शिव के समान ही पूज्य हैं, इसमें संदेह नहीं है। दधीचि जैसे देव, देव नारायण को जीतकर शिव की भक्ति से मुक्त हो गया था। इसलिए सब प्रकार से भस्म से दिव्य शरीर वाले मुनि लोग चाहे वे जटा वाले हों या मुण्डित हों, सभी की कर्म मन वाणी से उनकी पूजा करनी चाहिए।

क्षुप पराभव वर्णन

सनत्कुमार बोले—हे सुव्रत! राजा क्षुप को दधीचि ने जनार्दन को जीतकर पैर से किस प्रकार मारा तथा महादेव जी से वरदान प्राप्त किया है। हे शैलादि! जैसे आपने मृत्यु को जीता है, वह भी इससे कहो।

शैलादि बोले—ब्रह्मा का पुत्र महा तेजस्वी क्षुप नाम का राजा था जो दधीचि मुनि का परम मित्र था। उन दोनों में विवाद चलता रहा कि क्षत्रिय श्रेष्ठ हैं या ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं। आठ लोकपालों से तेज को राजा धारण करता है। अग्नि, इन्द्र, वरुण, यम, निरति, वायु, सोम, कुबेर के तेज को धारण करता है अतः राजा ईश्वर है। मेरा अपमान नहीं करना चाहिए। हे च्यवन की सन्तान दधीचि!

हमारी सर्वदा पूजा करनी चाहिए।

क्षुप के ऐसे मत को सुनकर दधीचि ने आत्म गौरव से क्षुप राजा के सिर में बायें हाथ का घूंसा मारा तथा क्षुप ने दधीचि के वज्र मारा। वज्र से ताड़ित ब्राह्मण पृथ्वी पर गिर पड़ा। दुःख से उस समय उसने शुक्राचार्य को याद किया। शुक्राचार्य योगबल से दधीचि के हृदय में प्रवेश करके उसको जीवित करके कहने लगे—हे दधीचि! तुम उमापति शंकर का पूजन करो। उनकी कृपा से तुम अवध्य होगे। मृतसंजीवनी विद्या भी शिव की ही है वह तुझे देता हूँ। त्रयम्बक का मैं यजन करता हूँ जो त्रैलोक के भी पितर हैं तथा मण्डल के भी स्वामी हैं।

तीन तत्वों के, तीन अग्नि के, तीन भूतों के, तीन वेदों के महादेव सुगन्धि और पुष्टि वर्धन हैं। पुष्पों में सूक्ष्म गन्ध के समान वह महेश्वर सुगन्धि के समान हैं। हे ब्राह्मण! पुरुषरूप शिव की प्रकृति पुष्टी रूप है। महत् से लेकर विशेषान्त तक तत्वों के विष्णु ब्रह्मा तथा मुनियों के इन्द्रादि सभी देवों के पुष्टि वर्धन भी वही हैं। उस अमृत रूप देवी को स्वाध्याय तप आदि से पूजते हैं। सत्य के द्वारा उससे मृत्यु पाश से मुक्ति होती है। उर्वासक की तरह उससे बन्ध और मोक्ष होता है। मृत्यु संजीवन मन्त्र यह शिवजी से प्राप्त किया है। इसको जपकर, इसके द्वारा हवन कर, अभिमन्त्रित जल पीकर दिन रात

शिवलिंग का ध्यान करके मृत्यु का भय नहीं रहता।

उसके ऐसे वचन सुनकर तप के द्वारा शंकर का आराधन करके दधीचि मुनि ने वह वज्र की हड्डी तथा अवध्यता तथा अदीनता प्राप्त की। तब राजा क्षुप को मूर्धा में पैर से ताड़न किया। क्षुप ने भी वज्र को दधीचि की छाती में मारा। महात्मा दधीचि का वज्र ने कुछ भी नहीं बिगाड़ा क्योंकि परमेश्वर के प्रभाव से वह वज्र के से शरीर वाला हो गया था।

उस समय क्षुप ने दधीचि के अवध्यत्व तथा अदीनता को देखकर कमल नेत्र भगवान मुकुन्द को याद किया।

क्षुप दधीचि संवाद वर्णन

नन्दीश्वर बोले—राजा क्षुप की पूजा से सन्तुष्ट भगवान विष्णु शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुए प्रकट हुए। पीताम्बरधारी भगवान का दर्शन करके स्तुति करने लगे—तुम आदि देव हो, अनादि हो, प्रकृति भी तुम हो, तुम्हारे द्वारा ही ब्रह्मा और रुद्र प्रकट होते हैं, तुम्ही साक्षात् विष्णु हो। सतत् तत्व, तन्मात्रा आदि आप में ही स्थित हैं। हे विष्णु जी! आपको नमस्कार है। सात

पाताल आपके पैर हैं, धरा जाँघ है, सात सागर वस्त्र हैं, दिशायें भुजायें हैं, नाभि आकाश है, वायु नाक है, सूर्य, चन्द्र नेत्र हैं। नक्षत्रादि आपके गले के आभूषण हैं। हे पुरुषोत्तम! मैं कैसे आपकी स्तुति करूँ।

शैलादि बोले—इस प्रकार सब पापों के नाश करने वाले विष्णु के इस स्तोत्र को जो श्रद्धा भक्ति से सुनता है, वह विष्णु लोक को जाता है। राजा क्षुप बोला—धर्मवेत्ता दधीचि नाम का प्रसिद्ध ब्राह्मण मेरा मित्र था। वह शंकर के अर्चन में तत्पर है इससे सबका अवध्य है। उसने वाम पैर से मेरी मूर्धा में अपमान सहित मारा है और मद से कहता है कि मैं किसी से नहीं डरता हूँ। अब जैसा मेरा हित हो सो करो मैं उसे जीतना चाहता हूँ।

शैलादि बोले—विष्णु, शिव के प्रभाव से दधीचि को अवश्य समझ कर बोले—कि ब्राह्मणों को मुझसे भय नहीं है विशेष करके रुद्र के भक्त तो सर्वदा अभय हैं, चाहे वे नीच ही हों। दधीचि की तो बात ही क्या है। इससे हे राजा! तेरी विजय नहीं हो सकती। हे राजेन्द्रव! देवताओं के साथ दक्ष के यज्ञ में मेरा विनाश होगा, देवताओं के साथ में पुनः उत्थान भी होगा। सो हे राजन! मैं दधीचि से विजय क.ा प्रयत्न करूँगा।

शैलादि बोले—क्षुप भगवान की बात सुनकर 'अच्छा ऐसा ही हो' कहने लगा। भगवान, दधीचि की

कुटिया में पहुँचे। ब्राह्मण का रूप धारण करके दधीचि से बोले—हे ब्रह्मर्षि दधीचि! शिव भक्ति में तत्पर हो मैं आपसे वरदान माँगता हूँ। आप देने के योग्य हो। तब दधीचि बोले—तुम्हारी इच्छा मैं जान गया तो भी मैं भय नहीं करता। आप विप्र के रूप में जनार्दन हो। भूत, भविष्यत, वर्तमान रुद्र की कृपा से सब जानता हूँ। आप ब्राह्मणपने को छोड़ दो। क्षुप ने तुम्हें पुकारा है। तुम्हारी भक्त वत्सलता को मैं जानता हूँ। शिव की अर्चना से मुझे कहीं भय नहीं है। यदि है, तो आप बताइये।

नन्दीश्वर बोला—ऐसा सुनकर विष्णु भगवान रूप छोड़कर हँसने लगे। भगवान बोले—हे दधीचि! तुम्हें भय नहीं है, तुम शिव के अर्चन में तत्पर हो। इसी से तुम सर्वज्ञ हो। परन्तु एक बार यह कह दो कि 'मैं' डरता हूँ, ऐसी मेरी आज्ञा मान लीजिये। विष्णु के कहने पर भी दधीचि ने फिर भी यही कहा कि मैं नहीं डरता। मुनि के यह वचन सुनकर विष्णु को क्रोध आ गया। चक्र को उठाकर भस्म करने के लिये मारने को तैयार हुये परन्तु विष्णु का वह चक्र कुण्ठित हो गया। तब दधीचि हँसकर बोले—हे भगवन्! अतीव दारुण यह सुदर्शन चक्र जो आपको प्रयत्न से प्राप्त हुआ है, वह शिव का ही है, इसलिए मुझे नहीं मार सकता। ब्रह्मास्त्र आदि से मारने का प्रयत्न करो।

शैलादि बोले—उसकी बातों को सुनकर विष्णु ने सब प्रकार के अस्त्र उस पर चलाये तथा सभी देवता विष्णु की सहायता करते रहे। दधीचि कुशाओं की मुष्ठि लेकर शंकर जी का स्मरण कर सब देवों पर कुशा फेंकने लगे। उनके सब अस्त्र व्यर्थ हो गए। देवता सब भाग गए। विष्णु ने अपने शरीर से लाखों दिव्य गण उत्पन्न किए। परन्तु मुनीश्वर उन्हें दग्ध कर देता था। तब विष्णु भगवान में, करोड़ों देवता, करोड़ों रुद्र, करोड़ों ब्राह्मण, आदि मुनीश्वर ने देखे। उन्हें देखकर दधीचि बड़े विस्मय को प्राप्त हुआ और तब दधीचि उनको इस प्रकार देखकर बोले—कि हे प्रभो! इस माया को छोड़ दो। आप मेरे शरीर में भी अपने सहित समस्त ब्राह्मण्ड को देखो। मैं तुम्हें दिव्य चक्षु देता हूँ। परन्तु इस माया से क्या, इसको छोड़ो प्रयत्न पूर्वक मुझसे युद्ध करो।

उसके ऐसे वचन सुनकर और अद्भुत महात्म्य को देखकर देवता सब भाग गये। नारायण को इस प्रकार निश्चेष्ट देखकर पद्मयोनि ब्रह्मा निराकरण करने लगे। तब विष्णु मुनीश्वर को प्रणाम करके वहाँ से चले गए।

क्षुप दुखातुर होकर दधीचि की पूजा करने लगा। हे दधीचि! मैंने तथा विष्णु भगवान और देवताओं ने जो अज्ञान से आपका तिरस्कार या अपमान किया उसको क्षमा कर प्रसन्न होइये। दधीचि यह सुन करके राजा को

तथा देवताओं को श्राप देने लगे—कि हे राजा! आप सभी देवता विष्णु सहित दक्ष के पुण्य यज्ञ में रुद्र के क्रोध से भस्म हो जायें। फिर राजा को देखकर दधीचि बोले—हे राजेन्द्र! विविध देवताओं के द्वारा पूज्य तथा राजाओं के द्वारा पूज्य ब्राह्मण बली और समर्थ हैं। ऐसा कहकर दधीचि अपनी कुटिया में चले गए और राजा भी प्रणाम करके लौट गया। तभी से यह तीर्थ स्थानेश्वर के नाम से प्रसिद्ध है। जो इस तीर्थ को प्राप्त होंगे वे शिव सायुज्य को प्राप्त होंगे। यही मैंने दधीचि और शिव का प्रभाव भी वर्णन किया। जो इस क्षुप राजा और दधीचि के आख्यान को सुनेंगे वह मृत्यु को जीतकर ब्रह्म लोक को प्राप्त होंगे। युद्ध में जो इसका कीर्तन करेंगें वह विजयी होंगे तथा मृत्यु का भय नहीं होगा।

शिवजी के द्वारा ब्रह्मा को वरदान

सनत्कुमार बोले—हे प्रभो! आपने उमापति महादेव को किस प्रकार प्राप्त किया यह सुनने की इच्छा है। सो आप कृपा पूर्वक कहिये।

शैलादि बोले—हे महामुनि! पूर्व काल में मेरे पिता

ने पुत्र की कामना से बहुत समय तक तपस्या की। तब तपस्या से सन्तुष्ट होकर इन्द्र प्रकट हुए और शैलादि से बोले—मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, वरदान माँगो। तब प्रणाम करके शिलाद ने कहा—हे भगवान! हे सहस्राक्ष! मुझे अयोनिज तथा मृत्यु से रहित पुत्र का वरदान दीजिए।

इन्द्र बोले—हे विप्र! मैं तुझे योनिज तथा मृत्यु से युक्त पुत्र तो दे सकता हूँ, परन्तु अयोनिज तथा मृत्यु से हीन पुत्र नहीं दे सकता। पद्म से उत्पन्न ब्रह्मा जी भी जो कि स्वयं ईश्वर हैं कमल की योनि से उत्पन्न हुए हैं वे भी मृत्यु से रहित नहीं हैं। करोड़ों वर्षों में कल्पान्त में वे भी अन्त को प्राप्त होते हैं। इसलिये हे विप्रेन्द्र! अयोनिज और मृत्यु से रहित पुत्र की आशा को छोड़ दो।

शैलादि बोले—इन्द्र की ऐसी बातें सुनकर मेरे पिता जिनका नाम शिलाद था, बोले—हे महाबाहो इन्द्र! भगवान अण्ड की योनि से, पद्म योनि से, ब्रह्मा तथा महेश्वर की योनि की बातें मैंने सुनी हैं।

नारद से मैंने सुना है कि दाक्षायणी ब्रह्मा से उत्पन्न दक्ष के ऐसा पुत्र उत्पन्न हुआ था। इन्द्र ने कहा—तुम्हारी यह संशय की बात है। मेघ वाहन कल्प में जनार्दन भगवान ने ब्रह्मा को उत्पन्न किया। दिव्य देवताओं को हजारों वर्ष तक विष्णु ने मेघ होकर शिव को धारण किया। शंकर ने ब्रह्मा के साथ उनको सृष्टि रचना की सामर्थ प्रदान

की। उस कला का नाम मेघवाहन हुआ। हिरण्यगर्भ तप के द्वारा शंकर को प्राप्त करके बोला—हे प्रभो! आपके वामांग से विष्णु तथा दक्षिणांग से उत्पन्न मैं हूँ। हे देव! हमारे ऊपर प्रसन्न होइये। इसके बाद ऊपर जल रूपी समुद्र में जहाँ सब प्रकार से अंधकार है अनंत भोगों वाले शंख, चक्रादि से युक्त सर्पों की शैया पर योग निद्रा में शयन करते हुए विष्णु भगवान का दर्शन किया।

ब्रह्मा के भौंहों के मध्य से विष्णु की उत्पत्ति हुई। उस अवसर पर रुद्र विकृत रूप धारण कर दोनों को वरदान देने के लिए वहाँ पहुंचे। शंकर को उन दोनों ने प्रणाम किया तथा स्तुति की, शिव भी ब्रह्मा विष्णु पर अनुग्रह करके वहाँ पर अन्तर्ध्यान हो गए।

ब्रह्मा की सृष्टि का कथन

शैलादि बोले—महेश्वर के चले जाने पर विष्णु भगवान पद्मयोनि ब्रह्मा से बोले—जगन्नाथ शंकर भगवान हम दोनों के तथा अखिल विश्व के सर्वस्व हैं। मैं उनके वामाँग से तथा आप दक्षिण अंग से उत्पन्न हैं। ऋषि लोग मुझे प्रधान प्रकृति कहते हैं आपको पुरुष।

महादेव ही हम दोनों के कारण हैं और सब जगत के प्रभु हैं। ब्रह्मा भी भगवान की बात सुनकर रुद्र भगवान की स्तुति करके प्रणाम करने लगे। इसके अनन्तर विष्णु भगवान ने जल में डूबी हुई पृथ्वी को वाराह बनकर पूर्ववत् स्थापित किया। नदी, नाले, पर्वत सभी स्थापित किए। पृथ्वी को ऊँची नीची सतह से रहित किया 'भू' आदिक चारों लोकों की कल्पना की तथा स्थापित किये। ब्रह्मा जी ने सृष्टि की इच्छा करके पशु-पक्षी देव योनि तथा मनुष्यों की रचना की। पूर्व में कुमारों को उत्पन्न किया सनत्, सनन्दन, सनातन उत्पन्न हुए जो निष्कर्म मार्ग से परम गति को प्राप्त हुए।

पुलस्त, पुलह, कृतु, दक्ष, अत्रि, बशिष्ठ आदि ऋषियों को योग विद्या से रचा। संकल्प, धर्म, अधर्म, इत्यादि १२ प्रकार की प्रजा ब्रह्मा से उत्पन्न हुई। ऋभु और सनत्कुमार आदि रचे। ये दोनों ऊर्ध्व रेता और दिव्य सृष्टि को रचकर पद्मयोनि ब्रह्मा ने अशेष युग धर्म को बनाया।

चारों युग धर्म का वर्णन

शैलादि बोले—इन्द्र से कहे हुए धर्म को सुनकर

मेरे पिताजी शिलाद बोले—कि ब्रह्मा जी ने युग धर्म को किस प्रकार बनाया वह मुझसे कहो। ऐसे वचन सुनकर इन्द्र बोले—पहले सतयुग, बाद में त्रेता, फिर द्वापर, फिर कलियुग ये चार प्रकार के युग हैं। सतयुग में सतगुण प्रधान है, त्रेता में रजोगुण, द्वापर में तमोगुण तथा रजोगुण हैं। कलियुग में केवल तमोगुण प्रधान है। सतयुग में ध्यान प्रधान है, त्रेता में यज्ञ, द्वापर में भजन तथा कलियुग में केवल शुद्धदान प्रधान है।

सतयुग में धर्म चार पैर वाला है, त्रेता में तीन पैर वाला, द्वापर में दो पैर वाला तथा कलियुग में केवल एक पैर वाला है। सतयुग में प्रजा सब आनन्द स्वरूप, भोग वाली तथा ऊँच नीच वाली नहीं थी। शोक रहित थी। पर्वत, समुद्र आदि में निवास करती थी। वर्णाश्रम धर्म था। वर्णशंकर प्रजा नहीं थी।

इसके पश्चात् द्वन्द्वों से पीड़ित उनसे छूटने के लिए प्रजा ने अनेकों उपाय किये। तृष्णा से पीड़ित, नाना प्रकार के भोगों से रहित प्रजा होने लगी,प्रजा की मर्यादा रखने के लिए तथा विघ्नों को दूर करने के लिए क्षत्रियों को उत्पन्न किया। वर्णाश्रम धर्म की प्रतिष्ठा की। मनुष्य सभी सदाचारी थे।

इसी प्रकार ब्रह्मा ने त्रेता में यज्ञों का प्रवर्तन किया। पशु यज्ञ का कोई सेवन नहीं करते थे। अहिंसात्मक यज्ञ

की प्रशंसा करते थे।

द्वापर में परस्पर मनुष्यों की बुद्धि में भेद हुए। इससे सभी प्राणियों को काम, क्लेश, शरीर रोग तथा द्वन्द्व तापों को सहना पड़ा। वेद शास्त्रों में लुप्त होने से वर्णशंकरता भी आ गई। काम, क्रोध आदि फैल गए। द्वापर में व्यास जी ने चारों वेदों का विभाग किया। मन्त्र ब्राह्मण के विन्यास से तथा स्वर वर्ण की विपरीतता से ब्राह्मण कल्प, सूत्र, मन्त्र वचन के अनेक भेद पैदा किये। इतिहास पुराण भी काल गौरव से अनेकता को प्राप्त हुए। ब्राह्म, पद्म, वैष्णव, शैव, भागवत, भविष्य, नारदीय, मार्कण्डेय, आग्नेय, लिंग, वाराह, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़, स्कन्द, ब्रह्माण्ड, पुराणों का संकलन हुआ।

मनु, अत्रि, विष्णु, हारीत याज्ञवल्क्य, उशना, अंशिरा, अंगिरा, यम, आपस्तम्ब, सम्वर्त, कात्यायन, वृहस्पति, पराशर, व्यास, शंख, लिखित, दक्ष, गौतम, शातादप, वशिष्ठ आदि ऋषियों के द्वारा स्मृतियाँ रची गईं। उस समय वृष्टि, मरण तथा व्याधि आदिक उपद्रव होने लगे। वाणी, मन, शरीरों से नाना प्रकार के क्लेश होने लगे तथा दुःख से छूटने का विचार करने लगे। विचार और विराग दोषों के कारण उत्पन्न होने लगे। द्वापर में ज्ञान से दुःख हानि का विचार करने लगे। इस प्रकार रजोगुण तथा तमोगुण से युक्त वृत्ति द्वापर में रही।

पहले सतयुग में धर्म था, वह त्रेता में भी ठीक रूप से चलता रहा तथा द्वापर में व्याकुल होकर कलियुग में नष्ट हो गया।

चारों युग का परिमाण

इन्द्र बोले—कलियुग में मनुष्य माया, असूया और तपस्वियों का वध आदि करेंगे तथा व्याकुल रहेंगे। प्रमादक रोग तथा भूख का भय तथा वर्षा न होने का भय तथा देशों में नाना प्रकार के संकट रहेंगे।

अधर्म में चित्त रहने के कारण वेद को प्रमाण नहीं मानेंगे। अधार्मिक, अनाचारी, महाक्रोधी तथा अल्प बुद्धि वाले होंगे। मनुष्य झूठ अधिक बोलेंगे। उनकी सन्तान दुराचारी होगी। ब्राह्मणों के कर्म दोष के द्वारा प्रजा में भय रहेगा। ब्राह्मण वेद नहीं पढ़ेंगे। ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्री आदि क्रम से नष्ट होने लगेंगे। शूद्र ब्राह्मण से मन्त्र लेंगे। खाना पीना भी ब्राह्मणों के साथ करने लगेंगे। विशेष करके शूद्र राजा होंगे तथा ब्राह्मणों का वध करेंगे।

भ्रूण हत्या तथा वीर हत्या होने लगेगी। शूद्र ब्राह्मणों का आचार करेंगे। राजा चोरों की सी वृत्ति वाले होंगे। मनुष्यों में वर्णाश्रम नहीं रहेंगे, भूमि अल्प फल वाली

रहेगी। राजा रक्षक नहीं रहेंगे। शूद्र ज्ञानी होकर ब्राह्मणों से अभिवादन करायेंगे। ब्राह्मण शूद्रों के यहाँ जीविका करेंगे। तप और यज्ञ के फल को बेचने वाले ब्राह्मण अधिक होंगे। कलियुग में यति बहुत होंगे जिनमें पुरुष थोड़े और स्त्रियाँ अधिक होंगी। स्त्रियाँ व्यभिचारिणी ज्यादा होंगी। पृथ्वी राजा से शून्य हो जायेगी। देश-देश तथा नगर-नगर में मण्डल बनाये जायेंगे। शासन प्रजा की रक्षा नहीं कर सकेगा।

त्रेता में एक वर्ष में जो धर्म फल देता था और द्वापर में एक माह में वही धर्म कलियुग में एक दिन में फल देने वाला होगा।

सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग की हजार चौकड़ी का ब्रह्मा का एक दिन होता है। उतनी ही रात्रि होती है। इसी प्रकार ७१ चतुर्युगी का एक मन्वन्तर होता है। यही मन्वन्तर का लक्षण बतलाया है। यही युगों का संक्षेप में लक्षण कहा तथा मन्वन्तरों का लक्षण है।

कल्प-कल्प में इसी प्रकार व्यवस्था होती है। इसी प्रकार प्रत्येक कल्प में ऋषि लोक, मनुष्यों का लोक तथा वर्णाश्रमों का विभाग, युग-युग में होता रहता है। प्रभु युग युग में युगों के स्वभाव वर्णाश्रमों के विभाग युग सिद्धि के लिए करते हैं। इस प्रकार युगों का परिमाण तुमसे कहा। अब संक्षेप से देवी के पुत्रों का वर्णन करूँगा।

इन्द्र द्वारा शिव की शक्ति का वर्णन और ब्रह्मा की उत्पत्ति

इन्द्र बोले—भगवान पितामह ने हजारों वर्षों के अन्त में प्रातः काल में पूर्ववत् सृष्टि की रचना की। द्विपरार्ध के अन्त में जब पृथ्वी जल में डूबी थी, जल अग्नि में लीन था, अग्नि वायु में, वायु आकाश में, सभी इन्द्रियाँ और तन्मात्रा सहित आकाश अहंकार में, अहंकार महत तत्व में, महत तत्व अव्यक्त में लीन था। अव्यक्त भी अपने गुणों के साथ शिव में लीन था। तब सृष्टि की उत्पत्ति कमल योनि ब्रह्मा ने की तथा मानस पुत्रों को उत्पन्न किया। शिव की प्रसन्नता के लिए उन्होंने बहुत ही कठोर तप किया। तब ब्रह्मा के ललाट को भेदन करके स्त्री पुरुष दोनों रूप में शिव उत्पन्न हुए और ब्रह्मा से बोले—कि मैं तुम्हारा पुत्र हूँ। पुत्र महादेव अर्धनारीश्वर रूप हुए जो ब्रह्मा सहित जगत को दहन करने लगे और अर्ध मात्रामय भगवती कल्याणी परमेश्वरी हुई जिसको शिव ने जगत की वृद्धि के लिए उत्पन्न किया। उससे हरि और ब्रह्मा आदि की उत्पत्ति की। इसलिए ब्रह्मा और विष्णु महादेवी के अंश से उत्पन्न हुए।

नारायण भगवान ने भी अपने शरीर के दो भाग

किये और अपने अंश से चराचर जगत की रचना की। ब्रह्मा ने पुनः दस हजार वर्षों तक शिव की तपस्या की। तब नीललोहित शिव की ब्रह्मा के ललाट से पुनः उत्पत्ति हुई, तब ब्रह्मा ने उन नीललोहित की हाथ जोड़कर प्रार्थना की—

ब्रह्मा जी कहने लगे—हे सूर्य के समान अमित तेज वाले! हे भव! हे देव! आपको नमस्कार है। आप सर्व हो, क्षितरूप हो, ईशरूप हो, वायुरूप हो, सोमरूप हो, यजमान रूप हो, हे प्रभो! आपको नमस्कार है।

पितामह के इस रूप को जो पढ़ता है वह एक वर्ष में ही अष्टमूर्ति शिव की सायुज्यता (मोक्ष) को प्राप्त हो जाता है।

अष्टमूर्ति भगवान शिव की, भानु, अग्नि, चन्द्र, पृथ्वी, जल, वायु, यजमान और आकाश रूप वाली कही गई है। अष्टमूर्ति शिव के प्रसाद से ब्रह्मा ने अखिल जगत की रचना की। चराचर जगत के लय के सम्बन्ध में प्रजा की रचना के लिए ब्रह्मा ने तप किया था। बहुत समय तक जब कहीं कुछ नहीं देखा तो ब्रह्मा को क्रोध आया। क्रोध से ब्रह्मा के आँसू गिरे और आँसुओं से भूत प्रेत पिशाच उत्पन्न हुए। उनको देखकर ब्रह्मा ने अपनी आत्मा की निन्दा की तथा क्रोध में आकर अपने प्राणों का त्याग कर दिया। तब प्राणमय रुद्र अर्धनारीश्वर ब्रह्मा

के मुख से उत्पन्न हुए और शिव अपनी आत्मा को ग्यारह रूपों में बाँटते भये जो ग्यारह रुद्र हुए। आधे अंश से उमा भगवती को रचा जो लक्ष्मी, दुर्गा, रौद्री, वैष्णवी आदि नामों से कही गई है।

मरे हुए ब्रह्मा के लिए भगवान शिव ने प्राणों का दान दिया तब ब्रह्मा जी प्रसन्न होकर उठ पड़े। शिवजी बोले—हे जगत गुरु ब्रह्मा जी! मैंने तुम्हारे प्राण स्थापित कर दिए हैं, तुम उठो। ब्रह्मा शिवजी को देखकर बोले—हे महाराज! आप अष्टमूर्ति तथा ग्यारह मूर्ति वाले कौन हो?

शंकर बोले—मुझे तुम परमात्मा समझो तथा यह माया को तुम अजा समझो। ये ग्यारह रुद्र हैं जो तुम्हारी रक्षा के लिए यहाँ आए हैं। हाथ जोड़कर गद्‌गद् वाणी से ब्रह्मा बोले—हे देव! मैं दुखों से व्याप्त हूँ आप मुझे संसार से मुक्त करने में योग्य हो।

तब उमापति शंकर ब्रह्मा को आश्वासन देकर रुद्रों सहित वहीं अन्तर्ध्यान हो गए।

इन्द्र कहता है—हे शिलाद! अयोनिज तथा मृत्यु हीन पुत्र दुर्लभ हैं। ब्रह्मा जी अयोनिज नहीं हैं तथा मृत्यु से रहित नहीं हैं। किन्तु रुद्र यदि प्रसन्न हो जायें तो वे मृत्युहीन और अयोनिज पुत्र दे सकते हैं, उनको कुछ भी दुर्लभ नहीं है। ब्रह्मा विष्णु तथा मैं अयोनिज और मृत्यु

रहित पुत्र देने में असमर्थ हैं।

शैलादि बोले—इस प्रकार मेरे पिता शिलाद को कहकर इन्द्र अपने सफेद हाथी पर बैठकर चले गए।

नन्दीश्वर की उत्पत्ति का वर्णन

सूतजी कहते हैं—वरदान देने वाले इन्द्र के चले जाने पर शिलाद ने शिव की प्रसन्नता के लिए तपस्या की। देवताओं के हजारों वर्ष क्षण की तरह बीत गए, शरीर में बमई बन गई, कीड़े दीमक लग गए। अस्थिमात्र शरीर रह गया तब शंकर जी प्रसन्न हुए और उसके शरीर पर हाथ फेरा जिससे वह हृष्ट-पुष्ट शरीर से युक्त हो गया। उसने उमा और गणों सहित शिव के दर्शन किये। शिवजी ने उससे कहा—कि हे शिलाद! तुझे मैं सर्वज्ञ और सर्व-शास्त्र पारंगत पुत्र दूंगा। शिलाद बोला—हे शंकर! मुझे अयोनिज तथा मृत्यु हीन पुत्र दो।

महादेव जी बोले—हे ब्राह्मण! पूर्व में ब्रह्मा ने प्रार्थना करके मुझसे अवतार धारण के लिए प्रार्थना की है। सो मैं नन्दी नाम वाला अयोनिज तेरा पुत्र हूँगा। तुम मेरे पिता होगे और मैं जगत में तुम्हारा पुत्र होऊँगा। ऐसा कहकर

शिव अन्तर्ध्यान हो गए।

रुद्र की कृपा से यज्ञ की भूमि में से शिव उत्पन्न हुए। आकाश से देवताओं ने पुष्पों की वर्षा की। तीन नेत्र वाले, चार भुजाओं वाले, जटा मुकुट धारण किए हुए, वज्रादि आयुध धारण किए हुए शिव को देखकर देवता आदि लोग स्तुति करने लगे। अप्सरायें नृत्य करने लगीं। वसु, रुद्र, इन्द्रादि सभी प्रार्थना करने लगे। साक्षात् लक्ष्मी, जेष्ठा, शचीदेवी, दिति, अदिति, नन्दा, भद्रा, सुशीला भी मेरी स्तुति करने लगीं। शिलाद मुनि मुझ शिव की इस प्रकार स्तुति करने लगे।

शिलाद बोले—हे त्रयम्बक! हे देवेश! जगत की रक्षा करने वाले तुम मेरे पुत्र रूप में आए हो। हे आयोनिज! हे ईशान! हे जगत गुरु! आप मेरी रक्षा कीजिए। तुमने मुझको नन्दित अर्थात् आनन्दित किया है, इससे आपका नाम नन्दी है। मेरे पिता माता सभी रुद्र लोक को चले गए हैं। अब मेरा जन्म सफल हुआ। हे सुरेश! हे नन्दीश्वर! आपको नमस्कार है।

आपको पुत्र समझ कर जो कुछ मैंने कहा उसे क्षमा करो। इस स्तोत्र को जो भी कोई पढ़ता है या भक्ति सहित सुनाता है वह मेरे साथ रुद्रलोक में आनन्द के साथ निवास करता है।

तब बाल रूप शिव को प्रणाम करके शिलाद कहने

लगे—हे मुनीश्वरों मेरे उत्तम भाग्य को देखो जो कि नन्दीश्वर मेरे पुत्र रूप में यज्ञ भूमि से उत्पन्न हुआ है। मेरे समान लोक में देव दानव कोई भी भाग्यशाली नहीं है, जिसके लिये नन्दीश्वर साक्षात् शिव यज्ञ भूमि से उत्पन्न हुये हैं।

नन्दीकेश्वर अभिषेक वर्णन

नन्दीकेश्वर बोले—मेरे पिता मेरे साथ शिवजी को प्रणाम करके अपनी झोंपड़ी में गये तब उस पर्णशाला में देवी रूप को छोड़कर मनुष्य रूप में बदल गया। मेरी दिव्य स्मृति नष्ट हो गई। इस मेरे मानुष रूप को देख मेरे पिता ने मेरा जात कर्म आदि संस्कार किया। ऋक् यजु साम आदि वेदों का तथा आयुर्वेद धनुर्वेद आदि का भी मुझे उपदेश किया।

सात वर्ष पूरे हो जाने पर मित्रावरुण नाम वाले मुनि मेरे पिता के आश्रम में आये। मुझे बार-बार देख करके बोले कि यह नन्दी सर्व शास्त्र पारंगत है। परन्तु आश्चर्य है कि यह अल्प आयु वाला है। यह सुनकर मेरे पिता शिलाद हे पुत्र! हे पुत्र! ऐसा विलाप करने लगे तथा मृतक के समान निश्चेष्ट होकर गिर गये। मृत्यु से भय

वाला होकर मैं हृदय में त्रयम्बक का ध्यान करता हुआ रुद्र जाप में तत्पर हो गया। तब प्रसन्न होकर चन्द्रशेखर शिवजी बोले—हे वत्स! नन्दी तुमको मृत्यु का भय कहाँ? मैंने ही इन दोनों ऋषियों को भेजा था उन्होंने लौकिक देह को देखा है दैविक को नहीं देखा। संसार का ऐसा स्वभाव ही है कि इसमें सुख दुःख होता रहता है। ऐसा कहकर भगवान ने मेरा स्पर्श किया तथा प्रसन्न होकर बोले—तुम गणपतियों को तथा हिमांचल की पुत्री देवी को देखो। ऐसा मुझ से कहा। फिर मेरे शरीर को जरा आदि से अक्षय करके कहा कि—तू मेरा गण है मेरे पास सदा रहेगा, अपनी अक्षय माला को गले से उतारकर मुझे पहना दिया। उस माला से मैं तीन नेत्र वाला दशभुजा वाला शंकर के समान ही हो गया। शंकर बोले—कि तुझे क्या वरदान दूँ। फिर जटाओं से शुद्ध जल लेकर पृथ्वी पर उन्होंने छोड़ा और कहा कि नदी होजा।

वह स्वच्छ जल से युक्त कमल दल से पूर्ण महा नदी बन गया। जटा और उदक (जल) से उत्पन्न उस नदी का नाम जटोदका रखा तथा उस नदी से भगवान ने कहा कि जो तेरे में स्नान करेगा वह सभी पापों से मुक्त हो जायेगा। तब भगवान हाथ में जल लेकर पुत्रवत् प्रेम से मेरा अभिषेक करने लगे। प्रसन्न हुए वृष भगवान

बड़ी गर्जना करने लगे तब उस नदी का नाम वृषध्वनी कहा गया। मुझे विश्वकर्मा के अद्‌भुत मुकुट और कुण्डल शंकर भगवान ने पहनाये।

फिर वह नदी जाम्बूनद नाम वाली भी कही गई और अब पंचनद नाम से प्रसिद्ध है। उसमें जो स्नान करके शिव की पूजा करता है वह शिव सायुज्य को प्राप्त करता है। तब भूतपति महादेव गिरिजा से बोले—कि हे देवी! नन्दीश्वर को मैं भूतपति तथा गणपति नाम से अभिषेक करूँगा। तुम वह ठीक मानती हो न।

तब हँसती हुई देवी बोलीं—कि हे प्रभो! इसे सभी गणों का अधिपति बनाकर सब देने योग्य हो क्योंकि शिलाद का यह पुत्र मेरा ही पुत्र है। तब शंकर ने सभी गणपतियों का स्मरण किया।

शैलादि बोले—रुद्र के स्मरण करने पर सभी गणपति हजारों की संख्या में हजारों प्रकार के वाहनों पर चढ़े हुये कालाग्नि के समान भेरी, मृदङ्ग, शंख आदि बाजे बजाते हुये शिव के पास आकर इकट्‌ठे हुये। प्रणाम करके शंकर से बोले—हे प्रभो! किस प्रकार हमारा स्मरण किया, कृपा करके आज्ञा करिये। क्या हम यमदूतों के साथ यम को मार दें। क्या हम समुद्रों का शोषण कर दें। वायु के साथ विष्णु को पकड़ लावें।

ऐसा सुनकर शिवजी बोले कि—यह नन्दीश्वर मेरा

पुत्र है सो मेरी आज्ञा से तुम सब अपने इस सेनापति का अभिषेक करो। जैसी आपकी आज्ञा कहकर वह गण सुवर्णमय आसन आदि सभी सामग्री इकट्ठा करने लगे। वैदूर्य मणि का मण्डप बनाया। हजारों स्वर्ण ताम्र मिट्टी आदि के पात्र भरकर रखे। दिव्य मुकुट कुण्डल और छत्र आदि सब इकट्ठे किये। फिर सब देवता इन्द्रादि विष्णु तथा मुनीश्वर वहाँ आये। अभिषेक विधिवत कराने के लिये शिव ने ब्रह्मा को आज्ञा दी। ब्रह्मा ने सब प्रकार पूजन किया। विष्णु तथा दिगपालों ने पूजन किया। ऋषियों ने पूजन कर स्तुति की। विष्णु ने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की। सभी गणपतियों ने तथा देवताओं ने अभिषेक किया। देवी ने छत्र तथा चंवर उसे समर्पण किया। देवी ने अपना गले का हार भी उसे दिया। देवी ने शिव को देखकर गणों से प्रार्थना की। सबको पूजा करने की आज्ञा की, तब सभी मुनि लोगों ने और रुद्र के भक्तों ने पूजन किया। नमस्कार आदि से रहित ब्रह्महत्या के भागी होते हैं, इसलिए सभी को नमस्कार पूर्वक पूजन करना चाहिए, ऐसा देवी के कहने पर सबने प्रणाम करके पूजन किया।

पाताल वर्णन

ऋषि बोले—हे सूत! रुद्र के सर्वात्मक रूप का वर्णन कीजिये।

सूतजी बोले— भूर्भुवःस्व, मह, जन, तप, सत्य तथा पाताल, नरक, समुद्र, तारे, ग्रह, सूर्य, चन्द्र, ध्रुव तथा सप्त ऋषि और देवता लोग जहाँ रहते हैं, यह सब समष्टी रूप से शिव का ही रूप है। मूढ़ पुरुष माया से मोहित होकर यह नहीं जानते। यह सब जगत रुद्र का ही स्वरूप है, सो उस शिव को प्रणाम करके मैं तुमको सब कहूँगा।

पृथ्वी, आकाश, स्वर, मह, जन, तप, सत्य ये सब लोक ब्रह्माण्ड से ही उत्पन्न हैं। नीचे के सात पाताल (महातलादि) इनके नीचे नरक है। महातल सब रत्नों से शोभित, विचित्र महलों से युक्त अनन्त भगवान तथा मुचकन्द के सहित राजा बलि से सुशोभित हैं तथा शरकरा से बना है। सुतल पीले वर्ण का है। वितल मूँगा की सी कान्ति वाला है। अतल सफेद रंग का है, तल सफेद से भिन्न रंग का है। पृथ्वी का जितना विस्तार है वैसे ही नीचे इनका भी विस्तार है। सहस्त्र योजन व्योम का विस्तार है। रसातल वासुकि से युक्त है।

विरोचन हिरण्याक्ष तथा नरक आदि से सेवित तलातल नाम का पाताल कहा गया है। कालनेमि आदि

से युक्त सुतल कहा गया है। तार का अग्नि मुख आदि दानवों और नागों से असुर प्रह्लाद से युक्त वितल कहा है। महाकुम्भ, हयग्रीव आदि से सेवित तथा नाना प्रकारों के वीरों से युक्त तल कहा गया है। तलों में स्कन्द अम्बा नन्दी गणों से सहित शिव विराजमान हैं। सब तलों से ऊपर पृथ्वी के सात लोक तथा पृथ्वी का वर्णन भी मैं तुमसे करूँगा।

भुवन कोष में द्वीप और द्वीपेश्वरों का वर्णन

सूतजी बोले—सात द्वीप वाली पृथ्वी नदियों और पर्वतों से युक्त और सात समुद्रों से सुशोभित है। जम्बू, प्लक्ष, शाल्मली, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर नाम वाले क्रम से सात द्वीप हैं। सातों द्वीपों में गण से युक्त अम्बिका के साथ नाना वेष धारण किये हुये शिवजी विराजमान हैं। क्षारोद, रसोद, सुरोद, घटोदधि, दध्यर्णव, क्षीरोद, स्वदूद ये क्रम से सात समुद्र हैं। इन समुद्रों में भी शिवजी जल रूप होकर गणों सहित बाहुओं से क्रीड़ा करते हैं। क्षीरार्णव में विष्णु भगवान शिव ध्यान में तत्पर योगनिद्रा में शयन करते हैं। जब वे जागते हैं तो अखिल संसार प्रबुद्ध होता है और सोने पर जब संसार सुप्त हो

जाता है।

श्रीमान् सनन्दन, सनातन, बालखिल्य, मित्रावरुण ये सदा विष्णु भगवान का यजन किया करते हैं। अतीत अनागत सभी मन्वन्तरों में पृथ्वी के स्वामियों के नाम अब आप से कहता हूँ। स्वायंभुव मन्वन्तर में मनु के पौत्र और राजा प्रियव्रत के दस पुत्र कहे हैं। अग्नीध, अग्निबाहु, मेधातिथि, वसु, वपुष्मान, जोतिष्मान, द्युतिमान, हव्य, सवन आदि हुए। प्रियव्रत ने जम्बूद्वीप का स्वामी अग्नीन्ध्र को बनाया और प्लशद्वीप का मेधातिथि को शल्मली का वपुष्मान किया, कुशद्वीप में ज्योतिषमान, क्रौंच में द्युतिमान, शाल्वद्वीप में हव्य को और पुष्कर का सवन को अधिपति बनाया। हव्य के जल्द, कुमार आदि सात पुत्र हुए। इन्हीं के नाम से अलग- अलग देशों के विभाग हुए। इसी प्रकार प्लक्षादि द्वीपों के अधिपतियों के भी पुत्र हुए जिनके नाम पर उस द्वीप के देशों के तथा वर्षों के नाम पड़े। प्लक्षादि द्वीपों में धर्म और वर्णाश्रम विभाग, सुख, आयु, स्वरूप, बल सर्व साधारण रूपों में थे। ये सब मनुष्य महेश्वर में, ध्यान में एवं पूजा में तत्पर रहते थे। अन्य पुष्कर आदि द्वीपों में उत्पन्न हुए राजा लोग रुद्र के भाव रूपी सुख में तत्पर रहते थे।

भारतवर्ष का वर्णन

सूतजी बोले—राजा प्रियव्रत ने अपने महा बलवान बड़े पुत्र को जम्बूद्वीप का स्वामी बनाया। वह शिव का भक्त, बड़ा तपस्वी श्रीमान् इन्द्र विजयी तथा बुद्धिमान था। उसके पुत्र नौ प्रजापति के समान महादेव जी में परायण हुए। बड़ा पुत्र नाभि, दूसरा किंपुरुष, हरीवर्ष, इलाव्रत, रम्य, छटवाँ हिरण्यमान, सातवाँ कुरु, आठवाँ भद्राश्व, नौवाँ केतुमाल नाम वाले थे। इनके जम्बू द्वीप में देशों का अब वर्णन करूँगा। पिता ने नाभि को दक्षिण देश हेमाख्य दिया, हेमकूट नाम का देश किंपुरुष को, हरी को नैषध, इलाव्रत के लिये मेरु, रमय को नीलाचल पर स्थित देश, श्वेत, नाम का देश जो उत्तर में है वह हिरण्यमान को, शृङ्गवर्ष को कुरु पुत्र के लिये, मालवान देश को भद्राश्व को, गन्धमादन केतुमाल नामक पुत्र को दिया।

आग्नीध्र अपने देश को पुत्रों में अभिषेक करके तपस्या किए चला गया। स्वाध्याय में तत्पर होकर शिव ध्यान में मग्न हो गया। किंपुरुष आदि के आठ देशों में बिना ही सिद्धि के सुख की वृद्धि तथा जरा मृत्यु का भय नहीं है। इन आठ रुद्रक्षेत्र में मरे हुए स्थावर जङ्गम प्राणियों को रुद्र की समीपता मिलती है और अन्त में

परागति को प्राप्त होते हैं।

नाभि के पुत्र और मेरुदेवी पत्नी से सर्वश्रेष्ठ, बुद्धिमान ऋषभ नाम वाला पुत्र हुआ। ऋषभ के सौ पुत्र हुए, जिनमें सबसे बड़े भरत थे। ऋषभ भरत को अभिषेक करके ज्ञान वैराग्य में मग्न होकर नग्न जटाधारी तथा निराहारी शिव के बड़े भारी भक्त हुए और शैव पद को प्राप्त हुए। हिमाचल से दक्षिण देश को भरत के लिए दिया गया था इसलिए विद्वान उसे भारतवर्ष नाम से जानते हैं। भरत का पुत्र भी बड़ा बुद्धिमान बलवान सुमति नाम वाला हुआ। भरत उसे राज्य का भार सौंप कर तपस्या के लिये जंगल में चले गये।

जम्बूद्वीप में मेरु का वर्णन

सूतजी बोले—इस द्वीप के मध्य में मेरु नाम का पर्वत नाना प्रकार का शिखर वाला स्थित है। चौरासी हजार योजन उसकी ऊँचाई है और १६ हजार योजन पृथ्वी में धँसा है। १६ हजार योजन तक वह पृथ्वी पर फैला हुआ।

महेश्वर के शुभ अंग से स्पर्श होने पर यह सुवर्णमय

है। धतूरे के फूल के समान यह सभी देवताओं का शुभ स्थान है। यह देवताओं की क्रीड़ा भूमि है। पूर्व की ओर पद्मराग मणि की शोभा वाला है। दक्षिण में सोने के समान, पश्चिम में नील मणि के समान तथा उत्तर में विद्रुम के समान शोभा वाला है। अमरावती नाम की नगरी, इस पर नाना प्रकार के महलों से युक्त पूर्व भाग में स्थित है जो नाना प्रकार के देवगणों के सहित मणियों से शोभा सम्पन्न है। अनेकों प्रकार के बन्दनवारों से युक्त तथा अप्सराओं से गौरवशाली है। नाना प्रकार के फूल, बावड़ी, नदी, नालों से युक्त है जिसमें सुवर्ण और मणियों की सीढ़ी बनी है। अत: यह अमरावती सभी भोगों से युक्त है।

मेरु पर दक्षिण में यमराज की वैवस्वती पुरी दिव्य भवनों से युक्त है, नैरुत में कृष्ण वर्ण शुद्धवती, वायव्य में गन्धवती, उत्तर और ईशान में यशोमती पुरी है। यहाँ ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर के स्थान है। यक्ष गन्धर्व मुनिश्रेष्ठों के द्वारा यह सदा सेवित है। पर्वत के ऊपर शुद्ध स्फटिक मणि के समान विमान स्थित है। उसमें महाभुजा वाले सूर्य, चन्द्र, अग्नि के तीन नेत्र वाले, देवी तथा षड्मुख के साथ ऊँचे सिंहासन पर विराजते हैं। उससे नीचे विष्णु भगवान का विमान, उससे नीचे दक्षिण में ब्रह्मा जी का पद्मराग मणि का विमान है। फिर शक्र

का, सोम का, वरुण का, पावक का, वायु का दिव्य विमान विराजमान है।

ईशान में ईश्वर क्षेत्र है जहाँ नित्य सिद्धेश्वरों के द्वारा रुद्र की पूजा होती है। वहाँ पर कहीं योग भूमि है। कहीं भोग भूमि है। बाल सूर्य के समान चमकता हुआ सूर्य स्थिर रहता है। पर्वत पर जम्बू नाम की नदी तथा दक्षिण भाग में जम्बू नाम का एक वृक्ष है, जो बहुत ही लम्बा चौड़ा है, जिस पर सभी कालों में फल लगे रहते हैं। मेरु के चारों तरफ अधिक विस्तार वाला इलावृत नाम का देश है। वहाँ के लोग जम्बू फल खाने वाले तथा कोई कोई अमृत पीने वाले लोग रहते हैं। यहाँ नाना प्रकार के रंग वाले भोगी सर्प भी रहते हैं। यहाँ नौ देश नदी नालों से सुशोभित हैं जो अति श्रेष्ठ हैं। अब मैं जम्बू द्वीप के नौ देशों का विस्तार से वर्णन करूँगा।

मर्यादा सहित पर्वतों का वर्णन

सूतजी बोले—पचास करोड़ योजन विस्तार वाले समुद्र तथा सात द्वीपों और लोकालोक पर्वतों से पृथ्वी युक्त है। मेरु से उत्तर में नील पर्वत, उससे उत्तर में श्वेत

तथा उससे उत्तर में श्रृङ्गी पर्वत है।

यह उस देश के पर्वत हैं। पूर्व दिशा में जठर और देवकूट पर्वत है। मेरु से दक्षिण में निषद, उससे दक्षिण में हेमकूट, उससे भी दक्षिण में हिमवान है, मेरु से पश्चिम में माल्यवान और गन्धमादन दो पर्वत हैं। ये पर्वतराज सिद्ध चरणों से सेवित हैं। यह हेमवत नाम का वर्ष भारत के नाम से प्रसिद्ध है।

मेरु पर्वत के पूर्व में मन्दर नाम का पर्वत, दक्षिण में गन्धमादन, पश्चिम में विपुल, उत्तर में सुपार्श्व नाम के पर्वतराज हैं। मन्दर पर्वत पर चार लम्बी शाखा के वृक्ष हैं जो केतु के समान हैं। कदम्ब, जामुन, पीपल तथा वट के चार वृक्ष हैं। चारों ओर क्रीड़ा वन हैं। पूर्व में चैत्ररथ, दक्षिण में गन्धमादन, पश्चिम में वैभ्राज, उत्तर में सवितुर्वन हैं। चार ही उस पर महान सरोवर हैं। इनमें मुनि लोग क्रीड़ा करते हुए विचरते हैं। पूर्व में अरुणोद, दक्षिण में मानस, पश्चिम में सितोद, उत्तर में महाभद्र सरोवर है। अरुणोद सरोवर से पूर्व में बहुत से पर्वत हैं जिन्हें मैं संक्षेप से कहता हूँ। सितान्त, कुरुंड, कुरर, विकार, मणि, शैल इत्यादि पर्वत हैं। मन्दिर पर्वत के पूर्व दिशा में सिद्धों का वास है। वहाँ पर्वतों की गुफा में और वनों में रुद्र क्षेत्र हैं। मानस सरोवर के दक्षिण में बहुत से पर्वत हैं, जिनमें दिव्य रुद्र क्षेत्र स्थापित किये

गये हैं। दिव्य पर्वतों के ऊपर देवशंकर के असंख्य धिमान हैं जिनमें शिवजी की कृपा से अनेक सिद्ध और मुनि लोग वास करते हैं।

इसी प्रकार से पातालों की भी स्थिति है। वहाँ भगवान विष्णु की साक्षात् मूर्ति भगवान हलायुध विद्यमान हैं। वहाँ देव देव की शैय्या है। पनस वृक्षों के वन में श्री शुक्राचार्य सहित उरग रहते हैं। मनोहर वन में करोड़ों संख्याओं के वृक्ष हैं। वहाँ गणों के साथ नन्दीश्वर शिव की स्तुति करते हैं। सन्तानक स्थली के मध्य में साक्षात् देवी सरस्वती रहती हैं।

इस प्रकार संक्षेप से मैंने वन तथा पर्वतों में रहने वाले इन वन-वासियों की कथा तुमसे कही है। इनका वर्णन विस्तार से मैं नहीं कह सकता।

भगवान की रचना से देशों का वर्णन

सूतजी बोले—शितान्त पर्वत पर पारिजात वन में इन्द्र, उसके पूर्व में कुमुदाद्रि पर्वत है। वहाँ दानवों के आठ पर्वत हैं। सुवर्ण कोटर में भी राक्षसों के स्थान हैं, नीलक लोगों के भी ६८ नगर हैं। नील पर्वत पर भी १५ नगर हैं। किन्नर और विद्याधरों के महाशैल पर तीन पुर

हैं। बैकुण्ठ में श्रीमान गरुड़, करंज में नीललोहित और वसुधार में वसुओं का निवास स्थान है। रत्नधाट पर सप्त ऋषियों के सात स्थान हैं। गजशैल पर दुर्गा आदि के स्थान हैं। सुमेरु पर वसुओं का स्थान है। सुनील पर राक्षसों का वास है। पंचकूट पर पाँच करोड़ नगर हैं। शतश्रृङ्ग पर यक्षों के सौ पुर हैं। श्वेतोदर पर सुपर्ण का स्थान, पिशाचक पर कुबेर का तथा कुमुद पर किन्नरों का, सहस्त्र शिखिर शैल पर दैत्यों का निवास रहता है। मुकुट पर पन्नगों का, पुष्पकेतु पर मुनीश्वरों का वास है। तक्षक शैल पर चार स्थान हैं। जहाँ पर ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु तथा रुद्र का तथा गुह सुमेर तथा सोम भी स्थान बनाकर रहते हैं। श्री कंठ की पर्वत गुहा में उमा सहित शंकर निवास करते हैं। श्री कंठ के अधिकारी देवेश्वर शंकर ही हैं। इस अण्ड की उत्पत्ति शंकर से हुई है इसमें संशय नहीं है। वैसे अनन्त, ईश आदि को भी अण्ड पालक कहे गए हैं और विद्येश्वर आदि चक्रवर्ती भी हैं। श्री कंठ से अधिष्ठित स्थान मर्यादा पर्वतों पर संक्षेप से मैंने कहा है। यह सम्पूर्ण चराचर जगत श्री कंठ से ही अधिष्ठित है। प्रलय की अग्नि अर्थात् शिव तक का वर्णन मैं विस्तार से भला कैसे कर सकता हूँ।

भुवन कोष में स्थित अनेकों द्वीपों का वर्णन

सूतजी बोले—सुशोभन महाकूट गिरि के बीच में देवकूट पर्वत है जो सोना, नीलम, गोमेद, वैदूर्य आदि की कान्ति वाला तथा अनेकों मणियों से निर्मित चंपक, अशोक पुन्नाग, बकुल आदि के वृक्षों से सुशोभित है। अनेक प्रकार के झरने, पुष्पों की वर्षा करने वाले अनेक प्रकार के वृक्षों से शोभायमान है। दस योजन विस्तार वाला नाना भूतगणों से युक्त यहाँ भूतवन है। उसमें महामणियों से स्थित शंकर भगवान का प्रकाश वाला स्थान है वह स्थान सोने के परकोटा वाला तथा मणियों से बन्दनवार वाला है। वही मणियों के सिंहासन पर नाना मणियों और वस्त्रों से युक्त, विचित्र मण्डपों, वाराह, शार्दूल आदि के चिह्न वाला, नन्दीश्वर गणों से सुशोभित, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र के समान मूर्तियों से युक्त, देवताओं के प्रभु शंकर जी का निवास है। देवता लोग उनकी सदा पूजा करते हैं। शंख झालर आदि का शब्द निरन्तर होता है। देवगण, सिद्ध आदि सदा शंकर की पूजा करते रहते हैं। यहाँ देवराज, कुबेर आदि का स्थान है, अन्य करोड़ों यक्षों का भी स्थान है। यहाँ गणों सहित हर की पूजा होती है। वहीं मन्दाकिनी नाम की नदी है, जिसके सुवर्ण और मणियों के सोपान हैं। यहाँ जम्बू नदी में पद्म

गन्ध स्पर्श से युक्त नाना प्रकार के कमल खिले हैं। यक्ष, गन्धर्व, अप्सरा आदि इस नदी का सेवन करते हैं। देव, दानव, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व इस पवित्र मन्दाकिनी के जल का सेवन करते हैं। उस नदी के उत्तर की ओर महादेव जी का सुन्दर स्थान है जो वैदूर्य मणि आदि से सम्पन्न है, उसमें शंकर जी विराजते हैं। वहाँ गणों सहित अम्बिका सहित शिवजी महाराज क्रीड़ा करते हैं।

वहीं पर अनेकों महलों से युक्त रुद्रपुरी नाम का नगर है। वहाँ अपने स्वरूप को सैंकड़ों प्रकार का बनाकर शंकर जी अम्बिका और गणों के साथ क्रीड़ा करते हैं। ऐसे शंकर जी के हजारों स्थान हैं। जिन्हें शिवालय कहते हैं। हे मुनिश्रेष्ठ! प्रत्येक द्वीप में पर्वतों पर नदियों के किनारों पर तथा समुद्रों की सन्धियों पर अनेकों शिवजी के स्थान हैं।

भुवन कोष का स्वभाव

सूतजी कहने लगे—हे ब्राह्मणो! मैंने तुमसे बहुत सी जल वाली नदी और सरोवरों को कहा, जो असंख्य हैं। कोई पूर्व मुख वाली, कोई दक्षिण मुख वाली है, जो हर देश में कही है। आकाश रूपी समुद्र में जो सोम कहा

है वह सम्पूर्ण भूतों का आधार है और देवताओं के लिए अमृत का भण्डार है। उससे निकली हुई आकाश की नदी अमृतोदका नाम वाली है, वह ज्योतिषमती है, करोड़ों तट और आकाश से युक्त है। जैसे सोम है वैसे ही वह दिनों दिन बदलती रहती है। वह चौरासी हजार योजन ऊँची है। वहाँ बहुत ऊँचा मेरु है। वहाँ श्री कंठ अम्बा के साथ क्रीड़ा करते हैं। वहीं पर मेरु की परिक्रमा करती हुई पुण्य जल वाली नदी आती है जो मेरु पर्वत के चारों शिखर पर गिरती हुई महादेव जी की आज्ञा से समुद्र में गिरती हैं। इससे निकली अनेक नदियाँ सब द्वीपों और पर्वतों में बह रही हैं। ऐसी नदियाँ अंख्य हैं। गंगा तो अम्बर से ही आई है। भद्राश्व देश में स्त्री और पुरुष सभी चन्द्रमा की सी शक्ल वाले हैं जो काले आम के रस का भोजन करने वाले हैं और शिवजी की कृपा से दस हजार वर्षों तक जीवित रहते हैं।

तथा रमणीक देश में जीव वट के फल का भोजन करते हैं। वे ग्यारह हजार पाँच सौ वर्ष तक जीवित रहकर शिव का ध्यान करते हैं। कुरु वर्ष (देश) में स्वर्ग से आये हुये सभी जीव मैथुन से उत्पन्न होते हैं तथा दूध का भोजन करते हैं।

भारतवर्ष में मनुष्य कर्म के अनुसार आयु वाले, नाना वर्ण वाले छोटे कद के होते हैं जो सौ वर्ष की आयु

वाले हैं, वे अनेकों देवों के पूजन में लगे रहते हैं तथा अनेकों प्रकार के कर्मों का फल भोगते हैं। वे सभी कमजोर तथा थोड़े भोगी होते हैं। नाग द्वीप, सौम्य द्वीप, वारुण द्वीपों में उत्पन्न होने वाले जीव कोई म्लेच्छ तथा कोई पुलिन्द होते हैं।

भारतवर्ष के लोगों की प्रवृत्ति स्वर्ग और अपवर्ग में होती है। किंपुरुषदेश में रहने वाले पुरुष सोने के से रंग वाले तथा स्त्रियाँ अप्सराओं के तुल्य होती हैं। दस हजार वर्ष तक जीवित रहती हैं उन्हें रोग तथा शोक नहीं होता वे प्लक्ष का भोजन करते हैं। हर वर्ष देश के जीव देवलोक से आये हुए देवताओं के से आकार वाले होते हैं। चाँदी के से रंग वाले होते हैं। उन्हें मृत्यु की जरा भी बाधा नहीं है। ईख के रस का पान किया करते हैं। शंकर जी की भक्ति में तत्पर रहते हैं।

इलावृत में रहने वाले दस हजार वर्ष तक जीवित रहते हैं। वहाँ न तो सूर्य तपता है न चन्द्र नक्षत्र चमकते हैं। शंकर के प्रभाव से वे कमल के समान सुन्दर आकार वाले होते हैं।

जम्बू द्वीप के रहने वाले जम्बू रस का पान करते हैं। उनको जरा तथा भूख बाधा नहीं पहुंचाती। उनको ग्लानि तथा मृत्यु भी नहीं सताती है।

इस प्रकार नौ द्वीपों के रहने वालों के वर्ण, आयु

आदि का मैंने संक्षेप से वर्णन किया है। पित्रीश्वरों का स्थान शृङ्गवान पर्वत कहा गया है। हिमवान भूतों का, यक्षों का तथा ईश्वर का भी स्थान कहलाता है। इसके अलावा सभी पर्वतों पर अम्बा के साथ और गणों के साथ भगवान नीललोहित वास करते हैं। ये सभी पर्वत राज जम्बू द्वीप में ही स्थित हैं।

भुवन कोष की रचना का वर्णन

सूतजी बोले—हे द्विजो! प्लक्षादि सात द्वीपों में सात सात देश व पर्वत स्थित हैं। प्लक्ष द्वीप में गो भेदक चान्द्र, नारद, दुन्दुभि, सोयक, सुमना, वैभ्राज, ये सात पर्वत हैं। ऐसे ही शाल्मली द्वीप में कुमुद, उत्तम, बलाहक, द्रोण, कंकमहिष, कुमुदमान नाम के सात पर्वत हैं। कुशद्वीप में भी विद्रुभ, हेम, इत्यादि सात पर्वत हैं। इसी प्रकार से क्रौञ्चादि द्वीपों में भी सात-सात पर्वत हैं। ये सातों द्वीप सात समुद्रों से घिरे हैं। लोकालोक नामक पर्वत पर आधे भाग में सूर्य की किरणें पहुँचती हैं तथा आधे में अन्धकार ही रहता है। जनलोक, महलोक इत्यादि सात लोक पुण्य लोक कहे गये हैं। नीचे के सात लोक

नरक लोक कहे गये हैं, जिनमें पापीजन अपने-अपने कर्मों का फल भोगते हैं।"

ब्रह्माण्ड के सभी लोकों में अष्ट मूर्ति भगवान व्यास हैं। एक बार यक्ष रूपी भगवान शिव को देखकर वायु, अग्नि आदि सब की शक्ति नष्ट हो गई। अग्नि एक छोटे से तिनके को भी नहीं जला सका। वायु उसे उड़ा नहीं सका। इत्यादि सभी देव शक्तिहीन हो गये। तब इ .द्र ने यक्ष से पूछा—आप कौन हैं ? तब यक्ष अन्तर्ध्यान हो गये और अम्बिका प्रकट हुई।

तब इन्द्र आदिक सभी देवताओं ने पूछा—हे ईश्वरी! हे देवि! यह यक्ष रूप में कौन थे। देवी ने कहा—ये साक्षात् परमब्रह्म शिव भगवान थे। तब तो सबने देवी को प्रणाम किया। देवी ने कहा मैं ही पूर्व में प्रकृति रूप हूँ और पुरुष रूप शिव हैं इन्हीं शिव की आज्ञा से प्रकृति रूप में सकल ब्रह्माण्ड की रचना करती हूँ। हे ब्राह्मणो! यह ज्योतिषगणों सहित सब जगत अजा (प्रकृति) स्वरूप ही है, ऐसा तुम्हें जानना चाहिए।

अण्ड में ज्योतिषगणों के प्रचार का कथन

सूतजी बोले—अब मैं ज्योतिषगणों का प्रचार तथा

संक्षेप से ब्रह्माण्ड के विषय में कहता हूँ। मानस के ऊपर मेरु पर पूर्व की ओर महेन्द्री पुरी है। दक्षिण में वारुणी पुरी है। पश्चिम में अमरावती तथा उत्तर में संयमनी पुरी है।

सूर्य जब दक्षिणायन होते हैं, तब शीघ्र गति होती है। उत्तरायण में मन्द गति होती है। जब आग्नेय में रहते हैं तब पराह्न समय और जब नैऋतु दिशा में रहते हैं तब पूर्वाह्न समय होता है। वायव्य में रहने पर अपराह्न तथा ईशान में पूर्वरात्र होती है। रथ सहित चलते हुए सूर्य की देव मुनि, गन्धर्व, अप्सरा, सर्प, राक्षस आदि अग्रषष्ठ से स्तुति करते हुए चलते हैं।

सूर्य की गति से ही ३० घड़ी का दिन तथा ३० घड़ी की रात्रि विद्वान लोग कहते हैं। सूर्य ही अपनी किरणों से वायु के द्वारा जल खींचता है तथा पृथ्वी पर वर्षा करता है। जल ही जगत का प्राण है। जल शिव रूप है और अर्धनारी रूप वाले शिव ही सूर्य रूप से जल की वर्षा करते हैं। हे ब्राह्मणो! इन शिव के प्रसाद से ही नाना प्रकार से वृष्टि होती है।

सूर्य रथ निर्णय वर्णन

सूतजी बोले—हे मुनियो! अब मैं आप लोगों से संक्षेप में सूर्य के रथ का तथा चन्द्र और ग्रहों के रथ का वर्णन करता हूँ।

सूर्य का रथ सुवर्ण मय है जो ब्रह्मा ने रचा है। सम्वत्सर इस रथ के अवयव हैं। यह तीन नाभि का चक्र और पाँच अरा वाला है। इस रथ को नौ सहस्त्र योजन का विस्तार है। सात घोड़े हैं जो छन्दों से निर्मित हैं। देवता तथा मुनिजन दिन रात्रि भास्कर रूपी शिव की स्तुति करते हैं। त्वष्टध, विष्णु,पुलस्त्य, पुलह, अत्रि, वसिष्ठ, अङ्गिरा, भारद्वाज, गौतम आदि ऋषि तक्षक एलापत्र आदि नाग, हा हा हू हू गन्धर्व, घृताची, पूर्वचित्ति आदि अप्सरायें ये सब सूर्य मण्डल में ही बसते हैं। इस प्रकार एक चक्र वाले रथ में जिसमें हरे रंग के सात घोड़े जुते हुए हैं ऐसे सूर्य दिन रात यात्रा करते हैं। रात्रि दिन आदि का विभाग सूर्य से ही होता है। सात द्वीपों वाली समुद्र पर्यन्त भूमि की यात्रा सूर्य अपने सात घोड़ों के रथ से पूर्ण करते हैं।

चन्द्रमा के रथ का वर्णन

सूतजी बोले—नक्षत्रों पर विचरने वाले चन्द्रमा का रथ तीन चक्रवाला, सौ अरा और १० सफेद घोड़ों से युक्त है। सोम (चन्द्रमा) देवताओं और पितृजनों के साथ शुक्ल पक्ष में सूर्य से ऊपर गमन करते हैं। पूर्णमासी को वह पूरे मण्डल सहित दिखते हैं। कृष्ण पक्ष की द्वितीया से चौदस तक देवता उनके अम्बुमय सुधा का पान करते हैं। इसके बाद वह सूर्य के तेज से फिर वृद्धि को प्राप्त होता है और पूर्णिमा को पूर्ण होता है। इस तरह कृष्ण पक्ष में कलाओं के क्षय और शुक्ल पक्ष में वृद्धि होती रहती है। पितर अमावस्या को चन्द्रमा में ही रहते हैं और अमृत पान कर एक महीने को तृप्त होकर चले जाते हैं। इस प्रकार वृद्धि और भय को प्राप्त हुए चन्द्रमा को वृद्धि शुक्ल पक्ष में सूर्य द्वारा ही मिलती है।

ज्योतिष चक्र में ग्रहचार का प्रतिपादन

सूतजी बोले—आठ घोड़ों से युक्त जल तेजोमय बुध का रथ है। इसमें घोड़े लटे हुये नहीं हैं वरन् सुन्दर सुन्दर नाना वर्ण वाले घोड़े हैं। शुक्राचार्य का आठ घोड़ों

का, मंगल का स्वर्णमय रथ तथा गुरु का भी हेममय रथ आठ घोड़ों वाला है। शनि का लोहे का रथ दस घोड़ों का जो काले रंग के हैं ऐसा रथ है। राहु का भी आठ घोड़ों का रथ है। ये सब बात रूपी रस्से से ध्रुव में बंधे हैं। जितने तारे हैं उतनी ही रस्सी हैं। ये सब घूमते हुए ध्रुव की परिक्रमा करते हैं। १००० योजन सूर्य का विस्कम्भ है और तिगुना उसमें मण्डल का विस्तार है। सूर्य के मण्डल से दुगना चन्द्रमा का विस्तार है। उन दोनों के समान ही राहु का विस्तार है जो नीचे चलता है।

दक्षिणायन मार्ग से जब सूर्य चलता है तब सब ग्रहों से नीचे चलता है। उससे ऊपर चन्द्रमा, उससे ऊपर बुध, बुध के ऊपर शुक्र तथा शुक्र के ऊपर वृहस्पति, उससे ऊपर शनिश्चर, उससे ऊपर सप्तर्षि मण्डल, सप्तर्षि मण्डल से भी ऊपर ध्रुव स्थित है। उसी ध्रुव को विष्णु लोक परम पद कहा है जिसको जानकर मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है। हे ब्राह्मणो! मैंने यह सूर्य आदिक ग्रहों की संक्षेप से स्थिति कही है। जैसा देखा तैसा सुना ब्रह्मा ने ग्रहों के स्वामी सूर्य का अभिषेक किया तथा रुद्र ने गुह को अभिषेक किया। इसलिए सूर्य आदि ग्रहों की पीड़ा में कार्य सिद्धि के लिये विद्वानों को यथा विधि अग्नि में हवन इत्यादि से अर्चना करनी चाहिए।

सूर्य का अभिषेक वर्णन

ऋषि बोले—ब्रह्मा ने देव, दैत्यों को जिस प्रकार से आधिपत्य के लिए अभिषिक्त किया, वह सब कहिए।

सूतजी बोले—प्रजापति ब्रह्मा ने ग्रहों के आधिपत्य में भगवान सूर्य को, नक्षत्रों और औषधि के स्वामित्य में सोम को, जल का वरुण को, धन का कुबेर को, आदित्यों में विष्णु को, वसुओं में पावक को, प्रजापतियों में दक्ष को, देवताओं में इन्द्र को, दैत्य और दानवों में प्रह्लाद को, पितरों में धर्म को, राक्षसों में नित्रऋति को, पशुओं में रुद्र को, नन्दियों में गणनायक को, वीरों में वीरभद्र को, मातृयों में चामुण्डा को, रुद्रों में नीललोहित को, विघ्नों का गजानन को, स्त्रियों में उमादेवी को, वाणी का सरस्वती को, पर्वतों का हिमालय को, नदियों में गङ्गा को, समुद्रों में क्षीर सागर को, वृक्षों में पीपल को, गन्धर्व विद्याधर किन्नरों का चित्ररथ को, नागों का अधिपति वासुकि, सर्पों का तक्षक को, पक्षियों का गरुड़ को, घोड़ों का उच्चैश्रवा को, वन के पशुओं का सिंह को, गौओं का वृषभ को, सेना का अधिपति गुह को अभिषिक्त किया। इसी प्रकार पृथ्वी का अधिपति पृथु को, चतुमूर्तियों में सर्वज्ञ शंकर को अभिषेक किया। सो हे ऋषियो! यह मैंने तुम्हें विस्तार से कह दिया, जिनको

पद्मयोनि ब्रह्मा ने अधिपति बनाकर अभिषेक किया था।

सूर्य की किरणों का वर्णन

सूतजी बोले—संशय में युक्त मुनि लोगों ने पूछा कि हे सूतजी! ज्योति का निर्णय विस्तार से कहिए।

हे मुनियो! सूर्य चन्द्र आदि की गतियों को पितामह ब्रह्मा ने इस लोक में अग्नि का विभाग किया है, सो पार्थिव दिव्य आदि भेद से अनेक प्रकार के हैं। वैदिक, जाठर, सौर ये तीनों अग्नि, जल, गर्भ वाली हैं। इससे सूर्य अपनी किरणों से जल पीता हुआ चमकता है। जल से पैदा हुई अग्नि जल से नहीं शान्त होती। मनुष्यों के उदर में जो अग्नि है वह भी शान्त नहीं होती, सूर्य उदय होता है और जल में शान्त होता है। इसी को दिन और रात का विभाग कहते हैं। चन्द्रमा भी मनुष्य, पितृ तथा देवताओं को तृप्त करता है। मनुष्यों को औषधियों से, सुधा से पितृयों को तथा अमृत से देवताओं को तृप्त करता है। हेमन्त में तथा शिशिर ऋतु में बर्फ को उत्पन्न करता है।

माघ मास में सूर्य वरुण नाम से, फाल्गुन में सूर्य

नाम से, चैत मास में अंशु नाम से, वैशाख में तापन नाम से, जेठ में इन्द्र नाम से, अषाढ़ में अर्यमा नाम से, सावन में विवस्वान नाम से, भाद्रपद में भग नाम से, क्वार में पर्जन्य नाम वाला, कार्तिक में तृष्टा, मार्ग शीर्ष में मित्र और पौष में सनातन विष्णु नाम से कहा गया है।

वसन्त ऋतु में सूर्य कपिल रंग का, ग्रीष्म में काँचन वर्ण का, वर्षा में श्वेत वर्ण का, शरद ऋतु में पांडु रंग का, हेमन्त में ताम्र वर्ण का तथा शिशिर में लोहित वर्ण का होता है। सूर्य भी औषधियों को बल देता है तथा सुधा से पितरों को तृप्त करता है और अमृत से देवों को तृप्त करता है। इस प्रकार लोकों में कार्य सिद्ध करने वाली हजारों रश्मियाँ सूर्य की कही गई हैं, जो लोकों में प्राप्त होकर ठण्डी गरम आदि हो जाती हैं। सूर्य नाम वाला भास्कर का मण्डल शुक्ल वर्ण का है। नक्षत्र, ग्रह आदि की स्थिति इसी में है और यही सबकी योनि है। चन्द्र, नक्षत्र, ग्रह सब सूर्य से ही उत्पन्न हैं। नक्षत्रों का स्वामी शिवजी का बायां नेत्र है। भास्कर शिव का दायां नेत्र है।

सूर्य की प्रभा का वर्णन

सूतजी बोले—शेष पाँच ग्रह भी स्वतन्त्र सामर्थवान ईश्वर ही है। देवताओं का सेनापति स्कन्द है वह मङ्गल ग्रह है। ज्ञानी लोग बुध को नारायण रूप कहते हैं। यमराज महाग्रह मन्दगामी शनिश्चर है। देवताओं के और असुरों के गुरु महा कान्ति वाले वृहस्पति और शुक्र ग्रह कहे हैं। अखिल लोक का मूल सूर्य है, इसमें कोई संशय नहीं है। इसी से सम्पूर्ण देव, दानव और असुर आदि उत्पन्न होते हैं। रुद्र, इन्द्र, उपेन्द्र, चन्द्र, अग्नि आदि सब देवताओं में कान्ति सम्पूर्ण तेज, जो भी है वह सर्वात्मा महादेव जी ही का है। तीनों लोकों का स्वामी सब देवताओं का मूल सूर्य ही है। उसी में सब लय होता है और उसी से सब उत्पन्न होता है। उसी से क्षण, मुहूर्त, दिन, रात, पक्ष, मास, ऋतु, संवत्सर, काल, संख्या का ज्ञान होता है। काल के बिना न नियम है, न दीक्षा है, न क्रम है। ऋतु विभाग यदि न हो तो पुष्प, फल, मूल आदि कैसे हों ? धान्य, तृण और औषधियों की उत्पत्ति आदि का अभाव हो जाएगा। जगत को प्रकाशित करने वाला भास्कर रुद्र रूप ही है। वही काल रूप है, वही अग्निरूप है, वही बारह प्रकार का प्रजापति है, वही चराचर तीनों लोकों को तपाता है, जैसे प्रभाकर दीपक गृह मध्य में

रहकर ऊपर नीचे तथा आस पास के अन्धकार को दूर करता है, उसी प्रकार हजारों किरणों वाला सूर्य जगत को प्रकाशवान करता है। सूर्य की हजारों प्रकार की किरणों का वर्णन मैंने पहले कहा है उनमें सात किरणें अति श्रेष्ठ हैं वे ग्रहों की योनि है। सुषुम्न, हरिकेश, विश्वकर्मा, विश्वव्यचा, अन्नद्ध, सर्वावसु, स्वराट ये सात किरणें मुख्य हैं।

इस प्रकार सूर्य के प्रभाव से ही नक्षत्र ग्रह और तारे आकाश में सब दीखते हैं। फिर यह संसार इसी प्रकार होता रहता है। ये नक्षत्र क्षय को प्राप्त नहीं होते, इससे नक्षत्र कहा जाता है।

ग्रहों की स्थिति का वर्णन

सूतजी बोले—ये सब क्षेत्र सूर्य की किरणों के द्वारा भी भासित होते हैं। सूर्य और चन्द्रमा के मण्डल आकाश में चमकते हैं। ये गोल घड़ा के समान जलमय और तेजमय हैं। चन्द्रमा का मण्डल घन जलात्मक और सूर्य का मण्डल घन तेजोमय है। सब देवताओं के ये स्थान हैं। सौर स्थान में सूर्य और सौम्य स्थान में सोम प्रवेश करता है। शौक्र में शुक्र, वृहत् से वृहस्पति, लोहित

स्थान में मङ्गल और शनैश्चर स्थान में शनी, बौध में बुध, स्वरभानु स्थान में राहु, विवस्वान में सूर्य का स्थान अग्निमय है। हिमाँशु चन्द्रमा का स्थान सफेद और जलमय है। नौ हजार योजन सूर्य का विसकम्भ है, सूर्य से दुगना विस्तार चन्द्रमा का है। उन दोनों के बराबर राहु है जो नीचे नीचे चलता है। वह इनको पीड़ा देता है, इससे स्वरभानु कहा जाता है। विवस्वान सूर्य अदिति का पुत्र विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुआ। इसी प्रकार शीतल किरणों वाला चन्द्रमा उत्पन्न हुआ। इसी तरह अन्य ग्रहों की भी उत्पत्ति जाननी चाहिए। चार प्रकार के भूतों के प्रवर्तक और निवर्तक भगवान रुद्र हैं। इस प्रकार ज्योतिष चक्र का सन्निवेश लोकों की स्थिति के लिए महादेव ने ही निर्माण किया है। ज्योतिष चक्र का गतागत ज्ञान चर्म नेत्रों वाले पुरुष शास्त्र से, अनुमान से तथा प्रत्यक्ष देखकर करते हैं। ज्योतिष चक्र का मान निर्णय करने में चक्षु, शास्त्र, जन्म, लेख्य और गणित पाँच हेतु जानने चाहिए।

भुवन कोश में ध्रुव की स्थिति का कथन

ऋषि बोले—विष्णु भगवान की कृपा से सब ग्रहों

का मेढ़ीभूत (मध्य) किस प्रकार रहे, सो हमारे प्रति कहने की कृपा करो।

सूतजी बोले—इसी प्रकार मैंने मार्कण्डेय ऋषि से पूछा था और जो उन्होंने मुझे बताया, वह तुम्हारे प्रति वर्णन करता हूँ।

मार्कण्डेय बोले—सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ चक्रवर्ती राजा उत्तानपाद नाम वाला इस पृथ्वी पर राज्य करता था। उनके सुनीति और सुरुचि नामक दो स्त्रियाँ थीं। बड़ी रानी सुनीति थी जिसका पुत्र कुल का दीपक ध्रुव था। जब यह सात वर्ष का हुआ तब पिता की गोद में बैठा हुआ था। सुरुचि ने इसका तिरस्कार करके इसको गोदी में से हटाकर अपने पुत्र को बिठा दिया। तब यह रोता हुआ अपनी माता के पास आया। तब इसकी माता बोली—हे पुत्र! तू ध्रुव स्थान को प्राप्त कर जो कभी चलायमान ही नहीं होता है।

माता के वचन सुनकर वह वन को चला गया वहाँ इसको विश्वामित्र ऋषि मिले। उन्हें प्रणाम करके सब वृत्तान्त सुनाया। मुनि बोले—तू क्लेशों के नाश करने वाले केशव भागवान का ध्यान कर जो भगवान शंकर के दाहिने अंग से उत्पन्न हुए हैं। ''ॐ नमो वासुदेवाय'' मन्त्र का तू जप कर। तब ध्रुव ने इस मन्त्र का बड़ी निष्ठा से सहस्त्रों वर्षों तक जप किया। तब काले मेघ के समान

कान्ति वाले विष्णु भगवान गरुड़ पर चढ़कर प्रकट हुए। शंख के भाग से गोविन्द ने ध्रुव के मुख का स्पर्श किया। जिसके प्रभाव से वह परम ज्ञान को प्राप्त कर भगवान की स्तुति करने लगा।

भगवान ने कहा—सबसे ऊपर जो ध्रुव नाम का स्थान है उसे तू अपनी माता के साथ प्राप्त कर। देवता, गन्धर्व, सिद्ध ऋषि उस स्थान की परिक्रमा करते रहते हैं। विष्णु भगवान की आज्ञा से ध्रुव ने ज्योतिष चक्र के उत्तम स्थान को प्राप्त किया। महान तेज वाले ध्रुव द्वादश अक्षर मन्त्र विद्या (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) से इस बड़ी भारी सिद्धि को प्राप्त हुए। हे ऋषियो! यह मैंने तुम्हें संक्षेप से कहा। जो वासुदेव भगवान को प्रणाम करता है, वह ध्रुव लोक को प्राप्त कर ध्रुव सालोक्य को प्राप्त करता है।

देवादिकों की सृष्टि का वर्णन

ऋषि बोले—देवताओं की, दानवों की, गन्धर्वों की उत्पत्ति भी हे सूतजी! हमसे कहिये।

सूतजी बोले—पूर्व की सृष्टि संकल्प मात्र से, दर्शन से तथा स्पर्श से ही हुई। दक्ष के बाद सृष्टि मैथुन के

द्वारा उत्पन्न होने लगी। जब देव ऋषि पन्नगों की सृष्टि का विस्तार नहीं हुआ तब मैथुन से सृष्टि उत्पन्न हुई। दक्ष ने पंचसूती स्त्री में दस हजार पुत्र पैदा किये। उनको देखकर प्रजा की रचना के लिए दक्ष ने कहा। नारद जी उन दक्षों के पुत्रों से बोले कि तुम पृथ्वी का प्रमाण जानकर पीछे से सृष्टि करना। वे नारद के वचन सुनकर तपस्या के लिए चले गए और लौटकर नहीं आये। इसके बाद दक्ष ने पुनः अपनी स्त्री से दस हजार पुत्र पैदा किये जो शवल नाम वाले थे। नारद ने उनके पास जाकर भी यही कहा कि पहले तुम भू के प्रमाण को जानो तथा अपने भाइयों की गति को प्राप्त करो तब सृष्टि रचना करना। वह भी नारद के वचन से तपस्या करके अपने भाइयों की गति को प्राप्त हुए और लौटकर नहीं आए। तब दक्ष प्रजापति ने वैरिणी नाम की स्त्री में साठ कन्या पैदा कीं। उनमें से दस धर्म को प्रदान कीं। तेरह कश्यप के लिए और २७ सोम के लिए तथा ४ अरिष्ट नेमि के लिए दो भृगु पुत्र के लिए, दो कृशाश्व के लिए, दो अङ्गिरा के लिए प्रदान कीं।

अब मैं हे मुनीश्वरो! इन देवताओं के नाम विस्तार पूर्वक कहता हूँ, सो सुनो—

मरुतवती, वसु, अर्यमा, लम्बा, भानु, अरुन्धती, संकल्पा, महूर्ता, साध्या, विश्वभामिनी ये धर्म की पत्नी

थीं। इनके पुत्र ये हैं—

विश्वभामिनी से विश्वेदेवा पैदा हुए, साध्या से साध्य, मरुतवती में वरुत्वान, वसु से बसव, भानु से भानव, महूर्ता से महूर्तिक, लम्बा से घोष, संकल्पा से संकल्प इत्यादि पुत्र हुए। वसु से आठ वसु पैदा हुए जिनके नाम अजैकपाल, अहरब्रह्म इत्यादि हैं।

कश्यप की पत्नी के जो पुत्र पैदा हुए उन्हें कहता हूँ। कश्यप की स्त्री, अदिति, दिति, अरिष्टा, सुरसा, मुनि, सुरभि, विनता, ताम्रा, क्रोध, वशा, इला, कद्रू, त्विषाद, अङ्ग इत्यादिक थीं जिनके पुत्रों को भी कहता हूँ—

चाक्षुष मन्वन्तर में तवशित नाम के देवता हैं। वह वैवस्वत मन्वन्तर में १२ आदित्य हुए। जिनके नाम हैं—इन्द्र, धाता, भग, त्वष्टा, मित्र, वरुण, अर्यमा, विवस्वान, सविता, पूषा, अंशमान, विष्णु, ये हजारों किरणों वाले १२ आदित्य हैं।

कश्यप के दिति से दो पुत्र हुए जिनका नाम हिरण्य, कश्यपु और हिरण्याक्ष है। दनु में कश्यप से १०० पुत्र पैदा हुए जिनमें विप्रचित्त प्रधान था। ताम्रा ने ६ कन्यायें जनीं। वे शुकी, श्वेनी, सुग्रीवी, गृधिका, भासी, शुनि नाम वाली थीं। शुकी ने शुक और उलूकों को पैदा किया, श्येनी ने श्येनों (बाजों) को, भासी ने कुरङ्गों

को पैदा किया। गृधिका से गृद्ध तथा कपोत पारावत, हंस, सारस, कारन्ड, प्लव, पक्षियों को शुचि ने उत्पन्न किया। सुग्रीवी ने अज, मेष, खट, ऊँट आदि जने। विनता ने गरुड़, अरुण जने। कद्रू ने हजार सिर वाले हजारों नागों को उत्पन्न किया, जिनमें २६ प्रधान कहे हैं। शेष, वासुकी, कर्कोटक, शंख, ऐरावत, कम्बल, धनञ्जय, महानील, पद्माश्वतर, तक्षक आदि कहे हैं। क्रोधवंशा रक्षोगणों को उत्पन्न करती हुई किन्नर, गन्धर्वों को अरिष्टि ने पैदा किया। त्वष्टा ने यक्ष और राक्षसों को उत्पन्न किया। ये कश्यप ऋषि की सन्तान संक्षेप में कही। इनका पुत्र और पौत्रों का वंश तो बहुत सा है। कश्यप ने गोत्र की कामना से फिर तप किया कि गोत्र को चलाने वाला पुत्र मुझे प्राप्त हो। तब उनके ब्रह्मवादी दो पुत्र हुए। इनका नाम वत्सर और असित हुआ। वत्सर ने नैबुध और रैम्भ दो पुत्र हुए। असित से एकपर्णा नामक स्त्री में ब्रह्मिष्ठ पैदा हुआ।

वशिष्ठ ने अरुन्धती नामक पत्नी से सौ पुत्र उत्पन्न हुए जिनमें सबसे बड़ा शक्ति था। शक्ति की स्त्री अदृश्यन्ती में पाराशर उत्पन्न हुए। शक्ति को रुधिर नाम के एक राक्षस ने भक्षण कर लिया। पाराशर से काली ने द्वैपायन पुत्र उत्पन्न किया। द्वैपायन ने अरुणी में शुक नामक पुत्र उत्पन्न किया। पितरों की पुत्री पीवरी से शुक

के भूरिश्रवा, उपमन्यु, प्रभु, शम्भु, कृष्ण आदि पाँच पुत्र हुए। एक कार्तिमती नाम की कन्या भी हुई।

पाराशरों के ४ पक्ष कहे हैं। वशिष्ठ से घृताची में कपिञ्जल पैदा हुआ जो त्रिमूर्ति कहा जाता है। उपमन्यु की सन्तान बहुत हैं वशिष्ठ के भी १० पक्ष हैं। ये सब ब्रह्मा के मानसिक पुत्रों का वर्णन किया गया है जिनके कि भूमि पर अनेक वंश प्रचलित हैं। इस प्रकार ये देव ऋषि कुल में उत्पन्न पुत्र और पौत्र हजारों की संख्या वाले हैं। ये त्रिलोकी को धारण करने में समर्थ हैं। इनसे तीनों लोक इस प्रकार व्याप्त हैं जिस प्रकार संसार की किरणों से व्याप्त हैं।

वशिष्ठ के वंश वर्णन में पाराशर के लिए पुलस्त्य द्वारा पुराण रचना का वरदान

ऋषि बोले—हे सूतजी! रुधिर राक्षस ने छोटे भाइयों के साथ शक्ति ऋषि को कैसे खा लिया? यह कथा हमें कहिए।

सूतजी बोले—रुधिर नाम का राक्षस वशिष्ठ के पुत्र शक्ति को अनुजों सहित भक्षण कर गया। वशिष्ठ जी कल्माषपाद राजा के यहाँ यज्ञ करा रहे थे। विश्वामित्र

से प्रेरित वह राक्षस भाइयों सहित शक्ति को भक्षण कर गया। वशिष्ठ ने जब यह सुना तो हा पुत्र! हा पुत्र! कहते हुए अरुन्धती के सहित शोक से युक्त होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

पुत्र के बिना अब हम जीवित नहीं रहेंगे ऐसा निश्चय करके पर्वत की चोटी से पृथ्वी पर गिर पड़े। उनको इस प्रकार गिरता हुआ देखकर वशिष्ठ की पुत्रवधू शक्ति की स्त्री इनको समझाने लगी कि हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! इस शरीर की रक्षा करो। मेरे गर्भ में आपका पौत्र स्थित है उसे आप शीघ्र ही देखोगे। ऐसे समझाकर उन्हें जल से मुँह धुलाकर आश्रम में ले गई। पुत्रवधू के वचनों को सुनकर वशिष्ठ को कुछ होश आया। परन्तु पुनः दोनों ही वशिष्ठ और अरुन्धती विलाप करने लगे। जैसे विष्णु की नाभि में विराजमान ब्रह्मा हो वैसे ही गर्भ में स्थित उस कुमार ने वेद की एक ऋचा बोली। उसे सुनकर भगवान वशिष्ठ बड़े अचम्भे में पड़ गए कि यह किसकी बोली है। तब आकाश में स्थित कमल नयन विष्णु भगवान ने वशिष्ठ से कहा—हे पुत्र प्रेमी वशिष्ठ जी! तुम्हारे पौत्र के मुख से ही यह ऋचा निकली है। शक्ति का पुत्र और तुम्हारा नाती यह बालक मेरे ही समान है। अतः तुम शोक को छोड़ दो। तुम्हारा यह नाती रुद्र की पूजा में परायण तथा रुद्र के प्रभाव से अपने कुल को

तारेगा। इस प्रकार कहकर विष्णु भगवान अन्तर्ध्यान हो गए। विष्णु भगवान को प्रणाम करके हे पुत्र! तेरे पुत्र का दर्शन करके तेरी माता के साथ तेरे ही पास आऊँगा, ऐसा कहने लगे।

अदृश्यन्ती भी अपने पेट को ताड़न करती हुई पृथ्वी पर गिर पड़ी तब पति शोकाकुल उस अदृश्यन्ती को अरुन्धती और वशिष्ठ ने उठाकर समझाया कि हे विचार वाली! तेरे गर्भ में स्थित शक्ति के पुत्र का मुख रूपी अमृत पान करने को हम जीवित हैं। तू इस देह की रक्षा कर।

अदृश्यन्ती बोली—हे मुनि श्रेष्ठ! अशुभ हो या शुभ हो इस शरीर का मैं पालन करूँगी। भर्त्ता के बिना मैं दीन नारी दुखी हूँ। माता, पिता, पुत्र, पौत्र, ससुर ये सब बान्धव हैं परन्तु स्त्रियों की परागति तो पति ही है। मेरे हृदय की कठोरता देखो कि प्राण समान पति को त्याग कर अभी जीवित हूँ ऐसे पुत्रवधू के वचन सुनकर वशिष्ठ जी उसे समझाकर अरुन्धती के साथ आश्रम में ले गए।

वह गर्भ का पालन करती हुई दसवें मास में पुत्र उत्पन्न करती हुई जिस प्रकार अदिति ने विष्णु को उत्पन्न किया था। शक्ति के पुत्र उत्पन्न होने पर पित्रीश्वर बड़े प्रसन्न हुए। देवता पुष्पों की वर्षा करने लगे, आश्रम के मुनि लोग भी हर्षित हुए। जैसे मेघ जल से सूर्य प्रकट

होता है, वैसे ही यह पुत्र भी अदृश्यन्ती के उत्पन्न हुआ था। शक्ति के पुत्र को देखकर वशिष्ठ जी प्रसन्न होकर उसे समझाने लगे कि अब तुम रोओ मत। इस पुत्र का पालन कर।

शनि पुत्र ने अपनी माता से कहा—हे अम्ब! मंगलमय भूषणों के बिना तेरा शरीर शोभा को नहीं प्राप्त हो रहा है जिस प्रकार चन्द्रमा के बिना रात शोभा वाली नहीं होती है। सो हे माता! तैने आभूषण क्यों त्याग दिये हैं ? वह मुझे बता। अदृश्यन्ती पुत्र के वचन सुनकर कुछ भी नहीं बोली। तब पुत्र ने पूछा कि हे माता! महा तेजस्वी मेरे पिता कहाँ हैं वह मुझसे कह। ऐसे पुत्र के वचन सुनकर बोली—हे तात्! तेरा पिता राक्षसों ने भक्षण कर लिया ऐसा कहकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। पौत्र के ऐसे वचन सुनकर वशिष्ठ तथा आश्रम वासी सभी दुखी हुए। माता के वचन सुनकर कि पिताजी को राक्षसों ने खा लिया तब तो वह पाराशर नामक पुत्र बोला—हे माता! चराचर सहित तीनों लोक रुद्र का स्वरूप है। सो मैं उनका पूजन करके क्षण मात्र में अपने पिता के आपको दर्शन कराऊँगा। पुत्र के ऐसे वचन सुनकर माता बोली—तेरा यह वचन सत्य हो तू शिव का पूजन कर। वशिष्ठ ने कहा—कि हे पुत्र! तेरा संकल्प ठीक है। राक्षसों के नाश के लिए सर्वेश्वर शिव का

पूजन कर। वशिष्ठ को अरुन्धती को और अपनी माता को प्रणाम करके क्षण मात्र में वह पाँशु (धूली) की एक लिंग-शिव मूर्ति बनाकर शिव सूक्त और त्रयम्बक सूक्त से पूजन करके तथा 'शिव संकल्प' मन्त्र द्वारा पूजन करके यथा विधि अर्घ देकर पाराशर बोला—हे भगवान रुद्र! रुधिर राक्षस ने महा तेजस्वी मेरे पिता को मैं भाइयों सहित देखना चाहता हूँ। इस प्रकार शिवलिंग को प्रणाम करके हा रुद्र! हा रुद्र! कहकर रोने लगा और गिर पड़ा। उसको दुखी देखकर शंकर जी प्रार्थना से बोले—कि हे महाभागे! मुझ में आसक्त रोते हुए उस ब्राह्मण को देखो। वह महादेवी रुद्र में आसक्त तथा लिंगार्चन में तत्पर उसको देखकर रुद्र भगवान से बोलीं—हे परमेश्वर! इसको वांछित वरदान दो। शंकर जी ने कहा—हे पार्वती! मैं इस ब्राह्मण की रक्षा करूँगा। मेरे दर्शन करने योग्य दृष्टि मैं इसको देता हूँ। यह कहकर दिव्य दृष्टि उसको दी जिसको प्राप्त कर वह ब्रह्मा विष्णु आदि से सेवित भगवान नीललोहित का दर्शन करने लगा, तब तो वह उनके चरणों में गिर पड़ा। भवानी और नन्दी को प्रणाम करके कहने लगा कि मेरे समान देवता दानव आदि कोई भी नहीं है, आज मेरा जीवन सफल है। जो मेरी रक्षा के लिए बाल चन्द्रमा धारण करने वाले शिवजी प्रकट हुए हैं।

उसी समय आकाश में स्थित भाइयों के सहित पाराशर के पिता का दर्शन किया। सूर्य मण्डल के समान विमान में बैठे भाइयों के सहित पिता का दर्शन कर प्रणाम किया और बड़ा प्रसन्न हुआ। तब वृषभध्वज शंकर ने वशिष्ठ पुत्र शक्ति से कहा—हे शक्ति! तुम आनन्द के अश्रुओं से युक्त नेत्र से अपने पुत्र को देखा। अरुन्धती कल्याणी माता को, भार्या को तथा पिता वशिष्ठ को देखो तथा माता पिता को नमस्कार करो।

शंकर की आज्ञा से शक्ति ने माता पिता को प्रणाम किया। शक्ति बोले—हे वत्स! हे पुत्र पाराशर! तुमने गर्भ में स्थित मेरी रक्षा की है। मैंने अणुमादिक ऐश्वर्य तेरे मुख को देखकर सब प्राप्त कर लिये। अदृश्यन्ती अरुन्धती तथा पिता वशिष्ठ इन सबकी रक्षा करो। हे पुत्र! हमारे सब वंश को तुमने तारण कर दिया। पुत्र से लोक को जीतने वाली श्रुति को तुमने चरितार्थ कर दिया। अब तुम शंकर जी से इच्छित वरदान माँगो। मैं भी भाइयों सहित पिता को प्रणाम करके भार्या को देखकर तथा शंकर को प्रणाम करता हूँ और ऐसा कहकर प्रणाम कर शक्ति पितृलोक को चले गए।

तब महादेव जी भी पाराशर पर अनुग्रह करके अन्तर्ध्यान हो गए। शिव के चले जाने पर महेश्वर को प्रणाम करके मन्त्रों के द्वारा राक्षसों को वह पाराशर

जलाने लगा। मुनियों सहित वशिष्ठ जी ने कहा—हे तात्! क्रोध मत करो। राक्षसों ने तुम्हारे पिता का कुछ अपराध नहीं किया, क्रोध मूर्खों को होता है। बुद्धिमान लोग क्रोध नहीं करते। हे तात्! कौन किसको मारता है। यश और तप का क्रोध नाश करता है। इससे अनपराधी राक्षसों को नाश मत करो। इनको छोड़ो। क्योंकि साधु क्षमा के समान होते हैं। वशिष्ठ के वाक्य से पाराशर ने राक्षसों के मारने वाले यज्ञ को समाप्त किया। वशिष्ठ जी इससे प्रसन्न हुए।

इस यज्ञ में ब्रह्मा के पुत्र पुलस्त्य जी भी पधारे। वशिष्ठ जी ने इनको अर्घ पाद्य से पूजन कर आसन पर बैठाया। प्रणाम करते को देख मुनि बोले—कि हे पाराशर! वशिष्ठ के वाक्य से यज्ञ समाप्त कह क्षमा को तुमने धारण किया है। इससे तुम सर्व शास्त्रों को जान जाओगे। हे महाभाग! दूसरा वर यह भी मैं देता हूँ कि तुम पुराण संहिता को रचने वाले होगे। प्रवृत्ति और निवृत्ति के कर्म में तुम्हारी बुद्धि निर्मल रहेगी। मेरी कृपा से तुम असन्दिग्ध रहोगे। फिर भगवान वशिष्ठ बोले—हे तात्! महात्मा पुलस्त्य ने जो कहा है वह सब सत्य हो। तब पुलस्त्य और वशिष्ठ के प्रसाद से पराशर ने वैष्णव (विष्णु) पुराण की रचना की। छः प्रकार का समस्त अर्थ शास्त्र और ज्ञान का संचय इसमें भरा है। छः हजार

मन्त्रों के वेदार्थ से मुक्त पुराण संहिता में चौथा पुराण है। यह मैंने वशिष्ठ के वंश का वर्णन संक्षेप से और शक्ति पुत्र पराशर का प्रभाव तथा वर्णन आप लोगों को सुनाया।

आदित्य वंश वर्णन में तण्डिकृत शिव सहस्त्रनाम

ऋषि बोले—हे सूतजी! आदित्य वंश का और सोम वंश का हमारे प्रति वर्णन कीजिये।

सूतजी बोले—अदिति ने कश्यप ऋषि के द्वारा आदित्य नामक पुत्र को उत्पन्न किया। आदित्य की चार पत्नी हुईं। वे संज्ञा, राज्ञी, प्रभा, छाया नाम वाली थीं। संज्ञा ने सूर्य के द्वारा मनु को उत्पन्न किया, राज्ञी ने यम यमुना और रैवत को पैदा किया। प्रभा ने आदित्य के द्वारा प्रभात को पैदा किया। छाया ने सूर्य से, सावर्णि, शनि, तपती तथा वृष्टि को पैदा किया। छाया अपने पुत्र से भी ज्यादा यम को प्रेम करती थी। मनु ने सहसका और क्रोध में आकर दाहिने पैर से उसे मारा। तव छाया अधिक दुखी हुई और यम का एक पैर खराब हो गया जिसमें राध रुधिर और कीड़ा पड़ गए। तब उसने गोकर्ण

में जाकर हजारों वर्ष शिव की आराधना की। शिव के प्रसाद से उसे पितृ लोक का आधिपत्य मिला और शाप से छूट गया।

प्रथम मनु से नौ पुत्र पैदा हुए। ये इक्ष्वाकु, नभग, धृष्णु, शर्याति, नारिश्यन्त, नाभाग, अरिष्ट, करुष, पृषध्र थे। इला, जेष्ठा, वरिष्ठा ये पुरुषत्व को प्राप्त हुईं। ये मनु की पुत्री थीं। इला का नाम सुद्युम्न हुआ। मनु यह सुद्युम्न नाम का पुत्र सोम वंश की वृद्धि करने वाला हुआ। उत्कल, गय, विनितास्व नामक इसके पुत्र उत्पन्न हुए।

हरीश्व से दृशदवती में बसुमना नाम का पुत्र हुआ। उसका पुत्र त्रिधन्वा नाम का हुआ। ब्रह्मा पुत्र तण्डि के द्वारा वह शिष्यता को प्राप्त हुआ। ब्रह्म पुत्र तडित ने शिव सहस्त्रनाम के द्वारा गाणपत्य पदवी को प्राप्त किया। ऋषि बोले—हे सूतजी! शिवजी के सहस्त्रनाम को हमारे प्रति वर्णन करो। जिसके द्वारा तण्डि गाणपत्य पद को प्राप्त हुआ।

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो! वह १०८ नाम से अधिक एक हजार (११०८) नाम वाला वह स्तोत्र मैं तुम्हें कहता हूँ सो सुनो। तब सूतजी ने शिव के स्थिर, स्थाणु, प्रभु, भानु, प्रवर, वरद, सर्वात्मा, सर्व विख्यात, सहस्त्राक्ष, विशालाक्ष, सोम, नक्षत्र, साधक, चन्द्र, शनि, केतु, ग्रह इत्यादि ११०८ नाम वाला महा पुण्यकारक स्तोत्र

सुनाया। जिसको पढ़ने तथा ब्राह्मणों को सुनाने से हजार अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। ब्रह्महत्या, शराब पीने वाला, चोर, गुरु की शैय्या पर शमन करने वाला, शरणागतघाती, मित्र विश्वास घातक, मातृ हत्यारा, वीर हत्यारा, भ्रूण हत्यारा आदि घोर पापी भी इसका शंकर के आश्रय में रहकर तीनों कालों में एक वर्ष तक लगातार जप करने पर सब पापों से छूट जाता है।

सोम वंश के कथन में धन्वा का और ययाति का चरित्र वर्णन

सूतजी बोले—हे ऋषियो! त्रिधन्वा ने देव तण्डि की कृपा से हजार अश्वमेध यज्ञ का फल पाकर गाणपत्य पद को प्राप्त किया। उसका पुत्र त्रय्यारुण नाम वाला हुआ। उसका भी पुत्र सत्यव्रत हुआ जिसने विदर्भ की भार्या का हरण किया। चूंकि उसने बिना पाणिग्रहण मन्त्र आदि से उसका हर लिया था इससे उसके पिता ने उसे त्याग दिया। पिता के द्वारा निकाले जाने पर वह पिता से बोला कि मैं अब कहाँ रहूँ तो पिता ने कहा कि तू चाण्डालों में जाकर रह। ऐसा कहकर पिता तो जङ्गल

तप हेतु चला गया। वह सत्यव्रत सर्वलोक में त्रिशंकु के नाम से विख्यात हुआ। विश्वामित्र ने उसे पिता के राज्य पर बिठाकर यज्ञ कराया और उसे शरीर सहित स्वर्ग भेजा। उसकी भार्या ने हरिश्चन्द्र नाम का पुत्र उत्पन्न किया। उसके भी एक पुत्र हुआ जिसका नाम रोहित्त रखा गया। उसी वंश में सगर हुआ। सगर की दो भार्या थीं, प्रभा और भानुमती। प्रभाव के ६० हजार पुत्र हुए और दूसरी भानुमती के केवल एक ही पुत्र हुआ जिसका नाम असमंजस था। सगर के साठ हजार पुत्र पृथ्वी को खोदते हुए कपिल मुनि के हुंकारसे दग्ध होकर मर गए।

असमंजस का पुत्र अंशुमान, उसका पुत्र दिलीप और उसका पुत्र भगीरथ हुआ, जिसने तपस्या करके पृथ्वी पर गंगा का अवतरण कराया। भगीरथ का पुत्र श्रुत हुआ, उनका नाभाग। नाभाग का अम्बरीष पुत्र हुआ। ये इक्ष्वाकु कुल के ही राजा हैं। इसी वंश में राजा हैं। इसी वंश में राजा दीर्घबाहु हुआ। उसका पुत्र दिलीप, दिलीप का रघु, रघु का अज और अज का दशरथ पुत्र हुआ। दशरथ के राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न चार पुत्र हुये। राम के लव और कुश दो पुत्र हुये। राम ने रावण को मारा और पृथ्वी पर दस हजार वर्ष तक राज्य किया। ये इक्ष्वाकु वंश में होने वाले सभी राजा रुद्र के भक्त थे। सब ही पाशुपत ज्ञान का अध्ययन करके यज्ञ द्वारा शिव

को प्रसन्न कर स्वर्गवासी हुए।

पुरुरवा नाम का एक शिव भक्त राजा हुआ जिसके वंश में नहुष हुआ। नहुष के ६ पुत्र हुये जिनके नाम यति, ययाति, संपाति, आयाति, अन्धक, विजाति थे। ज्येष्ठ पुत्र यति तो मोक्षार्थी होकर ब्रह्म में लीन हो गया। पाँचों में सबसे श्रेष्ठ ययाति था। उसकी देवयानी शुक्राचार्य की पुत्री और शर्मिष्ठा वृषवर्मा की पुत्री दो भार्या थीं। यदु और तुर्वसु दो पुत्र देवयानी के हुये और द्रुह्य, अनु, पुरु तीन शर्मिष्ठा के हुये। शुक्र ने ययाति को स्वर्ण मय रथ दिव्य घोड़ों से युक्त तथा दिव्य बाणों से युक्त दो तरकस दिये थे। जिनसे ययाति ने ६ महीने के भीतर ही सब पृथ्वी को जीत लिया था।

ययाति ने छोटे पुत्र पुरु को राज्याभिषेक करने की तैयारी की तब ब्राह्मणादि सभी वर्ण के मनुष्य कहने लगे कि बड़े पुत्र यदु के होते हुये छोटे पुत्र शुक के दौहित्र देवयानी के पुत्र को क्यों अभिषेक करना चाहते हो? ये सब ब्राह्मण उसे धर्म की बात समझाने लगे कि हे राजा! तुम धर्म का पालन करो।

सोम वंश के वर्णन में ययाति का चरित्र

ययाति बेला—ब्राह्मणो! आप सभी मेरी बात सुनिये। जिससे मैंने अपने बड़े पुत्र को राज्य नहीं दिया है। मेरा ज्येष्ठ पुत्र यदु ने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया। जो विपरीत मति वाला हो वह पुत्र नहीं है, ऐसा सन्तों का मत है। माता पिता की आज्ञा पालन करने वाला पुत्र ही प्रशंसा का पात्र होता है। छोटे पुत्र पुरु ने मेरी आज्ञा का पालन किया तथा विशेष रूप से माना है। उसने मेरी जरा (बुढ़ापे) को धारण किया है तथा शुक्राचार्य ने भी ऐसा ही वरदान दिया था कि जो तुम्हारे बुढ़ापे को धारण करेगा वही राज्य का अधिकारी होगा। इसलिये आप जान लें कि पुरु राज्य का अधिकारी है।

ऋषि बोले—जो पुत्र गुणों से सम्पन्न हो तथा माता पिता की आज्ञा मानने वाला हो वह छोटा होने पर भी राजा बनने योग्य है और सभी प्रकार के कल्याण को पाता है। अतः शुक्राचार्य के वरदान से वही राज्य का अधिकारी है इसमें अन्यथा नहीं करना चाहिये।

सूतजी बोले—इस प्रकार सन्तुष्ट हुए जनपद के द्वारा राजा ययाति ने अपने प्रिय छोटे पुत्र पुरु को राज्य में अभिषेक किया। दक्षिण पूर्व दिशा में शासन का भार वसु को सौंप दिया। दक्षिण दिशा में राजा ने बड़े पुत्र

यदु को नियोजित किया। पश्चिम दिशा में द्रुह्य नामक पुत्र को तथा उत्तर दिशा में अनु को राज्य का भार सौंपा। इस प्रकार सात द्वीपों और समुद्रों वाली पृथ्वी को राजा नहुष ने सौंप दिया। इस प्रकार राज्य देकर वह राजा प्रीतिमान होकर उपदेश करने लगा कि सभी कामनाओं को इस प्रकार दबाकर रखना चाहिए, जिस परकार कछुआ अपने अंगों को अपने में समेट कर रख लेता है। कामनायें उपभोग करने से शान्त नहीं होतीं उससे तो वे और अधिक बढ़ती हैं, जिस प्रकार हवन की अग्नि घी डालने से और अधिक प्रज्वलित होती है। पृथ्वी, धन, धान्य, सोना, पशु, स्त्री एक मनुष्य की भी कामना के बराबर हैं ऐसा मानकर कामनाओं का दमन करना चाहिए। मनसा वाचा कर्मणा जो सब प्राणियों में पाप कर्म नहीं करता वह ब्रह्म को प्राप्त करता है। जो दूसरे से नहीं डरता तथा न दूसरों को डराता है, जो दूसरों से न तो बैर करता है और न दूसरों की निन्दा करता है, वह ब्रह्म सम्पत्ति को प्राप्त करता है। चाहे केश जीर्ण हो जायें, दाँत जीर्ण हो जायें, आँखें जीर्ण हो जायें, कान जीर्ण हो जायें, लेकिन जीवित रहने की आशा, धन की आशा कभी भी जीर्ण नहीं होती। संसार के जितने भी सुख हैं वह तृष्णा के नाश होने पर जो सुख मिलता है उसकी बराबरी कभी नहीं कर सकते। अतः तृष्णा का

त्याग ही परम सुख है। ऐसा कहकर राजा बन को तप के लिए चला गया। वहाँ अत्यन्त तप करके पत्नी सहित उसने स्वर्गलोक को प्राप्त किया। ययाति के इस वंश में बड़े-बड़े कीर्तिमान तथा धर्मात्मा राजा हुए जिनके शासन में पृथ्वी हमेशा सूर्य की किरणों से चमकती रही। जो मनुष्य ययाति के इस पवित्र चरित्र को पढ़ेंगे-सुनेंगे, वह बुद्धिमान पुरुष शिवलोक को प्राप्त करेंगे।

सोमवंश में यदुवंश वर्णन के साथ ज्यामघान्त वंश वर्णन

सूतजी बोले—अब मैं आप लोगों से यदु वंश का वर्णन करूँगा, जो सबसे बड़ा था तथा महान तेजस्वी था। यदु के पाँच पुत्र हुये जिनमें बड़े का नाम था सहस्त्रजीत, दूसरा क्रोष्टु, तीसरा नीलोजक था। सहस्त्रजीत के पुत्र का नाम शतजिय था। शतजिय के हैहय, हय तथा राजा वेणु नाम के तीन पुत्र हुए। हैहय के पुत्र का नाम धर्म हुआ। उसका पुत्र धर्मनेत्र हुआ, धर्मनेत्र के कीर्ति और संजय नामक दो पुत्र हुए। संजय का महिष्मान नामक धार्मिक पुत्र हुआ उसका भद्रश्रेण्य नाम

का पुत्र हुआ। भद्रश्रेण्य के दुर्दम नामक एक पुत्र हुआ जो राजा बना। दुर्दम का लोक विश्रुत पुत्र धनक नाम वाला हुआ। धनक के लोक सम्मत चार पुत्र थे, कृतवीर्य, कृताग्नि, कृतवर्मा, कीर्तवीर्य अर्जुन। चौथा पुत्र बड़ा ही पराक्रमी हुआ। कीर्तवीर्य अर्जुन के हजारों भुजायें थीं तथा सातों द्वीपों का एक मात्र ईश्वर था। उसकी राम (परशुराम) के द्वारा मृत्यु हुई। उसके सैकड़ों महारथी पुत्र थे जो बड़े शूरवीर और योद्धा थे। जिनमें शूर, शूरसेन, धृष्ट, कृष्ण, जयध्वज आदि प्रमुख थे। जयध्वज के पुत्र का नाम तालजंघ था जो महान बलशाली था। उसके भी सौ पुत्र थे उनमें भी सबसे बड़ा वीतिहोत्र राजा था, वृष आदि उसके अन्य पराक्रमी पुत्र और भी थे, वृष का वंश करने वाला मधु नाम का पुत्र था।

मधु के सौ पुत्र थे। उनमें वंश कारक वृष्णि था। मधु, यदु, हैहय के क्रमशः वंश का नाम वृष्णि, माधव, यादव तथा हैहय वंश पड़ा। ये सब हैहय वंश की ही शाखा हैं। हैहय वंश का कार्तवीर्य का पुत्र शूर, शूरसेन, वृष, जयध्वज विख्यात राजा थे जिनमें निष्पाप शूरसेन अति वीर था। जिनके नाम पर इस देश का नाम शूरसेन पड़ा (पूर्व में ब्रज मण्डल शूरसेन प्रदेश कहलाता था)।

इनके अतिरिक्त इसी वंश में अनेक वीर तथा धर्मात्मा राजा हुए। उसी में प्रघ्राजित राजा का पुत्र ज्यामघ नाम

का राजा हुआ। उसने अपनी शैव्या नाम की शीलवती भार्या के साथ नर्मदा के किनारे एकान्त में तपस्या की। तपस्या के प्रभाव से उसके श्रुत, विदर्भ, सुभग और वय नाम के पुत्र हुए। विदर्भ राजा के क्रथ, कौशिक तथा रोमपाद हुए। रोमपाद के वभ्रु हुआ। उसका परम धार्मिक सुधृति नाम का पुत्र हुआ। इसी प्रकार कौशिक की प्रजा (सन्तान) भी बहुत हैं। क्रथ के कुन्त हुए। कुन्त के रणधृष्ट बड़ा प्रतापी हुआ। रणधृष्ट के निधृति, दशार्हों व निधृत नाम के महान पराक्रमी पुत्र हुए। दशार्हों के जीमूत, जीमूत के विकृति, उसके भीमस्थ नाम के पुत्र हुए। भीमरथ के नवरथ, उसके दृढ़रथ नाम के पुत्र हुए। दृढ़रथ के करम्भ, करम्भ के देवरत, उसके देवक्षत्रक नाम का पुत्र राजा हुआ। देवक्षत्रक का पुत्र श्रीमान मधु नाम का राजा हुआ। मधु वंश राजा से ही कुरु वंश, कुरु वंश से अनु, अनु से पुरु उत्पन्न हुआ, अंशु ने भद्रवती में वैदर्भ को उत्पन्न किया। ऐक्ष्वाकी के अंशु, अंशु के सत्व तथा सत्व के कुलवर्धक सात्वत हुआ। इस प्रकार हे ऋषियो! मैंने आप लोगों के सामने ज्यामघ वंश का वर्णन किया जो इस वंश को पढ़ता व सुनता है वह स्वर्ग के राज सुख को प्राप्त करता है।

सोमवंश के वर्णन में श्री कृष्ण का प्रादुर्भाव

सूतजी बोले—सात्वत राज के सत्य बोलने वाले चार पुत्र थे। भजन, भ्राजमाद, दिव्य तथा देवावृध नाम के ये चारों पुत्र बड़े पराक्रमी थे। अब अन्धक और वृष्णि के वंशों का विस्तार से वर्णन सुनो।

देवावृध नाम के राजा ने सर्वगुण सम्पन्न पुत्र पाने के लिये तपस्या की। उससे उसको पुण्यवान बभ्रु नाम वाला पुराणों का ज्ञाता पुत्र प्राप्त हुआ। देवावृध और बभ्रु दोनों ने यज्ञ और दान के द्वारा ब्राह्मणों को प्रसन्न करके अमरत्व प्राप्त किया। वृष्णि की गान्धारी और माद्री दो भार्या थीं। गान्धारी ने सुमित्र और मित्रनन्दन दो पुत्रों को पैदा किया। माद्री के अनमित्र और शिनि पुत्र हुए। अनमित्र ने निघ्न, निघ्न के प्रसेन और सत्राजित दो पुत्र हुए। सत्राजित सूर्य का सखा था उसने सूर्य से स्यमन्तक मणि को प्राप्त किया था। सम्पूर्ण पृथ्वी पर वह राजा श्रेष्ठ था और सब रत्नों में उसकी मणि श्रेष्ठ थी। किसी समय शिकार खेलते हुए अकेला प्रसेन सिंह के द्वारा मारा गया।

शिनि के सत्यक नाम का पुत्र हुआ, सत्यक के सात्यिकी और युयुधान नाम के दो पुत्र हुए। ये दोनों शिनि के नाती थे। युयुधान का पुत्र असङ्ग उसका पुत्र

कुणि, कुणि का युगन्धर नाम का पुत्र हुआ।

माद्र के पुत्र वार्ष्णी कहलाये जिनमें सुफलक विख्यात हुआ उसने गन्दिनी नाम की काशीराज की कन्या से विवाह किया जो बहुत वर्षों तक माता के गर्भ में स्थिर रही थी। पिता ने गर्भ में स्थित कन्या से कहा—तू उदर से बाहर क्यों नहीं आती ? तो पिता से इस कन्या ने कहा कि तीन वर्ष तक एक गौ नित्य दान करो तब मैं बाहर आऊँगी। इस प्रतिज्ञा को पूर्ण करने पर यह गन्दिनी नाम की कन्या उत्पन्न हुई थी। सुफलक के द्वारा इसके अक्रूर जी का जन्म हुआ।

इसी वंश के एक राजा थे आहुक। उनके देवक और उग्रसेन दो पुत्र हुये। देवक के देववान, उपदेव, सुदेव, देवरक्षित चार पुत्र हुए। देवकी आदिक सात बहिन हुईं। जिनको वसुदेव जी ने ब्याह लिया। उग्रसेन के नौ पुत्र थे जिनमें कंस बड़ा था।

वसुदेव की स्त्रियों में रोहिणी ने हलायुध बलराम को पैदा किया। देवकी ने वसुदेव द्वारा भगवान कृष्ण को पैदा किया। उमा के देह से उत्पन्न भगवती योग निद्रा यशोदा के गर्भ से जन्मी। वह साक्षात् प्रकृति और भगवान कृष्ण साक्षात् पुरुष थे, जो धर्म मोक्ष के देने वाले चतुर्भुज वाले शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये जगत की रक्षा के लिये उत्पन्न हुये उनको वसुदेव

जी ने यशोदा को समर्पण किया और कन्या को लाकर कंस के लिये दिया। कंस पुरानी आकाशवाणी को स्मरण करके कन्या को मारने को तैयार हुआ तब कन्या उसके हाथ से छूटकर आकाश में अष्टभुजी देवी बनकर उससे कहने लगी—कि तू मुझे क्या मारता है, तेरा मारने वाला तो संसार में पैदा हो गया।

श्रीकृष्ण की १६१०८ रानियाँ थीं उनमें सबसे प्रिय और श्रेष्ठ रुक्मिणी थी। कृष्ण ने पुत्र के लिये शिव की बहुत समय तक तपस्या की, तब उन्हें चारुदेष्ण, सुचारु, प्रद्युम्न आदि पुत्र शिव की कृपा से प्राप्त हुए। फिर जाम्बवती के आग्रह से कृष्ण ने बहुत तप किया। तब प्रसन्न होकर रुद्र भगवान ने वरदान दिया, तब जाम्बवती के साम्ब पैदा हुआ।

इसके पश्चात् भगवान कृष्ण को जब १२० वर्ष बीत गये तब ब्राह्मण के शाप के बहाने से अपने कुल का नाश किया और जरा नाम के व्याध के अस्त्र से शरीर त्याग कर दिव्यलोक को पधारे। अष्टावक्र के शाप से कृष्ण की भार्या चोरों ने अपहरण कर लीं। बलराम जी शरीर को त्याग कर शेषनाग होकर चले गये। कृष्ण की रुक्मिणी आदि पटरानी अग्नि में प्रवेश कर चली गईं। रेवती जी बलभद्र के साथ अग्नि में प्रविष्ट हुईं। अर्जुन भी अपने भाइयों के साथ स्वर्ग को पधारे।

इस प्रकार मैंने संक्षेप में आप लोगों को कृष्ण की कथा कही।

हे ब्राह्मणो! इस चन्द्र वंश के राजाओं के चरित्र श्रद्धा से पढ़े, सुनावे या ब्राह्मणों के मुख से सुने, वह निःसन्देह वैष्णव लोक को जाता है।

अव्यक्त से महत् तत्व आदि की उत्पत्ति तथा अनेक प्रकार की सृष्टि का वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! आपने आदि सृष्टि रचना तो कही परन्तु उसका विस्तार से वर्णन नहीं किया। हे सुव्रत! उसे आप विस्तार से कहने में समर्थ हों, सो हमें कृपा करके विस्तार से कहिये।

सूतजी बोले—महेश्वर महातेज प्रकृति और परमेश्वर से परे परमात्मा स्वरूप है। ईश्वर से परम कारण अव्यक्त जिसको प्रधान प्रकृति कहते हैं तथा जो जगत की योनि महाभूति का विग्रह जो अनादि अज सूक्ष्म त्रिगुणात्मक अविज्ञेय ब्रह्म पहले कहा है, जिससे यह सम्पूर्ण जगत व्यास है। सर्ग काल में पुरुष या क्षेत्रज्ञाधिष्ठित अव्यक्त से महत तत्व उत्पन्न हुआ। महत तत्व से अहंकार। वह तीन

प्रकार का सात्विक राजस तामस हुआ। तामस से भूत और तन्मात्र की उत्पत्ति हुई। तामस अहंकार से शब्द लक्षण आकाश की उत्पत्ति हुई फिर उससे स्पर्श मात्रा वाली वायु की उत्पत्ति, वायु से रूपवान अग्नि की उत्पत्ति, तेज से समान जल की उत्पत्ति, जल से गन्धमात्रा पृथ्वी की उत्पत्ति। इस प्रकार कारण के गुण कार्य में आ जाने से पृथ्वी में पाँचों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) गुणों का संघात है। पंचभूत अहंकार और महत तत्व इन सात आवरणों से व्याप्त अण्ड बहुत समय तक जल में शयन करता रहा। उस अण्ड से सूर्य के समान प्रभाव वाला पुरुष उत्पन्न हुआ। वह प्रथम शरीरी अथवा पुरुष कहलाता है। उस पुरुष के वामाँग से लक्ष्मी और विष्णु उत्पन्न हुए। दायें अंग से ब्रह्मा और सरस्वती पैदा हुये। इस अण्ड के भीतर ही सम्पूर्ण जगत, लोक, सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारा आदि स्थित हैं। यह सृष्टि के प्रसङ्ग में जब तक सृष्टि रहती है, तब तक परमेश्वर का दिन होता है तथा प्रलय उसकी रात्रि होती है।

इन्द्री, इन्द्री के विषय पंच महाभूत, बुद्धि देवता ये सब परमेश्वर के दिन में ठहरते हैं तथा रात्रि में प्रलय को प्राप्त होते हैं। जैसे तिल में तेल, दूध में घी स्थित है, वैसे ही तमोगुण और रजोगुण में संसार स्थित है। ब्रह्मा कमल गर्भ के समान, रुद्र कालाग्नि के समान, विष्णु कमल

के समान नेत्र वाले तीनों देव परमेश्वर शिव के ही स्वरूप हैं।

अण्ड के नष्ट होने पर जल मात्र ही शेष रहता है। स्थावर जङ्गम सब सृष्टि नष्ट हो जाती है। ब्रह्मा नारायण नाम से जल में शयन करता है। जल को नार में शयन करने के कारण भगवान का नाम नारायण है। हजार चतुर्युग तक रात्रि का घोर अन्धकार होता है जिसमें नारायण जल में शयन करते हैं। फिर सृष्टि के प्रारम्भ में स्वयंभू ब्रह्मा विविध प्रकार की रचना करता है। प्राकृत और वैकृत नाना प्रकार की सृष्टि होती है।

भगवान वाराह रूप से पृथ्वी का उद्धार कर जल के ऊपर स्थापित करते हैं। तब ब्रह्मा, जल, अग्नि, पृथ्वी, आकाश, स्वर्ण, समुद्र, नदी, शेल, वनस्पति, औषधि, काष्ठा, मुहूर्त, लव काल की रचना करते हैं। ब्रह्मा के मन से मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, ऋतु, दक्ष, अत्रि, वशिष्ठ ये सभी मानस पुत्र उत्पन्न होते हैं। सुर और असुर, यक्ष, गन्धर्व तथा पितरों आदि की रचना होती है और सृष्टि का विकास होता है। नर, किन्नर, यक्ष, पिशाच, अप्सरा, गन्धर्व आदि की उत्पत्ति होती है। इतनी सृष्टि के बाद भी ब्रह्मा को शान्ति नहीं मिली। तब उनके शरीर के दो भाग हुये। आधे से पुरुष आधे से स्त्री पैदा हुई। पुत्र स्वायंभू मनु और पुत्री शतरूपा हुई।

इन दोनों से प्रियव्रत और उत्तानपाद दो पुत्र तथा आकूति, प्रसूति दो पुत्री पैदा हुईं। मनु ने प्रसूति को दक्ष के लिये तथा ऋचीक को आकूति प्रदान की। आकूति के यज्ञ और दक्षिणा दो सन्तानें हुईं। प्रसूति के श्रद्धा, घृति इत्यादि २४ कन्यायें हुईं। जिनके वंशों से यह संसार व्याप्त हुआ है। अर्धनारी नर शरीर वाले शंकर जी दो रूप में होते भये। जो महादेवी सती थी वह जगत के कल्याण के लिये दक्ष से आराधना की गई शुक्ल और यजुरूप से दो प्रकार से हुई। उनके नामों को मैं तुमसे कहता हूँ, उन्हें सावधान होकर सुनो—

स्वाहा, स्वधा, महाविद्या, मेधा, लक्ष्मी, सरस्वती, सती, दाक्षायणी, विद्या, शक्ति, क्रियात्मका, अपर्णा, एकपरर्णा, एकपटला, उमा, हेमवती, कल्याणी, एकमात्रिका, ख्याति, महाभागा, गौरी, अम्बिका, महादेवी, सावित्री, परदा, पुण्या, पावनी, लोकविश्रुता, अपराजिता, बहुभुजा, प्रगल्भा, सिंहवाहिनी, शुम्भादि दैत्य हन्त्री, महा महिष मर्दिनी, अमोघा, विंध्याचल वासिनी, विक्रान्ता, गणनायिका, भद्रकाली के जो यह नाम हैं वे भली प्रकार श्रेष्ठ फल देने वाले हैं। जो मनुष्य इनको पढ़ते हैं उनके पापों का क्षय हो जाता है। वन में, पर्वत, गृह, जल, थल, आदि में रक्षा के लिए इन नामों का प्रयोग करना चाहिये। सिंह के भय और सब प्रकार

की आपत्ति में इन्हीं देवी के नामों का प्रयोग करना चाहिये। भूत, ग्रह, पूतना, मातृकादि से पीड़ित बालकों की रक्षा के लिये इनका प्रयोग करना चाहिये। महादेवी ही प्रज्ञा और श्री रूप से कही गई हैं। इन्हीं दोनों रूपों से हजारों नाम से युक्त वह संसार में व्याप्त हैं। इस देवी के सहित महेश्वर सब लोकों की रक्षा और कल्याण के लिये उपस्थित हैं। रुद्र ही पशुपति हैं। उन्होंने ही तीनों पुरों को दग्ध किया था। उसके तेज से सब देव पशुरूप हो गये थे। जो इस चरित्र को पढ़ता है या सुनता है वह सभी कल्याण को प्राप्त करता है।

दैत्यों के तप से सन्तुष्ट हुए ब्रह्मा का त्रिपुर निर्माण के लिये वरदान देना

ऋषि बोले—हे सूतजी! आपने सृष्टि की रचना को कहा और अब हमें कहो कि ब्रह्मादिक देवता सहज पशु कैसे कहलाये और कैसे तैयार हुए? भय द्वारा निर्मित स्वर्णमय, रजतमय और लोहमय दुर्ग को महादेव ने कैसे भस्म किया। विष्णु के उत्पादित किए भूतों से त्रिपुर दाह क्यों नहीं हुआ? सो हमारे प्रति कहो। ऐसे ऋषियों

के वचन सुनकर सूतजी बोले—

मन, वाणी, शरीर से उत्पन्न तीनों लोकों के शापों से स्कन्द द्वारा तारकासुर का वध हो जाने पर उसके पुत्र विद्युन्माली, कमलाक्ष, ताड़काक्ष ने ब्रह्मा जी को प्रसन्न करने के लिए घोर तप किया। ब्रह्मा जी वरदान देने के लिये प्रकट हुए। दैत्यों ने सब प्राणियों के द्वारा सब दैत्य अवध्य हों ऐसा वरदान माँगा। ब्रह्मा ने कहा—कि सब तो अमर नहीं हो सकते अन्य कोई वरदान माँगो। परस्पर सलाह करके दैत्यों ने तीन पुरों का वरदान माँगा। जिनमें रहकर हम हजारों वर्षों तक पृथ्वी पर विचरते रहें। एक ही बाण से जो तीनों पुरों का नाश करे उसी के द्वारा हमारा नाश हो। ब्रह्माजी तथास्तु कहकर चले गये। मय ने तपस्या द्वारा तीनों पुर रचे। स्वर्ण का पुर स्वर्ग में, चाँदी का अन्तरिक्ष में और लोहमय भूमि में पुर का निर्माण किया। एक एक सौ सौ योजन का विस्तार था। स्वर्णमय तारकाक्ष का, रजतमय कमलाक्ष का तथा लोहे का विद्युन्माली के दुर्ग हुए। बलवान मय दानव दैत्यों से पूजित हो तीनों पुरों में स्थान बनाकर रहने लगा। ये दैत्य तीनों पुरों में वास करके बलवान और अपराजित हो गये। कल्पद्रुम आदि से व्याप्त, अप्सराओं से व्याप्त सूर्य मण्डल आदि से व्याप्त, कूप तड़ाग वापी आदि से व्याप्त ये तीनों पुर बड़ी शोभा को प्राप्त हुये।

इन्द्रादिक देवताओं को ये ऐसे जलाने लगे जैसे दावाग्नि वृक्षों को जलाती है। देवता दुखी होकर के विष्णु भगवान की शरण में आये। नारायण भगवान ने विचार किया कि देव कार्य के लिये क्या कार्य करना चाहिए उन्होंने यज्ञ मूर्ति भगवान का स्मरण किया और देवताओं से कहा—कि यज्ञेश्वर भगवान का स्मरण करो इससे तीनों पुरों का नाश होगा और जगत की विभूति बढ़ेगी। फिर भगवान बोले—

सम्पूर्ण प्राणियों को मारकर, अन्याय से भोगकर, जलाकर यदि महादेव का पूजन कर दें तो वे इतने पापों का फल नहीं भोगता और निष्पाप हो जाता है। निष्पाप को नहीं मारना चाहिए, पापी का वध करना चाहिए इसमें सन्देह नहीं। लिंग की अर्चना करने के कारण ये पापी असुर वध नहीं किए जा रहे हैं। ऐसा कहकर विष्णु भगवान ने हजारों भूत गणों को उत्पन्न किया। तब विष्णु ने उनसे कहा कि हे भूतों! इन तीनों पुरों को जलाकर भस्म करके फिर पृथ्वी तल पर तुम आओ।

वे भगवान को प्रणाम करके वहाँ गये और जैसे अग्नि में शलभ नष्ट हो जाते हैं वैसे ही भस्म हो गये। दैत्य बड़े प्रसन्न हुए और नृत्य करने लगे। इन्द्रादिक देवता दुखी हुये और भगवान की शरण में आये। भगवान ने पुनः विचार किया कि त्रिपुरवासी दैत्य महा पाप करके

भी रुद्र का अर्चन करते हैं इससे ये निष्पाप हो जाते हैं। इनके कार्यों में विघ्न होना चाहिए तब इनका नाश होगा। ऐसा विचार कर मायामयी पुरुष और उसका शास्त्र भगवान ने उत्पन्न किया। उस मायावी पुरुष को तथा शोडष लक्षण वाले शास्त्र को देखकर सभी मोहित हो जाते हैं। वह वर्ण आश्रम आदि धर्म से रहित तथा श्रुतिस्मार्त से विवर्जित है। वह दैत्यों के पुर में गया। दैत्य उससे मोहित होकर श्रुतिस्मार्त को छोड़कर उसके शिष्य बन गए। महादेव शंकर को त्याग दिया। स्त्रियाँ पति को त्याग कर स्वच्छन्द विचरने लगीं। लक्ष्मी आदि जो तपस्या से प्राप्त की थीं वे त्याग कर बाहर चली गईं। स्त्री धर्म नष्ट हो जाने पर दुराचार फैल गया।

तब विष्णु भगवान देवताओं के साथ महादेव जी की स्तुति करने लगे—हे महेश्वर! हे देव! हे परमात्मने! आपको नमस्कार है। इस प्रकार प्रार्थना करके जल में स्थित भगवान रुद्र का जप करने लगे। देवता भी स्तुति करने लगे—

हे प्रभु! आप ही पुरुष हो। आप ही प्रकृति हो। योगियों के हृदय कमल में आप ही विराजमान हो। अणु से अणु तथा महत से महत आप ही हो। श्रुतियों के सार आप ही हो। तुम्हीं दैत्य सुर भूत, किन्नर, स्थावर, जङ्गम आदि की रक्षा करने वाले हो। स्थावर जङ्गम सब आपका

ही रूप है। जैसे समुद्र में तरंग समूह परस्पर टकराकर वहीं नष्ट हो जाते हैं वैसे ही सम्पूर्ण जगत आप में ही उत्पन्न होकर आप में ही लय हो जाता है।

सूतजी कहते हैं—कि इस स्तोत्र को प्रातःकाल पवित्र होकर सुने या पढ़े उसकी सभी कामना पूर्ण हो जाती हैं।

तब स्तुति से प्रसन्न हो नन्दी पर हाथ रखे हुये शंकर जी प्रकट हुये और बोले—हे देवताओ! मैं त्रिपुर के दाह का उद्योग करूँगा। इसी अवसर पर देवी वृषध्वज शंकर से कहने लगीं—हे प्रभो! सूर्य की प्रभा के सदृश कांतिवान षड्मुख (स्कन्ध) को खेलते हुए देखिए। वह क्रीट, मुकुट, कुण्डल आदि से सुशोभित है। नूपुर किंकिणी आदि सभी स्वर्ण के आभूषणों से युक्त है। पुष्पों के हारों तथा आभूषणों से सुशोभित है। मुक्ताफल के हार से भी युक्त हैं। इसके मुखों के समूह को देखिए कितने सुन्दर हैं। अन्जन कितना सुन्दर लगा है। इस प्रकार के षडानन के मुखारविन्दों को देखकर महादेव जी तृप्त होते भये। स्कन्द का आलिंगन करके तथा चुम्बन करके शिवजी नाचने लगे। इन्हीं के साथ सब नाग, देवता और गण नाचने लगे तथा फूलों की वर्षा करने लगे।

इसी अवसर पर कुम्भोदर नाम का असुर,देवताओं

को ताड़न करने लगा। देवता हाहाकार करके भागने लगे। मुनि योग ''विधि बलवान है'' ऐसा कहकर ॐ नमः शिवाय का उच्चारण करने लगे। तब नन्दीश्वर शूल हाथ में लेकर वृष पर चढ़े हुए वहाँ पहुँचे। नन्दी को देखकर कुम्भोदर और उसके गण सिर से प्रणाम कर प्रार्थना करने लगे। आकाश में नन्दी पर पुष्प वर्षा होने लगी। वृक्ष की पीठ पर फूलों से ढके इस प्रकार शोभा पा रहे हैं जैसे तारा गणों के बीच में चन्द्रमा। उन्हें देखकर इन्द्रादिक देवता स्तुति करने लगे—

रुद्र जप में तत्पर रुद्रभक्त हे नन्दी! आपको नमस्कार है। रुद्रभक्त के दुखों को दूर करने वाले आपको नमस्कार है। कूष्मांड गणों के नाथ, योगियों के पति आपको नमस्कार है। सर्वज्ञ, सबके दुखों को दूर करने वाले शरण्य, वेदज्ञ, वेदों से जानने योग्य आपको नमस्कार है। वज्र धारण करने वाले, वज्रों के से दाँत वाले, वज्र के समान देह वाले, रक्त वस्त्र धारण करने वाले, रुद्रलोक को देने वाले, रक्ताम्बर धारण करने वाले, सेवा के अधिपति, रुद्रों के पति, भूतों के और भुवनेश्वर के पति आपको नमस्कार है। रुद्र रूप को नमस्कार, भयंकर पापों को नाश करने वाले आपको नमस्कार, शिव स्वरूप, सौम्य रूप आपको नमस्कार है। हे शिलादि पुत्र! आपको नमस्कार है।

इस प्रकार नन्दीश्वर स्तुति से प्रसन्न होकर देवताओं से बोले—शिवजी का धनुष, बाण, रथ, सारथी, यत्न से आप बनाओ और तीनों पुरों को नष्ट समझो तब वे ब्रह्मा को साथ लेकर विश्वकर्मा की सहायता से देव देव शिवजी का रथ आदि निर्माण करने में लगे।

त्रिपुर दहन के आरम्भ में रुद्र के रथ निर्माण का वर्णन

सूतजी बोले—विश्वकर्मा ने रुद्र भगवान का सर्वलोकमय दिव्य रथ का निर्माण किया। जिसमें दाईं ओर का पहिया सूर्य और बाईं ओर का चन्द्रमा था। दक्षिण में बारह तथा उत्तर में (बाईं ओर) १६ अरा थे। अराओं में एक तरफ १२ आदित्य तथा दूसरी तरफ १६ चन्द्रमा की कला थीं। सब नक्षत्र बाईं तरफ भूषण थे तथा ६ ऋतु नेमी थीं। पुष्कर अन्तरिक्ष, रथ, नील, मन्दराचल, था, अस्ताचल और उदयाचल दोनों उसके जुआ थे। सुमेरु उसका अधिष्ठान था। सम्वत्सर उसका वेग था। उत्तरायण तथा दक्षिणायन उसके चक्र संगम थे। स्वर्ग तथा मोक्ष दोनों ध्वजा थे। धर्म और विराग

दोनों दण्ड थे। यज्ञ दण्ड का आश्रय, दक्षिण सन्धि, पचास अग्नि उसमें लोहे के स्थान पर थीं।

सब इन्द्रियाँ उसमें भूषण थीं। श्रद्धा गति थी, वेद उस रथ के घोड़ा थे, पद भूषण थे, छै अंग उपभूषण थे, पुराण, मीमांस, धर्म, शास्त्र इत्यादिक उसके वस्त्र थे, दिशायें पैर थीं, वह रथ सभी प्रकार के राग और स्वर्ण से भूषित था। चारों समुद्र उसके चारों ओर के कम्बल थे। सरस्वती देवी घण्टा थीं। विष्णु भगवान बाण थे, सोम शल्य थे।

इस प्रकार दिव्य रथ और धनुष को तैयार करके ब्रह्मा को सारथी बनाया। ऐसे दिव्य रथ पर पृथ्वी और आकाश को कँपाते हुए शंकर भगवान विराजमान हुए। भगवान शंकर ने यह देखकर पशुओं का आधिपत्य (ब्रह्मा) को दिया। जो पाशुपत दिव्य योग को धारण करे और १२ वर्ष, ६ वर्ष या तीन वर्ष तक नियम से व्रत का पालन करे तो वह निश्चय ही मोक्ष को प्राप्त होगा।

इसके बाद विनायक बालक रूप में प्रकट हुए। देवताओं ने उनका पूजन किया। विनायक बोले—इस संसार में भक्ष भोज्य आदि पदार्थों से पूजा नहीं करेगा वह देव हो या दानव हो सिद्धि को प्राप्त नहीं करेगा। ऐसा सुनकर इन्द्रादिक सभी देवताओं ने विनायक भगवान का पूजन किया फिर गणेश्वर तथा नन्दी आदिक

भगवान शंकर के पीछे चले।

भगवान शंकर आगे आगे शस्त्र आदिक लेकर चले। वह जगत के हित के लिए त्रिपुर दहन को नन्दी पर सवार हुए उनके पीछे सभी गण व देवता थे। यम, पवन, गरुड़, वायु ही सब भगवान के पीछे थे।

दुर्गा सिंह पर चढ़ी हुई, अंकुश, शूल, खड्ग आदि धारण किए हुए साथ-साथ चलने लगीं। शिवजी पर फूलों की वर्षा होने लगी। देवता जय-जयकार करने लगे।

सकल लोक के हित के लिए त्रिपुर दहन के लिए त्रिशूली (शिवजी) इस प्रकार से चले। यदि चाहें तो वे त्रिलोकी को क्षण मात्र में भस्म कर सकते हैं परन्तु लीला हेतु इस त्रिपुर दहन को बाण आयुधों से युक्त देवताओं के साथ इस प्रकार चल रहे हैं। तब महादेव के धनुष तानने पर तीनों पुर एक साथ इकट्ठे हो गए। देवताओं को बड़ा हर्ष हुआ और जय हो! जय हो! की ध्वनि करने लगे तथा भगवान शंकर की स्तुति करने लगे।

तब ब्रह्माजी बोले—इस समय पुष्य योग है। अब आप लीला त्याग दो, आपको विष्णु या मुझ से क्या प्रयोजन है ? इस पुष्य योग में तीनों पुरों को दग्ध कर दो। तब भगवान ने हँसते हुए एक ही बाण को छोड़ा। वह बाण उसी क्षण त्रिपुर को भस्म कर पुन:देव देव

शंकर जी के पास लौट कर आ गया। यह लीला बड़ी विचित्र हुई। इसको देखकर सभी देवता एवं विष्णु आदि सभी स्तुति करने लगे।

ब्रह्मा ने कहा—हे देव! देव देवेश्वर! आप प्रसन्न होइये। पाँच आपके भयंकर मुख हैं। आपका कोटि सूर्य के समान तेज है। रुद्र रूप हो, आप ही अघोर रूप हैं। शिव रूप भी आप ही हो। आप को नमस्कार है। आप सहस्त्र शिर तथा सहस्त्र पाद वाले हो। हे अघोर! हे वाम! हे तत्पुरुष! आपको नमस्कार है। आपकी स्तुति हे नाथ! कौन कर सकता है। देखने मात्र से ही आप तीनों पुरों को दग्ध करने की क्या तीनों लोकों को भी लय कर सकते हो। हे देवेश! आपका दिव्य तेज कहाँ और हमारी लघु स्तुति को भी सामर्थ कहाँ। तो भी हमारी भक्ति से पुकारते हुओं की आप रक्षा करो।

सूतजी कहते हैं कि ब्रह्मा के द्वारा की गई स्तुति के स्तोत्र को जो भी पढ़ता है वह सब प्रकार के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

तब शिवजी ब्रह्मा से प्रसन्न होकर पार्वती जी की ओर देख कर बोले—हे ब्रह्मा! मैं तुमसे प्रसन्न हूँ वरदान माँगो। ब्रह्मा बोले—हे देवेश! हे त्रिपुरारी! आप में मेरी भक्ति हो और मेरी भक्ति तथा सारथीपने से आप प्रसन्न हों। तब भगवान विष्णु भी साम्ब सदा-शिव की हाथ

जोड़कर वन्दना करने लगे और बोले कि हे देव देवेश! आप में मेरी दृढ़ भक्ति हो, आपको बारम्बार नमस्कार करता हूँ।

सूतजी कहते हैं कि इस प्रकार ब्रह्मा विष्णु आदि की स्तुति से प्रसन्न हुये त्रिपुरारि पार्वती सहित अन्तर्ध्यान हो गये। देवता भी विस्मित हुए प्रणाम करके अपने-अपने लोक को चले गये।

त्रिपुरारि का यह ब्रह्मा कृत स्तोत्र देव कार्य एवं श्राद्ध कार्य में पढ़ेगा या सुनेगा वह ब्रह्म लोक को प्राप्त होगा। मानसिक, कायिक, वाचिक, स्थूल, सूक्ष्म आदिक सभी पापों से इस अध्याय को पढ़कर सुनकर मनुष्य पवित्र हो जाएगा तथा कोई भी बाधा एवं रोग नहीं सतायेगा। उसे धन, आयु, यश, विद्या अतुलनीय प्राप्त होंगे।

शिव पूजा महात्म्य वर्णन

सूतजी बोले—इस प्रकार भगवान महेश्वर के द्वारा क्षण मात्र में त्रिपुर को भस्म कर देने पर तथा महेश्वर के चले जाने पर ब्रह्मा जी इन्द्र से इस प्रकार बोले—

ब्रह्माजी बोले—तार नामक दैत्य का पुत्र महा

बलवान तारकाक्ष और विद्युन्माली आदि राक्षस राज भी अपने बाँधवों सहित शिवजी की माया से मोहित हो सभी नष्ट हो गये। इसलिए सदा शिवलिंग में सदा शिव की पूजा करनी चाहिए। जब तक देवताओं की पूजा है तथा यह संसार स्थित है तब तक नित्य ही श्रद्धा के साथ शिव की पूजा करनी चाहिए। यह सम्पूर्ण लोक शिव में प्रतिष्ठित है और शिवलिंगमय है। इसलिए अपनी आत्मा की श्रद्धा के लिए इच्छा पूर्वक लिंग की पूजा करनी चाहिए। देव, दैत्य, दानव, यक्ष, विद्याधर, सिद्ध, राक्षस, पिशितारान, पितर, मनुष्य, पिशाच, किन्नर आदि सभी अपनी सिद्धि के लिए लिंग की अर्चना करते हैं इसमें सन्देह नहीं, इसलिए हे देवताओ! जैसे भी हो लिंग की पूजा करनी चाहिए। हम सब देव देव महादेव जो बुद्धिमान हैं उनके पशु हैं इसलिए पशुता को छोड़कर पाशुपात व्रत धारण करना चाहिए।

महादेव को हमेशा लिंग मूर्ति में पूजना चाहिए। हे श्रेष्ठ देवताओ! प्राणायाम पूर्वक ॐकार के द्वारा सब अंगों में भस्म लगानी चाहिए, कर्मेन्द्रियों को रोककर आत्मा को शरीर में निरोधकर अग्नि और भस्म का स्पर्श करना चाहिए। हे देवताओ! पाशुपत व्रत को धारण करने वाला योगी पुरुष सब तत्वों का ज़ाता होता है तथा संसार रूपी जाल से छूटकर मोक्ष को प्राप्त करता है।

इस प्रकार का पाशुपत योग करके लिंग में परमेश्वर की पूजा करते हुये मैंने विष्णु भगवान को देखा है। मैं भी महादेव की अर्चना करके यत्न पूर्वक सब काम करता हूँ जो शिवजी की सेवा में रहता है और उनको याद करता है वह संसार के दुःख का भागी नहीं होता और तीनों लोकों का राज्य इच्छानुसार भोगता है। जो हमेशा लिंग में महेश्वर को पूजता है और जो हवन करता है, वह सब पापों को जलाता है। जो विरुपाक्ष शिव का भजन करता है वह पापों से छूट जाता है। शैल, लिंग, मुझे तथा सब देवताओं को नमस्कार करके तीनों लोकों के स्वामी रुद्र की पूजा करनी चाहिए और उन त्र्यम्बक को वाणी के द्वारा सन्तुष्ट करना चाहिए।

इस प्रकार ब्रह्माजी की बात सुनकर इन्द्रादि सभी देवता सुरेश्वर की पूजा करके पाशुपत योग करके तथा अपने शरीर में भस्म धारण करके रहने लगे।

नाना विधि शिव लिंगों का वर्णन

सूतजी बोले—ब्रह्मा की आज्ञा से अधिकार के अनुसार विश्वकर्मा ने लिंगों की कल्पना की। इन्द्र नील

मय लिंग की सदा विष्णु ने पूजा की। पद्मराग मणिमय लिंग को सदा इन्द्र ने पूजा। स्वर्णमय को विश्रवा के पुत्र ने पूजा। विश्वे देवताओं ने रजत (चाँदी) मय लिंग को पूजा। वसुओं ने कान्तिक मय, वायु ने पीतलमय, अश्विनी कुमारों ने पार्थिव (मिट्टी) के लिंग की पूजा की, वरुण ने स्फटिक मणि का, आदित्यों ने ताम्रमय, सोमराज ने मौक्तिक लिंग की पूजा की। अनन्त आदि नागों ने प्रबालमय और दैत्यों ने लोहमय लिंग का पूजन किया।

गुह्यकों ने त्रैलोहिक, चामुण्डा ने बालूमय, नैऋति ने लकड़ी के बने शिवलिंग की पूजा की। यम ने मरकत मणि का बना शिवलिंग का पूजन किया। रुद्रों ने शुद्ध भस्ममय का, लक्ष्मी ने विल्व वृक्ष का बना तथा गुह (स्वामी कार्तिक) ने गोमय लिंग की पूजा की। मुनियों ने कुशाग्र मय लिंग की, सब वेदों ने दधिमय, पिशाचों ने सीस निर्मित लिंग की पूजा की। अधिक क्या यह चराचर जगत ही शिवलिंग का अर्चन करने के कारण ही स्थित है, इसमें सन्देह नहीं।

द्रव्यों के भेद से ६ प्रकार के शिवलिंग कहे हैं। उनके भी ४४ भेद हैं। पहला शैलज वह ४ प्रकार का है, दूसरा रत्नज वह सात प्रकार का है। तीसरा धातुज वह ८ प्रकार का है। चौथा दारुज वह १६ प्रकार हैं। पाँचवां

मृण्यमय (मिट्टी के) वह दो प्रकार के, छटी क्षणिक जो ७ प्रकार की हैं। रत्नज लिंग लक्ष्मी प्रद हैं। शैलज सर्वसिद्धि प्रद है। धातुज धन प्रद है। दारुज भोग सिद्धि देने वाला है, मिट्टी का सर्व सिद्धि दाता है।

शैलज उत्तम कहा है। धातुज मध्यम है। वैसे लिंग भेद बहुत हैं परन्तु संक्षेप से यही हैं। शैलज, रत्नज, धातुज, दारुज, मृण्यमय, क्षणिक आदि शिवलिंगों की भक्ति से स्थापना करनी चाहिए। इन्द्र, ब्रह्मा, अग्नि, यम, वरुण, कुबेर, सिद्ध, विद्याधर, नाग, यक्ष, दानव, किन्नरों ने शिवलिंगों की स्तुति की है भू: भुवः स्वः मह, जन, तप, सत्य, सत्य लोकों को आक्रमण कर शिव अपने तेज से भासित करते हैं। अतः विधि पूर्वक उमा स्कन्द सहित कुन्द और क्षीर के सदृश श्वेत लिंग की स्थापना करनी चाहिए। सब नरों के शरीर में दिव्य रूप से शिव विराजते हैं। इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए। उनके दर्शन से नर परम आनन्द को प्राप्त करता है। उसका पुण्य सहस्त्र युगों भी नहीं कहा जा सकता है। सब ही मनुष्यों का शरीर शिव का दिव्य शरीर है। शुभ भावना से युक्त योगियों का शरीर तो शिव का साक्षात् शरीर है।

शिव अद्वैत वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! वह शिव निष्कल, निर्मल, शुद्ध, सकल व्याप्त है जैसा कि सुना है सो वह भी हमारे लिये वर्णन कीजिये।

सूतजी बोले—परमार्थ को जानने वाले कोई महात्मा शिव को प्रणव रूप कहते हैं। कोई विज्ञान रूप कहते हैं। शब्दादि विषयज्ञान ज्ञान कहलाता है परन्तु भ्रान्ति रहित ज्ञान ही शिव कहलाता है। कोई कोई ऐसा कहते हैं जो ज्ञान, निर्मल, निर्विकल्प, निराश्रय है। गुरु प्रकाशक हैं वही शिव तत्व है कोई ऐसा कहते हैं। ज्ञान के द्वारा ही मुक्ति होती है। ज्ञान की सिद्धि में भगवान का प्रसाद ही कारण है ज्ञान तथा भगवत प्रसाद दोनों से मुक्ति मिलती है। कोई मुनि उसके रूप की कल्पना इस तरह करते हैं कि स्वर्ग शिव का मस्तक है, आकाश नाभि है। सूर्य, चन्द्र और अग्नि उसके नेत्र हैं। दिशा श्रोत हैं, पाताल उसके चरण हैं। समुद्र वस्त्र हैं। देवता भुजा हैं, तारागण भूषण हैं, प्रकृति उसकी पत्नी और लिंग पुरुष हैं। पुष्करादिक उसके केश हैं। वायु घ्राणज है। श्रुति स्मृति उसकी गति है।

सहस्र कर्म यज्ञों से जप यज्ञ उत्तम है। सहस्र जप यज्ञों से ध्यान यज्ञ उत्तम है। ध्यान यज्ञ से परे कोई साधन

नहीं है क्योंकि ध्यान ही ज्ञान का साधन है।

जब समरस में स्थित योगी ध्यान यज्ञ में रत होता है तब शिव उसके समीप में ही होते हैं। विज्ञानियों को शौच तथा प्रायश्चित का विधान नहीं है। ब्रह्म विद्या के जानने वाले विद्या से ही शुद्ध होते हैं।

परमानन्द स्वरूप विशुद्ध अक्षर शिव, निष्कल सर्वगत, योगी जनों के हृदय में स्थित रहता है। वाह्य और आभ्यन्तर भेद से लिंग दो प्रकार के कहे हैं—स्थूल वाह्य और सूक्ष्म आभ्यन्तर हैं। कर्म यज्ञ में रत स्थूल लिंग को पूजने में रत रहते हैं। पर आध्यात्मिक सूक्ष्म लिंग जिसको प्रत्यक्ष नहीं वह मूढ़ ही है। तत्वार्थ के विचार वाले कोई कहते हैं कि सकल ब्रह्माण्ड शिव मय हैं। जैसे एक ही आकाश घट मठ भेद से नाना प्रकार का भासता है,एक ही सूर्य जल के घटों में पृथक पृथक भासता है वैसे ही एक शिव सर्वत्र पृथक पृथक भासता है। क'ई सर्वज्ञ शिव को हृदय में ही पूजते हैं, कोई शिवलिंग में, कोई अग्नि में ही पूजते हैं। जिस प्रकार के शिव हैं उसी प्रकार की देवी हैं और जिस प्रकार की देवी हैं वैसे ही शिव हैं। इससे दोनों का अभेद बुद्धि से ही पूजन करना चाहिए। जो धर्मरत भक्ति तथा योग के द्वारा योगेश्वर शिव को सब मूर्तियों में जानकर सर्वत्र पूजते हैं वे ही देवी सहित पुराण पुरुष शिव को

प्राप्त करते हैं। अन्य भेद बुद्धि वाले उन्हें नहीं पा सकते।

शिव मूर्ति प्रतिष्ठा फल का वर्णन

सूतजी बोले—हे मुनियो! अब मैं इसके बाद स्वेच्छा विग्रह की उत्पत्ति और उसके प्रतिष्ठा के फल को आप लोगों को कहूँगा।

उमा और स्कन्ध सहित शिव की भक्ति पूर्वक स्थापना करके सर्वकामनाओं को मनुष्य प्राप्त करता है। इससे जो फल प्राप्त होता है उसे मैं आप लोगों से कहता हूँ। करोड़ों सूर्य के समान करोड़ों विमानों से युक्त योगी जब तक महा प्रलय होती है तब तक शिव के समान क्रीड़ा करता है। ओम, कौमार, ईशान, वैष्णव, ब्रह्म, प्रजापत्य ऐन्द्र आदि लोकों के भोगों को हजारों वर्षों तक भोग कर सुमेरु पर स्थान बनाकर देवताओं के भुवनों में क्रीड़ा करता है। एकपाद, चार भुजा, त्रिनेत्र और शूल से युक्त जिसके वाम भाग में विष्णु और दक्षिण भाग में ब्रह्मा, २८ रुद्रों की कोटी, वाम भाग से प्रकृति, बुद्धि से बुद्धि और अहंकार से अहंकार, इन्द्रियों से इन्द्री, पाद मूल से पृथ्वी, गुह्य से जल, नाभि से वह्नि,

हृदय से भास्कर, कण्ठ से सोम, भ्रूमध्य से आत्मा, मस्तिष्क से स्वर्ग इस प्रकार चढ़कर सब जगत जिनसे उत्पन्न होता है ऐसे सर्वज्ञ और सर्वगत देव की ध्यान पूर्वक प्रतिष्ठा करके मनुष्य शिव सायुज्य को प्राप्त करता है।

बैल पर स्थित, चन्द्रमा का भूषण धारण किए हुए शिव की जो प्रतिष्ठा करता है वे किंकिणी जालों से युक्त स्वर्ण के विमान में बैठकर दिव्य शिव लोक में जाकर वास करता है और मुक्त हो जाता है। गण अम्बिका और नन्दी से युक्त शिव की प्रतिष्ठा करने वाला, सूर्य मण्डल के सदृश विमानों में बैठकर अप्सरा आदि के नृत्य के साथ शिव लोक में गणपति होकर निवास करता है। पार्वती सहित वृषभध्वज शिव को ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु आदि से सदा प्रतिष्ठा करने वाला सर्व यज्ञ, तप, दान तीर्थों के फल को प्राप्त करके शिव लोक में जाकर महा प्रलय तक भोगों को भोगता है।

नग्न, चतुर्भुज, श्वेत, सर्प मेखला वाले, त्रिनेत्र वाले, कपाल हाथ में धारण किए हुए, काले केश वाले शिव की स्थापना करके शिव सायुज्य को प्राप्त करता है। धूम्र वर्ण वाले, लाल नेत्र वाले, चन्द्रभूषण, काकपक्ष धारी, बाघम्बर ओढ़े हुए, मृगचर्म धारण किये हुए, तीक्ष्ण दाँत वाले, कपाल जिसके हाथ में है, हूँ तथा फट् शब्द से

दिशाओं को नादित करते हुए गण और भूत समूहों से नृत्य करते हुये शिव की प्रतिष्ठा करने वाला सब विघ्नों को लांघकर महा प्रलय तक शिव लोक में वास करता है।

चतुर्भुज, अर्धनारीश्वर, वरद और अभय हस्त वाले, शूल पद्म धारण किए हुए स्वर्णाभरण भूषित स्त्री पुरुष भाव से जो स्थापना करता है वह अणिमा आदि सिद्धियों को भोगकर शिव लोक में जाता है।

चिताभस्म धारण किए हुए, बाघम्बर धारण किये हुए, शिरोमाला धारण किए हुए, उपवीत धारण किए हुए, शिव की प्रतिष्ठा करके मनुष्य संसार के भय से मुक्त होता है।

''ॐ नमो नील कंठाय'' इस आठ अक्षर वाले पुण्य मन्त्र को एक बार भी जो जपता है वह सब पापों से मुक्त होता है। इस मन्त्र से गन्धादि द्वारा महादेव का पूजन करता है वह शिव लोक में पूज्य होता है। जालंधर का अन्त करने वाले, सुदर्शन धारण करने वाले देवाधि देव की जो प्रतिष्ठा करता है वह शिव सायुज्य को प्राप्त करता है इसमें सन्देह नहीं। जो देव देव त्रिपुरान्तक ईश्वर, धनुष बाण धारण से युक्त, अर्धचन्द्र भूषण वाले, जिसमें सारथी हैं ऐसे रथ में बैठे हुए शिवजी की पूजा करता है, वह शिव लोक में ऐश्वर्यों को प्राप्त करता है।

गंगा से सुशोभित, वामांग में पार्वती से युक्त, विनायक और स्कन्ध, सूर्य और चन्द्रमा के सहित, ब्राह्मणी, कौमारी, माहेश्वरी, इन्द्राणी, चामुण्डा, वीरभद्र आदि गणों से युक्त मूर्ति की स्थापना करने वाले पुरुष शिव सायुज्य को प्राप्त करता है, इसमें सन्देह नहीं।

लिंग के मध्य में चन्द्रशेखर भगवान की मूर्ति, ऊपर हंस रूप ब्रह्मा की मूर्ति बनाकर अथवा दक्षिण में ब्रह्मा की मूर्ति जो हाथ जोड़े स्थित है और महालिंग शिव की मूर्ति बनाकर स्थापित करके जो पूजा करते हैं वे शिव सायुज्य को प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार महालिंग में शिव की प्रतिष्ठा करने वाला व्यक्ति शिव लोक में पूजा जाता है।

मिट्टी से लेकर रत्न तक बनने वाले शिवालय का वर्णन

ऋषि बोले—लिंग प्रतिष्ठा का पुण्य, लिंग की स्थापना के भेद हमने सुने। हे सूतजी! अब मिट्टी से लेकर रत्न तक के शिवालयों के बनाने का फल हमसे कहिये।

सूतजी बोले—शिवजी का ईंट और लोहे आदि से मन्दिर बनाकर भक्त रुद्र लोक को जाते हैं जहाँ उनकी इन्द्रादिक भी वन्दना करते हैं। मिट्टी व बालू से बनाकर भी रुद्र को प्राप्त होते हैं। इसलिये भक्त को सर्व प्रकार से शिवालय बनाने चाहिए। कैलाश नाम वाले मन्दिर को बनाकर कैलाश की सी शिखर वाले विमानों पर बैठकर भक्तजन महान आनन्द को प्राप्त करते हैं। जो भक्त मन्दिर नाम से शिवालय का निर्माण करते हैं वे मदराचल के समान विमानों में बैठते हैं और देवता अप्सराओं के द्वारा पूजित होकर शिव लोक में सुख भोगते हैं तथा गाणपत्य रूप को प्राप्त होते हैं।

हे विप्र! सुवर्ण की शिलाओं से शिवालय बनता है वह रुद्र लोक में रुद्रों के साथ आनन्द को प्राप्त होता है। जीर्ण, पतित और खण्डित मन्दिर का उद्धार करने वाला बनाने वाले से भी अधिक पुण्य को प्राप्त करता है। इससे हे ब्राह्मणो! भक्ति पूर्वक काष्ठ, ईंट, मिट्टी आदि से भी शिव का मन्दिर बनाता है वह शिव लोक को जाता है। जो मन्दिर बनाने में असमर्थ हों वह शिव मन्दिर की झाड़ू-बुहारी पोतना-लीपना आदि कर स्वच्छ करने से उत्तम फल को पाता है।

शिव नेत्र से आधे कोस की दूरी पर भी जो मनुष्य प्राणों का त्याग करता है वह हजारों चान्द्रायण व्रतों के

फल को प्राप्त करता है। जो श्री पर्वत पर प्राणों को त्यागता है वह शिव सायुज्य को प्राप्त होता है। जो जो पुरुष वाराणसी में, केदार में, प्रयाग में, कुरुक्षेत्र में प्राणों को त्यागता है वह मुक्ति को पाता है। प्रभास में, पुष्कर में, उज्जैन में, अमरेश्वर में मरकर प्राणी शिव को प्राप्त होता है। शिव क्षेत्र का दर्शन ही पुण्य देने वाला होता है। उससे सौ गुना स्पर्शन से फल होता है। जल से सौ गुना दूध का स्थान, दूध से हजार गुना दही का, उससे शत गुना मधु का तथा घी का स्नान शिवलिंगों को कराना तो अनन्त गुना है। बावड़ी, कूप, तालाब जो तीर्थ कहलाते हैं उनमें स्नान करने वाला पुरुष ब्रह्म हत्या आदि से छूट जाता है। प्रातःकाल जो पुरुष शिवलिंग का दर्शन करता है वह उत्तम गति को प्राप्त करता है। मध्याह्न में दर्शन करने वाला उत्तम यज्ञों का फल पाता है तथा शाम के समय दर्शन भी उत्तम यज्ञों का फल प्रदान करने वाला है।

इस प्रकार आदि देव महादेव उत्पत्ति, प्रलय और संहार करने वाले हैं। सब सृष्टि की रचना शिवाशिव ही करते हैं। मोक्ष के साधन शिव ही हैं। शिव ही व्यक्त और अव्यक्त हैं। ऐसे नित्य स्वरूप अचिंत्य प्रभु का अर्चन करना चाहिए।

वस्त्र के द्वारा छानकर शिव-मन्दिर के लेपन का वर्णन

सूतजी बोले—हे श्रेष्ठ मुनियो! वस्त्र में जल को छान कर शिवजी के मन्दिर का लेपन करना चाहिए अन्यथा सिद्धि नहीं होती है। जल तो सदा पवित्र होते ही हैं। वस्त्रपूत और नदी के जल विशेष पवित्र होते हैं। इसलिए सब देव कार्य पवित्र जल से करने चाहिए। सूक्ष्म जन्तुओं से मिले जल से जन्तु हत्या करके जो जल प्राप्त होता है वह अपवित्र होता है।

लेपन में, मार्जन में, अग्नि जलाने में, पीसने में जल ग्रहण करने में गृहस्थी को सदा हिंसा लगती है। सब प्राणियों का अहिंसा परम धर्म है इससे सदा वस्त्रपूत जल से कार्य करना चाहिए। मनुष्य को सदा कर्म, मन और वाणी से अहिंसक होना चाहिए। वेद पाठी ब्राह्मण को तीनों लोकों का दान करने पर जो फल मिलता है उससे करोड़ गुना फल अहिंसक को मिलता है मन, वचन और शरीर से सब जन्तुओं पर दया करते हैं वे पुत्र, पौत्र सहित रुद्र लोक में बसते हैं। इससे वस्त्रपूत जल से शिव मन्दिर को छिड़कना तथा स्नान करना चाहिए। त्रिलोकी को मारकर जो पाप होता है वह शिव मन्दिर में एक ही जन्तु को मारने के बराबर पाप समझना चाहिए

वस्त्रपूत जल से कार्य करना उचित है।

ययाति क्षत्रियों को यथार्थ पशु की हिंसा तथा दुष्टों की हिंसा कही है परन्तु ब्रह्मवादी योगीजनों को कुछ भी विहित अविहित नहीं है। इससे पाप में रत मनुष्य की भी हिंसा नहीं करनी चाहिए। स्त्रियों की भी हिंसा नहीं करनी चाहिए। चाहे वे मलिन ही क्यों न हों। जो मनुष्य वेद वाह्य हैं, पापी हैं, स्पर्श करने योग्य नहीं हैं, दर्शन योग्य नहीं हैं उनको भी नहीं मारना चाहिए। उन्हें देखकर सूर्य का दर्शन करना चाहिए।

जो सत्पुरुषों के संग से एक बार भी शिव का पूजन करता है वह शिव लोक को प्राप्त होता है। जो शिव की भक्ति से हीन पुरुष है वह निर्दय और दुखी होते हैं। जो देव देव शिव के भक्त हैं, वे भाग्यवान हैं। वे सब भोगों को भोगकर मुक्त होते हैं। जो जन शिव में आसक्त हैं, ऐसे भक्तों के संग से एक बार भी शिव में आसक्त हो जाय तो उसको परमेश्वर का लोक दूर नहीं है।

शिव की अर्चना विधि का वर्णन

ऋषि बोले—अल्प आयु वाले, अल्प पराक्रम वाले,

मन्द बुद्धि वाले मनुष्यों को महादेव का पूजन किस प्रकार करना चाहिए ? क्योंकि हजारों वर्षों तक तपस्या करने वाले देवता भी शिव को नहीं देख पाते। तब हे सूतजी! किस प्रकार से उनका दर्शन करना चाहिये।

सूतजी बोले—मुनीश्वरो! आपने ठीक कहा है। तो भी श्रद्धा से भगवान प्रकट होते हैं। भक्तिहीन पुरुष प्रसंग से शिव का पूजन करते हैं उनको भावानुरूप फल मिलता है। झूठे मुख से शिव का पूजन करने वाला पुरुष पिशाच्च योनि को प्राप्त होता है और संक्रुद्ध होकर जो पूजन करता है वह राक्षस होता है। अभक्ष का भक्षण करने वाला पूजक यक्ष पने को प्राप्त होता है।

गायत्री मन्त्र द्वारा महादेव की पूजा करने वाला प्रजापति को प्राप्त होता है। श्रद्धा से एक बार भी शिव की पूजा करने वाला रुद्र के साथ क्रीड़ा करता है।

पीठ पर शिवलिंग की स्थापना करके पवित्र जल से स्नान कराना चाहिए। धर्म ज्ञानमय आसन की कल्पना करके उस पर स्थापन करना चाहिए। पाद्य, आचमन, उर्ध्व, जल देकर दूध, घी, दही तथा दिव्य जल से स्नान कराकर केशर कस्तूरी का लेपन कर पुष्प तथा अखण्ड बेल पत्रों से शिव का पूजन करे। नाना प्रकार के कमल, कन्नेर, वकुल, चम्पक, आक के पुष्प आदि शिव को अर्पण करे। दही, भात, भोजन बना कर भोग लगावे

अथवा एक आधक (तेल विशेष) चावल बनाकर भगवान को भोग लगावे तथा बारम्बार प्रणाम करके प्रदक्षिणा करे और पुनः प्रार्थना करे।

इस प्रकार की पूजन विधि से महेश्वर प्रसन्न होते हैं। जिन वृक्षों के पत्र पुष्पादिक भगवान के पूजन में वृक्ष तथा गौ जिनका दूध भगवान की पूजा में आता है वे परमगति को प्राप्त होते हैं। जो शिव का इस प्रकार एक बार भी पूजन करता है वह शिव सायुज्य को प्राप्त होता है। पूजन किये हुए शिव का दर्शन करने वाला पुरुष भी सब पापों से छूट जाता है।

जो शिवलिंग के सामने घी का दीपक जलाता है वह श्रेष्ठ गति को प्राप्त होता है। जो दीप वृक्ष (दीवट) लकड़ी या मिट्टी का बनाकर उस पर दीपक जलाता है वह सैंकड़ों कुलों के साथ शिव लोक में वास करता है। लोहे, पीतल, चाँदी, सोने तथा ताँबे का दीपक बनाकर शिव को प्रदान करता है वह हजारों चमकते हुए विमानों में बैठकर शिव लोक को जाता है।

कार्तिक के महीने में जो घृत का दीपक शिवालय में जलाता है तथा विधिपूर्वक शिव की पूजा करता है वह ब्रह्म लोक को प्राप्त करता है। जो रुद्र गायत्री अथवा ॐ मन्त्र से आसनादि अर्पण करके शिव को स्नान कराकर पूजा करता है, दक्षिण भाग में ॐ के द्वारा

ब्रह्मा की पूजा तथा गायत्री से विष्णु की पूजा करता है तथा पंचाक्षर मन्त्र या ॐ से अग्नि में हवन करता है वह शिव लोक को प्राप्त करता है। इस प्रकार हे मुनियो! मैंने आप लोगों से संक्षेप में शिव की पूजन विधि कही, जो स्वयं व्यासजी ने रुद्र के मुख से सुनी था, सो मैंने कही है।

पाशुपत व्रत महात्म्य वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! जैसे पशुपति को देखकर पशुपाश से विमुक्त देवों ने पशुपने को त्यागा, सो हमसे कहिये।

सूतजी बोले—प्राचीन काल की बात है कि कैलाश पर्वत की शिखर पर भोगाख्य नाम वाले स्वस्थान में विराजमान शिवजी के पास सब देवता मिल कर गये। वहाँ सब देवताओं के हित के लिए विष्णु भगवान भी गरुड़ पर चढ़ कर गये। सब देवताओं ने कैलाश पर पहुँच कर प्रणाम किया तथा विष्णु भगवान भी गरुड़ से उतर कर सुमेरु पर्वत पर चढ़े। सुमेरु पर्वत कितना रम्य है उसकी शोभा को कहते हैं कि वह दुरित रहित है

तथा भोगों से युक्त है, अनेक मृग आदि से सेवित है, अनेकों नाग पुङ्गणाद वृक्षों से युक्त, भ्रामरों के गुन्जार से युक्त, धव, सिदिर, पलाश, चन्दनादि से युक्त बड़ा ही रमणीक है। उस सुमेरु पर्वत के ऊपर पूर्व में विश्वकर्मा ने शिव के क्रीड़ा का स्थान बनाया है। उस स्थान को देखकर इन्द्र आदि देवताओं ने दूर-दूर से ही प्रणाम किया।

उसी समय देव देव महादेव ने अपने गणों और गणेश आदि के साथ कैलाश पर प्रवेश किया। ब्रह्मा आदि सब ही द्वार पर उपस्थित हैं तथा मणि और स्वर्ण आदि से निर्मित अनेक विमान वहाँ व्याप्त हैं, द्वार पर अनेक भवन रचे हुए हैं। सब देवों ने इस प्रकार के भवन देखकर प्रसन्न हो पुर में भीतर प्रवेश किया। वहाँ नाना प्रकार के मृदंग वेणु आदि बाजे बज रहे थे। अप्सरायें नृत्य कर रही थीं। वह स्थान अत्यन्त रमणीक था। वहाँ भी नाना वस्तुओं तथा मणियों के द्वारा सूर्य के समान तेजस्वी विमान रखे हैं। अनेकों तड़ाग, वापी, कूप आदि हैं तथा जिनकी सीढ़ियाँ वगैरह मणियों से जड़ी हैं।

इन्द्र आदि देवगण ने पुर के मध्य में सूर्य के सदृश प्रकाश वाला विमान देखा। विमान के द्वार पर नन्दीश्वर तथा गणेश को देखकर सभी ने प्रणाम किया। गणेश्वर ने कहा—हे देव! तुम निष्पाप हो। कहो कैसे आगमन

हुआ ? देवता बोले—हे देव! पशुपाश विमोक्षण के लिये महेश्वर महादेव के दर्शन कराओ ? प्रभु ने पूर्व में त्रिपुर को भस्म करने के लिये पशुत्व का वर्णन किया था। उस पशुत्व के प्रति हम सब शंका युक्त बने रहे। शिव ने ही पाशुव्रत कहा था इस व्रत से पशुत्व नहीं रहता। यह व्रत १२ वर्ष या १२ मास या १२ दिन का है सो इस व्रत के करने से सब पाप पशुपाश से मुक्त हो जायेंगे। ऐसा कहने पर नन्दी ने उन देवों को गण सहित साम्ब शिव का दर्शन कराया। देवों ने भव को प्रणाम कर स्तुति की। देव देव ने पशुत्व का विमोचन किया और स्वयं महेश्वर ने पाशुपत व्रत का उपदेश दिया। तब से सब देव पाशुपत कहलाये। उन्होंने तप किया। फिर १२ वर्ष के अन्त में सब देवता ब्रह्मा और विष्णु अपने-अपने स्थान को चले गये। हे मुनियो! यह वृत्तान्त मैंने ब्रह्मा के मुख से सुना था सो तुमसे कहा। पूर्वकाल में सनत्कुमार से व्यास जी ने सुना था। इस प्रकार मनुष्य पशुपाश से मुक्त हो जाता है।

द्वादश लिंगाख्य पाशुपाश विमोक्षण व्रत वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! आपके द्वारा पाशुपत के पाशुपाश विमोक्षण व्रत को सुना अब प्राचीन काल में देवताओं के द्वारा उसका किस प्रकार अनुष्ठान किया गया, यह आप हमारे लिए कहिए।

सूतजी बोले—पहले सनत्कुमार ने शैलादि से पूछा था। नन्दी ने उनको जो संक्षेप में कहा है देव, दैत्य, सिद्ध मुनियों ने उसका अनुष्ठान किया है, वह यही द्वादश लिंगाख्य पशुपाश विमोक्षण व्रत है। यह भोग काम और मुक्ति को देने वाला है। छः अंगों सहित वेद को मथकर के इसको निकाला है। संसार रूपी वृक्ष के जीवों को मोक्ष देने वाला है। ब्रह्मा, विष्णु ने भी इसका अनुष्ठान किया है।

शिव का पूजन साधारण रूप से सभी महीनों में करने की विधि का वर्णन करता हूँ। चैत्र में सोने की, वैशाख में वज्र की (हीरे) की, जेष्ठ में मर्कत मणि की, आषाढ़ में मुक्ता की, सावन में नील मणि निर्मित, भादों में पद्मराग मयी, आश्विन में गोमेद की, कार्तिक में प्रवाल, मार्गशीर्ष में वैदूर्य की, पूष में पद्मराग की, माघ में सूर्यकान्त मणि की, फागुन में स्फटिक मणि की

लिंग मूर्ति बनाकर पूजा करें। सभी महीनों में सोने का कमल बनाने या चाँदी से अथवा केवल कमल से ही पूजा करें। रत्नों के अभाव में सोना चाँदी उनके अभाव में ताम्र व लोहे से कार्य किया जाना चाहिए अथवा पत्थर की, लकड़ी की या मिट्टी की या सर्वगन्धमय शिव की मूर्ति बना लेनी चाहिए।

हेमन्त ऋतु में महादेव की श्री पत्र (बेल पत्र) से पूजा करे। सभी महीनों में चाँदी का कमल जिसमें सोने की कली बनी हों ऐसे कमल से पूजा करे अभाव में केवल बेल पत्र से पूजा करे। बेल पत्र में सदा लक्ष्मी निवास करती है। नील कमल में अम्बिका, उत्पल में षडमुख तथा महादेव पद्म में रहते हैं। श्री पत्र को कभी भी त्यागना नहीं चाहिए। गूगुल से उत्पन्न धूप सदा सर्व पापों का नाश करती है। अतः धूप दीप हमेशा अर्पण करना चाहिए। सर्व रोगों का नाश करने वाला सर्व सिद्धि देने वाला चन्दन कहा है। श्वेत आक के फूल में साक्षात् ब्रह्मा का वास है, कन्नेर में साक्षात् मेधा, करवीर में गणाध्यक्ष, वक में साक्षात् नारायण, सर्व सुगन्धित पुष्पों में गंगाजी निवास करती हैं।

शुद्ध अन्न एक या अधिक आढ़क शक्ति से निवेदन करना चाहिए। प्राणियों को अन्न दान करने से शंकर जी की तृप्ति होती है। इससे प्रति मास देव का पूजन

करना चाहिए। पूर्णमासी को महादेव जी का व्रत करना चाहिए। इससे सर्व कार्य की सिद्धि होती है।

सत्य, अहिंसा, शौच, दया, शान्ति, सन्तोष, दान धारण करके व्रत करना चाहिए। वर्ष के अन्त में गोदान तथा बैल की सवारी का त्याग तथा वेद पाठी ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए। शिव क्षेत्र में शिव लिंग की स्थापना करनी चाहिए या उसे ब्राह्मण को दान कर देना चाहिए। इस प्रकार शिव की पूजा करने वाला मनुष्य उत्तम तपस्वी हो जाता है और करोड़ों सूर्य के समान प्रकाश युक्त उत्तम बिमान में बैठकर शिव लोक को प्राप्त होता है। यह भक्त, शिवपने को, देवपने को, पित्रीश्वरपने को, गाणपत्यपने को पाता है। विद्यार्थी विद्या को, भोगार्थी भोगों को तथा जो जो भी कामना करता है यह उसको प्राप्त करता है। एक माह का व्रत करने पर भी मनुष्य रुद्रपने को पाता है। यह शुभ पवित्र व्रत देव, किन्नर विद्याधरों को रुचता है। विधि पूर्वक ईश का पूजन करने और मूर्धा से प्रणाम करके इस स्तवन का जप करता है वह शिवधाम को प्राप्त होता है। पूर्व में ब्रह्मा ने इस स्तोत्र को तीनों लोकों के हित के लिए कहा था। अतः यह स्तोत्र अमूल्य है।

विपोहन नाम का स्तोत्र

सूतजी बोले—हे ऋषियो! अब मैं विहोपन स्तवन को आप लोगों को कहता हूँ जो सर्व सिद्धि को देने वाला है। नन्दी के मुख से कुमार ने सुनकर व्यास जी को सुनाया तथा व्यास जी से मैंने सुना था। सो कहता हूँ—

शुद्ध, निर्मल, यशस्वी काल को देखने वाले परमात्मा भव के लिये नमस्कार है। वे पाँच मुख वाले, दश भुजा वाले, पन्द्रह नेत्रों से युक्त, स्फटिक मणि के समान, सम्पूर्ण आभूषणों से भूषित, सर्वज्ञ शान्त, सर्वोपरि स्थित हैं। पद्मासन में बैठे हुये सौमेश हमारे सभी पापों को दूर करें। ईशान, पुरुष, अघोर, वामदेव भगवान पापों को शीघ्र नाश करें। अनन्त, सर्व विद्याओं के ईश्वर, सर्वज्ञ, सब देने वाले, ध्याननिष्ठ शिवजी मेरे पापों को दूर करें। सूक्ष्म, सुर और असुरों के ईश्वर, विश्वेश, ध्यान में सम्पन्न शिवजी मेरे पापों को दूर करें।

शिवोत्तम, महापूज्य, ध्यान परायण, सर्वज्ञ, सर्वद और शान्त मेरे पापों को दूर करें। एकाक्ष, ईश, शिवार्चन, परायण, शिव ध्यान सम्पन्न महाराज मेरे पापों को दूर करें।

त्रिमूर्ति, ईश, शिव भक्त प्रबोधक, शिव ध्यान सम्पन्न

मेरे पापों को दूर करें इत्यादि। इस विपोहन स्तोत्र को जो भक्ति पूर्वक जपता है अथवा सुनता है वह सब पापों को त्याग कर रुद्र लोक को प्राप्त होता है। कन्या की कामना करने वाला कन्या को प्राप्त करता है। विद्यार्थी विद्या प्राप्त करता है। धन की कामना करने वाला धन प्राप्त करता है। इसको सुनने वाले को वात, पित्त, कफ की बीमारी नहीं होती। इस स्तोत्र को जपने से सब तीर्थों और दानों का जो फल है वह प्राप्त हो जाता है। गौ घाती, ब्रह्म हत्यारा, शरणागत घाती, मित्र द्रोही, माता पिता का हत्यारा भी सब पापों को त्याग कर शिव लोक में पूज्यनीय होता है।

शिव व्रतों का वर्णन

ऋषि कहने लगे—हे सूतजी! पवित्र विपोहन स्तोत्र को हमने सुना, अब प्रसंग व लिंग दोनों को हमसे कहिए।

सूतजी बोले—हे मुनियो! नन्दी ने कुमार से, कुमार ने व्यास से तथा व्यास से जो मैंने सुना वह शिव का व्रत तुमसे कहता हूँ।

दोनों पक्ष की अष्टमी और चौदस को शिव का

पूजन करे तथा रात्रि को भोजन करे। ऐसा करने से एक वर्ष में सम्पूर्ण यज्ञों का फल प्राप्त कर लेता है और परमगति को पाता है। मास की दोनों पंचमी और प्रतिपदा में जो क्षीरधारा का व्रत धारण करता है वह अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त कर लेता है।

कृष्ण पक्ष की अष्टमी से चौदस तक जो रात्रि में भोजन करता है वह ब्रह्म लोक को प्राप्त करता है। जो वर्ष तक रात्रि में पर्वों को धारण करता है तथा जितक्रोधी व ब्रह्मचारी रहता है तथा वर्ष के अन्त में ब्राह्मणों को भोजन कराता है वह शंकर जी के लोक को जाता है।

देवता पूर्वाह्न में, मध्याह्न में ऋषि लोग, अपराह्न में पित्रीश्वर तथा संध्या में गुह्यक लोग भोजन करते हैं। सब बेलाओं को त्याग कर रात में भोजन सबसे उत्तम है।

स्नान करके, सत्य भाषण, थोड़ा आहार, अग्नि में हवन, पृथ्वी पर शयन तथा रात्रि में भोजन करने से परम गति को पाता है। अब मैं प्रत्येक मास का व्रत कहूँगा जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्षदायक तथा सब पापों से मुक्त करने वाला है।

पौष में शिव का पूजन करके रात्रि में जो भोजन करता है, वह सत्यवादी और जितेन्द्रिय रहता है। जो दोनों पक्ष की अष्टमी का उपवास करता है, भूमि में

शयन करता है, पूर्णमासी को घृतादिक से शिव को स्नान कराकर शिव का पूजन करता है, खीर, घी आदि से ब्राह्मणों को भोजन कराकर जो गौ का दान करता है वह वन्हिलोक को जाता है।

इसी प्रकार माघ में शिव का पूजन करके जो रात्रि में घृत युक्त खिचड़ी का भोजन करता है, दोनों चतुर्दशी को व्रत रखता है, काला घोड़ा दान करता है, वह यम लोक में पहुंच कर यम के साथ क्रीड़ा करता है।

फाल्गुन के महीने में समान घृत दूध से रात में जो भोजन करता है तथा चौदस और आठें को उपवास करता है ऐसा शिव भक्त ताम्र वर्ण की गौ का जोड़ा ब्राह्मणों को भोजन कराकर दान करता है वह चन्द्र लोक जाता है।

चैत में रुद्र की पूजा करके चावल, घी, दूध से युक्त भोजन करने वाला, पृथ्वी पर सोने वाला पुरुष निरति के स्थान को पाता है। उसे पूर्णमासी में शिव का पूजन करके सफेद गौ का जोड़ा दान करना चाहिए।

वैशाख के महीने में पूर्णमासी का व्रत कर पंचगव्य तथा घृतादि से शिव को स्नान कराता है वह अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त करता है। जेष्ठ के महीने में देवेश की पूजा कर रात्रि में भोजन करता है, धूम्र वर्ण को गौ ब्राह्मण की सेवा में रहता है, धूम्र वर्ण को मिथुन का

दान करता है, पूर्णमासी का व्रत करता है वह वायु लोक में निवास करता है।

आषाढ़ के महीने में जो रात्रि में भोजन करता है, खांड, घी, सत्तू तथा गौरस का भोजन करता है, श्रोत्रीय ब्राह्मणों को भोजन कराता है, गौरवर्ण की गौ मिथुन का दान करता है वह वरुण लोक को जाता है।

श्रावण में शिव पूजा में परायण जो रात्रि को भोजन (दूध व चावल) करता है, पूर्णमासी को घृतादिक से पूजा करके श्रोत्रीय ब्राह्मण को भोजन कराता है तथा आगे के पैर सफेद हों ऐसी पौंड्रगौ मिथुन का दान करता है वह वायु के समान सर्वत्र विचरण करता है तथा वायु के सायुज्य को प्राप्त करता है।

भाद्रपद में जो रात्रि को भोजन करता है तथा वृक्ष की मूल में स्थित हवन के शेष भाग का भोजन करता है, वेद वेदांग पारंगत ब्राह्मणों को भोजन कराता है, नील कंधा वाले बैल तथा गौ का दान करता है वह यक्ष लोक में यक्षों का राजा बनता है।

आश्विन के माह में शंकर का यथावत पूजन कर जो ब्राह्मण को भोजन कराता है, नीलवर्ण का बैल तथा गौ को दान करने वाला मनुष्य ईशान लोक को प्राप्त होता है।

कार्तिक के महीने में खीर और भात का भोजन

करके जो शिव का पूजन करता है, ब्राह्मण को भोजन कराकर कपिला गौ मिथुन का तथा चरु का दान करता है वह सूर्य लोक में वास करता है।

मार्गशीर्ष के महीने में इस प्रकार का रात्रि में भोजन करने वाला तथा जौ का अन्न, घी, दूध खाकर उपवास करता है, दरिद्र तथा ब्राह्मणों को भोजन कराता है, पांडुवर्ण की गौ मिथुन का दान करता है वह सोमलोक में सोम के साथ आनन्द करता है।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, क्षमा, दया, ब्रह्मचर्य इनको धारण करके तीन बार स्नान करे, भूमि में शयन करे, रात्रि में भोजन करे, दोनों पक्षों की अष्टमी और चौदस का व्रत करना चाहिए। यह व्रत प्रतिमास का मैंने तुमसे कहा। हे ब्राह्मणो! जो कोई भी इस व्रत को एक वर्ष तक क्रम से या व्यतिक्रम से करे वह शिव सायुज्य को प्राप्त होता है।

उमा महेश्वर के व्रत का वर्णन

सूतजी बोले—उमा महेश्वर व्रत शिवजी के द्वारा कहा गया। पुरुष तथा सभी प्राणियों का हित करने

वाला है। वह तुम्हारे प्रति कहूँगा। पूर्णमासी में अमावस्या में, अष्टमी में, चतुर्दशी के दिन रात्रि में, हविष्यान्न का भोजन कराना चाहिए तथा शिव की पूजा करनी चाहिए। एक वर्ष तक व्रत करके बाद में सोने की या चाँदी की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठा करें। ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा दें। रथ में बिठाकर उस मूर्ति को शिवालय तक ले जाय। इस प्रकार वह शिव सायुज्य को प्राप्त होगा।

जो कन्या अथवा विधवा एक वर्ष तक इस प्रकार व्रत को करे वर्षान्त में भवानी के साथ प्रतिष्ठा करे तो भवानी की सायुज्य को प्राप्त होती है।

अब व्रतों का क्रम महीने वार कहता हूँ, सो सुनो। मार्गशीर्ष (अगहन) के महीने में नवांग पूर्ण बैल को शिवजी के नाम से छोड़ता है वह शिव और भवानी के साथ आनन्द को प्राप्त करता है। पौष के महीने में त्रिशूल का दान करने वाला, माघ मास में सर्वलक्षण सम्पन्न रथ को प्रदान करने वाला, फाल्गुन में सोने या चाँदी की प्रतिमा बनाकर शंकर के मन्दिर में स्थापना करने वाला, भवानी के साथ सायुज्य को पाता है।

चैत्र मास में शिव, भवानी, नन्दी आदि की प्रतिमा ताँबे की बनाकर स्थापना करने वाला वैशाख मास में कैलाश नाम के शिवजी के व्रत को करने वाला, कैलाश पर्वत को प्राप्त करके भवानी के साथ में मोद को प्राप्त

करता है। जेठ के महीने में महादेव की लिंग मय मूर्ति की प्रतिष्ठा कराने वाला, ब्राह्मणों को भोजन कराने वाला पुरुष देवी की सायुज्य को प्राप्त करता है। आषाढ़ में पक्की ईंटों आदि से बना उत्तम भवन, सम्पूर्ण वस्त्र आदि वस्तुओं से युक्त ब्रह्मचारी ब्राह्मण के लिये दान करने वाला, पुरुष गौ लोक को प्राप्त कर भगवान की सायुज्य को प्राप्त करता है। सावन के महीने में तिलों का पर्वत बनाकर जो वस्त्र ध्वजा धातुओं से युक्त करके ब्राह्मणों को दान करता है तथा भोजन कराता है वह पूर्व में कहे फल को पाता है। भादों में चावल का पर्वत इसी प्रकार दान करता है वह भवानी के साथ आनन्द को प्राप्त होता है। क्वार के मास में अनेकों प्रकार के अन्नों का पर्वत स्वर्ण युक्त करके ब्राह्मणों को दान करता है तथा उन्हें भोजन कराता है वह चिरकाल तक सायुज्य को प्राप्त करता है। कार्तिक के महीने में जो नारी देवी उमा की स्वर्ण आदि की प्रतिमा बनाकर तथा देवेश शिवजी की प्रतिमा शिवालय में उसकी स्थापना करती है वह शरीर को त्याग कर भवानी और शिव के साथ परम आनन्द को प्राप्त होती है।

जो कोई भी एक समय भोजन करके कार्तिक से अगहन तक एक वर्ष तक व्रत को धारण करता है वह शिव के साथ आनन्द को प्राप्त करता है। चाहे वह पुरुष

हो या स्त्री हो। ऐसा शिवजी ने स्वयं ही कहा है।

पंचाक्षर महात्म्य वर्णन

सूतजी बोले—सभी प्रकार के व्रतों में उमा महेश्वर का पूजन करके पंचाक्षरी विद्या का जप करना चाहिए। जप से ही व्रतों की विशेष समाप्ति होती है अन्यथा नहीं।

ऋषि बोले—हे सूतजी! पंचाक्षरी विद्या का वर्णन कहिये, हमें बहुत सुनने की इच्छा है।

सूतजी बोले—पूर्व में एक बार पार्वती जी के पूछने पर शिवजी ने पंचाक्षरी विद्या का वर्णन किया है उसे तुम्हें संक्षेप में कहता हूँ, सो सुनो—

शंकर जी बोले—हे पार्वती! प्रलयकाल में सब स्थावर जङ्गम के नष्ट हो जाने पर तुम्हारे द्वारा भी प्रकृति को प्राप्त होने पर केवल मैं ही स्थित रहा कोई दूसरा नहीं। इस समय वेद शास्त्र आदि सब केवल पंचाक्षर मन्त्र में ही स्थित रहे। मैं एक ही प्रकृति पुरुष रूप से दो प्रकार का हुआ। वही मेरा नारायण स्वरूप है। फिर योग की शैय्या में जल में शयन करता हूँ, तब नाभि से पाँच मुख वाला ब्रह्मा उत्पन्न होता है। सृष्टि की रचना

की इच्छा से दस मानसिक पुत्रों को पैदा करता है। उनको सृष्टि बढ़ाने के लिए ब्रह्मा मुझसे इन्हें शक्ति प्रार्थना करता है, तब मैं पंचाक्षरों का ब्रह्मा को उपदेश करता हूँ। सो हे देवि! उन पंचाक्षरों से वाच्य त्रिलोक पूजन शिव मैं ही हूँ और उनका वचन वह पंचाक्षर मन्त्र है।

ब्रह्माजी ने पाँच मुख से जगत के हितार्थ इस पंचाक्षर का अर्थ उन पुत्रों को वर्णन किया। वे इन पंचाक्षर को प्राप्त करके मेरु शिखर पर मुंजवान के पर्वत पर वायु का भक्षण करते हुए देवताओं के हजारों वर्ष तक तपस्या करने लगे। उनकी भक्ति से मैं प्रकट होकर उनके सामने आया। लोक कल्याण के लिये उनको मैंने मन्त्र के ऋषि, देवता, शक्ति, बीज, व्यास, विनियोग आदि का सम्पूर्ण रूप से उपदेश किया।

"ॐ" यह एकाक्षर मन्त्रगत शिव है। इससे युक्त षड् अक्षर ॐ नमः शिवाय मन्त्र है अन्यथा पंचाक्षर ही इसे जानो। जिसके मन में यह मन्त्र स्थित है उसने सम्पूर्ण वेद का अध्ययन कर लिया। जो विद्वान विधान पूर्वक इसका जप करता है वह परम पद को प्राप्त करता है। यही परम विद्या है ॐ सहित यह पंचाक्षर मन्त्र ही मेरा हृदय है। गुह्य मोक्ष प्रदाता यह मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता आदि तुमसे वर्णन करता हूँ।

इस मन्त्र का वामदेव ऋषि पंक्ति छन्द, देवता साक्षात् मैं ही शिव हूँ, नकारादि पाँच बीज पंच भूतात्मक हैं। सर्वव्यापी अव्यय (ॐ) प्रणव उसकी आत्मा में हैं। हे देवि! तुम इसकी शक्ति हो।

इस मन्त्र के द्वारा बताये गए विधि पूर्वक न्यास आदि भी करने चाहिए। हे शुभे! इसके बाद मैं तुमसे मन्त्र का ग्रहण करना कहता हूँ।

सत्य परायण, ध्यान परायण गुरु को प्राप्त करके शुद्ध भाव से मन, वाणी और कर्म के द्वारा तथा अनेकों द्रव्यों द्वारा आचार्य (गुरु) को सन्तुष्ट करके विधि पूर्वक गुरु मुख से मन्त्र ग्रहण करना चाहिए। शुचि स्थान में, अच्छे ग्रह में, अच्छे काल में तथा नक्षत्र में तथा श्रेष्ठ योग में मन्त्र ग्रहण करना चाहिए। गृह में मन्त्र जपना समान जानना चाहिए। गौ के खिरक में सौ गुना और शिवजी के पास में अनन्त गुना मन्त्र का फल होता है।

जप यज्ञ से सौ गुना उपाँशु जप का होता है। जो मन्त्र वाणी से उच्चारण किया जाता है वह वाचिक कहा जाता है। जो धीरे-धीरे ओठों को कुछ हिलाते हुए जप किया जाता है उसे उपाँशु कहते हैं। केवल मन बुद्धि के द्वारा जप किया जाए और शब्दार्थ का, चिन्तन किया जाए वह मानसिक जप होता है। तीनों उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं।

जप यज्ञ से देवता प्रसन्न होते हैं। वे विपुल भोगों को तथा मोक्ष को देते हैं, जप से जन्मान्तरों के पाप क्षय होते हैं, मृत्यु को भी जीत लिया जाता है। जप से सिद्धि प्राप्त होती है परन्तु सदाचारी पुरुष को सब सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं दुराचारी को नहीं, क्योंकि उसका साधन निष्फल है। अतः आचार ही परम धर्म है। आचार ही परम तप है तथा आचार ही परम विद्या है। आचार से ही परम गति है। आचारवान पुरुष ही सब फलों को पाता है तथा आचारहीन पुरुष संसार में निन्दित होता है। इसलिये सिद्धि की इच्छा वाले पुरुष को सब प्रकार से आचारवान होना चाहिए।

संन्ध्योपासना करने वाले पुरुष को सब कार्य तथा फल प्राप्त होते हैं। अतः काम, क्रोध, लोभ, मोह किसी प्रकार से भी संध्या को नहीं त्यागना चाहिए। संध्या न करने से ब्राह्मण ब्राह्मणत्व से नष्ट होता है। असत्य भाषण नहीं करना चाहिये। पर दारा, पर द्रव्य, पर हिंसा मन वाणी से भी नहीं करनी चाहिए। शूद्रान्न, बासा अन्न, गणान्न तथा राजान्न का सदा त्याग करना चाहिए। अन्न का परिशोधन अवश्य चाहिए।

बिना स्नान किये, बिना जप किये हुए, अग्नि कार्य न किए हुए भोजन न करें। रात्रि में तथा बिना दीपक के तथा पर्णपृष्ठ पर फूटे पात्र में तथा गली में, पतितों के

पास भोजन नहीं करना चाहिए। शूद्र का शेष तथा बालकों के साथ भोजन न करे। शुद्धान्न तथा सुसंस्कृत भोजन का एकाग्र चित्त से भोजन करना चाहिए। शिव इसके भोक्ता हैं ऐसा ध्यान करना चाहिए। मुंह से, खड़ा होकर, बायें हाथ से, दूसरे के हाथ से जल नहीं पीना चाहिए। अकेला मार्ग में न चले, बाहुओं से नदी को पार न करे, कुआं को न लांघे, पीठ पीछे गुरु या देवता अथवा सूर्य को करके जप आदिक न करे।

अग्नि में पैरों को न तपावे, अग्नि में मल का त्याग न करे। जल में पैरों को न पीटे, जल में नाक, थूक आदि मल का त्याग न करे।

अज, स्वान, खर, ऊँट, मार्जार तथा तुष की धूलि का स्पर्श न करे। जिसके घर में बिल्ली रहती है वह अन्त्यज के घर के समान है। उस घर में ब्राह्मणों को भोजन नहीं करना चाहिए क्योंकि वह चाण्डाल के समान है।

पाद की हवा, सूप की हवा, प्राण और मुख की हवा मनुष्य के सुकृत का हरण करती है अतः इनसे सदा बचना चाहिए। पाग बाँध करके, कंचुकी बाँधकर, केश खोलकर,नंगे होकर, अपवित्र हाथों से, मैल धारण किये हुए जप नहीं करना चाहिए। क्रोध, मद, जंभाई लेना, थूकना, प्रलाप, कुत्ता का या नीच का दर्शन, नींद आना

ये जप के द्वेषी हैं। इनके हो जाने पर सूर्य का दर्शन करना चाहिए तथा आचमन, प्राणायाम करके शेष जप करना चाहिए। बिना आसन पर बैठकर, सोकर, खाट पर बैठकर जप न करना चाहिए।

आसन पर बैठकर, रेशमी वस्त्र या बाघ चर्म या लकड़ी का या ताल पर्ण का आसन पर बैठकर मंत्रार्थ का विचार करते हुए जप करना चाहिए। त्रिकाल गुरु की पूजा करनी चाहिए। गुरु और शिव एक ही हैं। शिव विद्या और गुरु भक्ति के अनुसार फल मिलता है। श्री की इच्छा वाले पुरुष को गुरु की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। गुरु के सम्पर्क से मनुष्य के पाप नष्ट होते हैं। गुरु के सन्तुष्ट होने पर सब पाप नष्ट होते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि सभी देव गुरु की कृपा से ही उस पर सन्तुष्ट होते हैं। अतः कर्म, मन, वाणी से गुरु को क्रोध नहीं करना चाहिए। गुरु के क्रोध से आयु, ज्ञान, क्रिया सब नष्ट होते हैं। उसके यज्ञ निष्फल होते हैं।

शिवजी कहते हैं जो इन्द्रियों का दमन करके पंचाक्षर मन्त्र का जप करता है वह पंच भूतों से विजय को प्राप्त करता है। मन का संयम करके जो चार लाख जप करता है वह सभी इन्द्रियों को विजय कर लेता है। जो पच्चीस लाख जप करता है वह पच्चीस तत्वों को जीत लेता है।

बीज सहित संपुट सहित सौ लाख जप करने वाला पवित्र आत्मा परम गति को प्राप्त होकर मुझे पाता है। जो इस पंचाक्षर विधि को देव या पितृ कार्य में ब्राह्मणों से सुनेगा या सुनायेगा वह परम गति को प्राप्त होगा।

ध्यान यज्ञ वर्णन

ऋषि ने पूछा—हे सूतजी! विरक्त और ज्ञानियों के द्वारा ध्यान योग श्रेष्ठ कहा गया है। सो आप हमें ध्यान योग को विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

सूतजी ने कहा—एक बार एक गुफा में शिवजी महाराज भवानी के साथ सुखपूर्वक विराजमान थे। तब वहाँ पर मुनीश्वरों ने आकर उन्हें प्रणाम किया और स्तुति की। हे वृषभध्वज! अत्यन्त कालकूट नाम के विष को आपने नष्ट कर दिया। आप में ही सम्पूर्ण जगत स्थित है। इससे प्रसन्न होकर शिवजी ने कहा—हे ऋषियो! कालकूट विष नहीं है किन्तु यह संसार ही विष है। इससे सब प्रकार इस संसार से बचना चाहिए। देखा हुआ तथा सुना हुआ दोनों प्रकार का जो त्याग कर देता है वही संसार कहा है। निवृत्त लक्षण धर्म है और अज्ञान मूलक

संसार है। उद्‌भिज, स्वेदज, अण्डज और जरायज चार प्रकार के जीव हैं। विषयों की निवृत्ति भोग से नहीं होती किन्तु भोगने से तो वे इस प्रकार बढ़ते हैं जैसे अग्नि घी द्वारा और बढ़ती है।

राग द्वेष भय आदि नाना प्रकार के रोगों से ग्रस्त प्राणी छिन्न मूल वृक्ष की तरह विवश होकर गिर जाते हैं। पुण्य रूपी वृक्ष का क्षय होने से देवता भी स्वर्ग से पतित होकर अनेकों कष्टों को भोगते हैं। कीट, पक्षी, मृग, पशु आदि सबको इस संसार में दुखी ही देखा है। देवता, दैत्य, नृप, राक्षस सबको दुःखमय देखा है। उस तप से, नाना प्रकार के दानों से आत्मा लब्ध नहीं होती जैसी कि ज्ञानियों को लब्ध होती है। पर और अपर दो विद्यायें हैं। अपर विद्या वेद, शिक्षा, कल्प व्याकरणादि है। परा विद्या अक्षर (ब्रह्म) है जो शब्द रूप रस है। किन्तु शिवर्जा ने कहा है कि मैं सब कुछ हूँ। जगत मुझ में ही लय होता है तथा मुझसे ही उत्पन्न होता है। मेरे सिवाय कुछ नहीं। ऐसा जानना चाहिए।

मोक्ष का हेतु ज्ञान है। आत्मा में स्थित पुरुष ही मुक्त होता है। अज्ञान होने से क्रोध, लोभ, दम्भ, मोह की उत्पत्ति है। गुरु के सम्पर्क से उत्पन्न ज्ञान रूपी अग्नि उन्हें इस प्रकार जला देती है जैसे सूखे ईंधन को आँच जला देती है। जिस शिव की आज्ञा से भीत हुआ सूर्य

उदय होता है, वायु बढ़ती है, चन्द्रमा चमकता है, वह्नि जलती है, भूमि धारण करती है, आकाश, अवकाश देता है सो हे विप्रो! उसी शिव का चिन्तन करो।

संसार रूपी विष से तप्त मनुष्यों को ज्ञान और ध्यान के बिना कोई उपाय नहीं है। जो सब द्वन्दों को सहने वाला, सरल स्वभाव, अमानी, बुद्धिमानी, शान्त, ईर्ष्या रहित, सब प्राणियों में समान भाव वाला, तीनों ऋणों से रहित, पूर्व जन्म में पुण्य करने वाला, श्रद्धा से गुरु आदि की सेवा करने वाला, स्वर्ग लोक में प्राप्त होकर वहाँ के भोगों को भोगकर वह मनुष्य भारतवर्ष में जन्म लेकर ब्रह्म को जानना वाला बनता है। हे ब्राह्मणो! मल युक्त मनुष्य को ज्ञान प्राप्ति का यही क्रम है। इसलिए इसी मार्ग से दृढ़व्रत होकर सबका त्याग करके, संसार रूपी कालकूट से मुक्त होता है। इस प्रकार संक्षेप में मैंने ज्ञान योग महात्म्य और पाशुपत योग को कहा। हे विप्र! यह शिव के द्वारा कहा ज्ञान हर किसी को नहीं देना चाहिए यह योगियों को देने योग्य है। जो इस प्रसंग को पढ़ेगा या सुनेगा वह संसार से मुक्त होगा और ब्रह्म सायुज्य को प्राप्त होगा। इसमें संशय नहीं।

शिव शक्ति तत्व निरूपण में मुनि मोह नाश का वर्णन

सूतजी बोले—पूर्व कहे हुये इस ध्यान यज्ञ या पाशुपत योग को सुनकर शिवजी को मुनीश्वर सनत्कुमार आदि प्रणाम करके पुनः महेश्वर से बोले—हे प्रभो! आप हिमवान की पुत्री पार्वती जी के साथ जो क्रीड़ा करते हो उसका रहस्य भी हमें कहने की कृपा करिये।

ऐसा सुनकर नीललोहित पिनाकी अम्बिका की ओर देखकर और प्रणाम करके ब्राह्मणों से बोले—स्वेच्छा से शरीर धारण करने वाले मुझको बन्धन मोक्ष कुछ नहीं है। यह यज्ञ जीव माया और कर्मों के बन्धन में युक्त होकर भोगता है। आत्मरूप मुझे ज्ञान, ध्यान, बन्ध, मोक्ष कुछ भी नहीं है। यह प्रकृति पहले मेरी आज्ञा से मेरे मुख को देखने लगे और भवानी शंकर की तरफ देखने लगीं। माया मल से निर्मुक्त वह मुनि बड़े प्रसन्न हुए और उमा एवं शंकर में भेद वास्तव में नहीं है तथा शंकर ही दो प्रकार के रूप में स्थित हैं इसमें सन्देह नहीं। परमेश्वर की आज्ञा से यह विज्ञान उत्पन्न होता है तब क्षण मात्र में ही मुक्ति होती है। करोड़ों कर्मों द्वारा नहीं। प्राणी गर्भ में हो, बालक हो, तरुण हो, वृद्ध हो सब परमेष्ठि शिवजी की कृपा से क्षण मात्र में मुक्त हो जाते हैं। यही जगन्नाथ

शिव बंध मोक्ष करने वाले हैं। भू भुवः स्वः मह, जन, तप, सत्य आदि लोकों सातों द्वीपों में, ब्रह्मांड में, सब पर्वत तथा वनों में सम्पूर्ण जीव जो भी रहते हैं वह चराचर प्राणी सब शिव का ही रूप हैं। सब ही रुद्र स्वरूप हैं। अतः ऐसे रुद्र पुरुष को नमस्कार है। रुद्र की आज्ञा से यह देवी अम्बिका स्थित है।

यह सुनकर सब देवता और मुनीश्वर प्रसन्न हुए और अम्बिका के प्रसाद से शिव सायुज्य को प्राप्त हुये।

पाशुपत योग का विस्तार से निरूपण

ऋषि बोले—हे सूतजी! किस योग से योगियों को अणमादिक सिद्धि और सत्पुरुषों को गुण प्राप्ति होती है सो विस्तार से हमसे कहिये।

सूतजी बोले—अच्छा अब मैं परम दुर्लभ योग को कहूँगा। आदि में चित्त में पाँच प्रकार से शिव की स्थापना कर स्मरण करना चाहिए। सोम, सूर्य और अग्नि से युक्त चित्त में पद्मासन की कल्पना करनी चाहिए तथा छब्बीस शक्तियों से युक्त उस कमल के मध्य में उमा

सहित शंकर का १६ प्रकार से और आठ प्रकार तथा १२ प्रकार से स्मरण करे इसी से अणुमादिक शक्ति प्राप्त होती है अन्यथा कर्मों से नहीं। अणिमा, लघिमा, महिमा प्राप्ति होती है। इन अणमादिक शक्तियों से युक्त योगी को शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, मन उसकी इच्छा से प्रवृत्त होते हैं। अपनी इच्छा से प्रवृत्त नहीं होते। ऐसा योगी न जलता है, न मरता है, न छेदा जा सकता है। वह अपवर्ग नाम वाले परम दुर्लभ पद को प्राप्त होता है। ऐसा यह पाशुपत योग जानना चाहिए।

ब्रह्म का ही सदा सेवन करना चाहिए। ब्रह्म ही परम सुख है। वह हाथ पैर से रहित, जीभ मुख से रहित अत्यन्त सूक्ष्म है, वह बिना आँखों के ही देखता है, बिना कान के सुनता है तथा सबको देखता है, सब को जानता है उसी को महान पुरुष कहते हैं। जैसे पवन सब जगह विचरण करता है वैसे ही वह सब पुरी (शरीर) में रहने से पुरुष कहलाता है। वही अपने धर्म को त्यागकर माया के वशीभूत हो शुक्र शोणित होकर गर्भ में वास करता है और नौवें महीने में उत्पन्न होकर पाप कर्म रत होकर नर्क के भोगों को भोगता है। इसी प्रकार जीव अपने कर्मों के फल से नाना प्रकार के भोगों को भोगते हैं। अकेला ही अपने कर्मों को भोगता है और अकेला ही सबको छोड़कर जाता है। इसलिये सदैव सुकृत ही करने

चाहिए।

जीव के जाने पर उसके पीछे कोई नहीं चलता। बस उसका किया हुआ कर्म ही उसके पीछे चलता है। तामस रूपी घोर संसार छः प्रकार का उसको प्राप्त होता है। मनुष्य के पशुपने को प्राप्त होता है। पशु से मृगत्व को, मृगत्व से पक्षी भाव को, पक्षी भाव से सर्प आदि योनि को पाता है। सर्प आदि से स्थावर (वृक्ष) आदि की योनि को पाता है। इस प्रकार यह जीव मनुष्य से लेकर वृक्षों तक की अनेक योनियों में घूमता रहता है। जैसे कुम्हार का चाक घूमता है वैसे ही घूमता है। इसलिये संसार के भय से पीड़ित होकर धर्म की आराधना करनी चाहिए। जिससे वह संसार को तर सकता है।

अतः देवेश तीनों लोकों के नायक रुद्र का ध्यान करके हृदयस्थ वैश्वानर में पंचहुति करनी चाहिए।

पंचाहुति के मन्त्र निम्न प्रकार हैं—प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा तथा समानाय स्वाहा के द्वारा पाँच आहुति करके पुनः जल पान और भोजन करना चाहिए। इसके बाद प्रार्थना करे कि सब जगत के स्वामी हे प्रभो! आप प्रसन्न होइये। देवताओं में श्रेष्ठ आप ही हो। हमारा हवन किया हुआ यह अन्न आपका ही स्वरूप है। इस प्रकार रुद्र की प्रार्थना करे। यह योगाचार ब्रह्मा ने कहा है इसे पाशुपत व्रत

जानना चाहिए। इसे पढ़े व सुनावे तो परम गति को प्राप्त होता है।

शौचाचार लक्षण

सूतजी बोले—हे ऋषियो! अब मैं आप लोगों के लिए शौचाचार का लक्षण कहूँगा। जिसका पालन करने से मुनि लोग परम गति को पाते हैं। इसको पूर्व में ब्रह्मा जी ने सम्पूर्ण प्राणियों के हित के लिये कहा था उसको मैं अब संक्षेप से कहता हूँ।

शौच (पवित्रता) मुनियों के लिए उत्तम पद प्रदान करने वाला है। इसमें प्रमाद न करने वाला मुनि कभी भी नष्ट नहीं होता है। मान और अपमान मुनियों का विष और अमृत है। मान उनको अमृत है और अपमान विष है। यम और नियमों का पालन करता हुआ तथा गुरु के हित में सदा तत्पर रहकर एक वर्ष तक रहे। इस पृथ्वी पर उत्तम धर्म का आचरण करता हुआ ज्ञान योग को धारण करता है। आँखों के द्वारा जल को छानकर पवित्र करके पीना चाहिए। सत्य के द्वारा वाक्य को पवित्र करके वचन बोलने चाहिए और मन के द्वारा

पवित्र होकर आचरण करने चाहिए।

मछली पकड़ने वाले को छः मास में जो पाप लगता है वह अपवित्र जल पीने वाले को केवल एक दिन में ही लग जाता है। अपवित्र जल पीने वाले को अघोर मन्त्र का जप करना चाहिए। तब शुद्धि को प्राप्त करता है। उसे शम्भु का घी, दूध आदि के द्वारा विस्तार पूर्वक पूजन करना चाहिए और तीन परिक्रमा करनी चाहिए तो वह शुद्ध हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं। आतिथ्य सत्कार में तथा यज्ञ आदि में योगी को नहीं जाना चाहिए। योगी को अहिंसक होना चाहिए। अग्नि धुआं के रहित हो जाय, सब भोजन कर चुके हों तब नगर या गाँव में योगी को भिक्षा के लिए जाना चाहिए। वनस्थ और यायावर महात्माओं के यहाँ भिक्षा करनी चाहिए। गृहस्थी, श्रद्धालु तथा श्रोत्रियों के घर जाकर भिक्षा करनी चाहिए। दधि-भक्षक, दूध भक्षक तथा अन्य नियम वाले मनुष्य भिक्षा करने वाले की सोलहवीं कला को भी नहीं प्राप्त कर सकते। भिक्षाचारी को जितेन्द्रिय तथा भस्मशायी होना चाहिए। परम पद की इच्छा वाले को पाशुपत योग धारण करना चाहिए। सब योगियों को चान्द्रायण व्रत श्रेष्ठ है इसे एक दो या चार अपनी शक्ति सामर्थ्य के अनुसार करे। चोरी न करना, ब्रह्मचर्य धारण करना, लोभ न करना, त्याग करना तथा हिंसा न करना

ये पाँच व्रत करने चाहिए। फिर अक्रोध, आहार में लघुता, नित्य स्वाध्याय ये नियम कहे हैं। इनका पालन करना चाहिए। दम, शम, सत्य और अपाय, मौन, सब प्राणियों के प्रति नम्रता, यह अतीन्द्रियज्ञान शिव स्वरूप है ऐसा ज्ञानी लोग कहते हैं।

जो मनुष्य सदाचार में रत हैं, अपने धर्म का पालन करने वाले हैं, शान्त हैं, वे सब लोकों को जीतकर ब्रह्म लोक को जाते हैं। ब्रह्माजी ने जो सनातन धर्म का उपदेश सम्पूर्ण भूतों का हित करने वाला कहा है उसे मैं हे मुनीश्वरो! आप लोगों से कहता हूँ। गुरु तथा उपदेश करने वाले वृद्धों का आदर तथा प्रणाम करना चाहिए। ब्राह्मण और गुरुओं को अष्टांग प्रणाम तीन बार तथा तीन बार प्रदक्षिणा करनी चाहिए। छल, चुगली, अधिक हास त्याग देना चाहिए। गुरुओं के सामने प्रतिकूल बात नहीं करनी चाहिए। यति के आसन, वस्त्र, दण्ड, खड़ाऊं, माला, शयन स्थान, पात्र और छाया और उनके यज्ञपात्र इनको पैर से नहीं छूना चाहिए। देवद्रोह और गुरुद्रोह नहीं करना चाहिए। यदि प्रमाद से ऐसा हो जाय तो कम से कम एक हजार प्रणव (ॐ) का जप करना चाहिए।

ब्राह्मण को सन्ध्या का विच्छेद होने पर तीन बार सन्ध्या की आवृति करनी चाहिए। भस्म से काँसे की, लोहे की क्षार से, ताँबे की अम्ल से तथा सोने चाँदी के

पात्र जल मात्र से ही शुद्ध हो जाते हैं। तृण काष्ठादि की शुद्धि जल के छींटा मात्र से हो जाती है तथा यज्ञ के पात्र गर्म जल से शुद्ध होते हैं। ब्राह्मण को सो करके, छींक करके, थूक करके, खाकर के, अध्ययन आदि के लिये आचमन करना चाहिए। मैथुन करके, पति का स्पर्श करके, कुक्कुट, स्वान, कूकर, खर, काक, ऊँट का स्पर्श करके शुद्ध जल के स्नान से पवित्र होता है। रजस्वला तथा सूतिका का स्पर्श नहीं करना चाहिए। रजस्वला से वार्तालाप भी न करे, वह प्रथम दिन चाण्डाल, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी, तीसरे दिन रजिकी तथा चौथे दिन शुद्ध होती है। स्नान, शौच, गायन, रोदन, हसन, गमन, काजल लगाना, जुआ खेलना, दिन में सोना, दांतुन करना, मैथुन कर्म, मन वाणी के द्वारा देव पूजन, रजस्वला स्त्री द्वारा त्यागा जाना चाहिए। इस प्रकार सदाचार सभी प्राणी मात्र के लिए कहा है। जो पवित्र होकर सदाचार को पढ़े या सुने या ब्राह्मण के द्वारा श्रवण करे वह ब्रह्म लोक को प्राप्त करके ब्रह्मा के साथ आनन्द को पाता है।

यतियों के पाप शोधन प्रायश्चितों का वर्णन

सूतजी बोले—हे मुनीश्वरो! इससे आगे मैं शिव का कहा हुआ यतियों के लिए पाप शोधन और प्रायश्चित कहूँगा। मन वाणी और शरीर से होने वाले पाप तीन प्रकार के होते हैं। जो रात दिन होते रहते हैं। इनसे जगत लिपट रहा है। प्रमादी जन का योग ही बल है। योग से श्रेष्ठ मनुष्यों को और शुभ नहीं है। इससे धर्मात्मा मनीषी अविद्या को विद्या से जीतकर उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त कर योग की ही प्रशंसा करते हैं। यतियों के व्रत, उपव्रत के व्यतिक्रम में प्रायश्चित विधान होता है। यती यदि कामना से स्त्री को पाता है तो उसे सौ प्राणायाम से युक्त सान्तपन नामक व्रत करना चाहिये और फिर सावधान हो अन्त में कृच्छ व्रत करना चाहिए। यती यदि प्रमादी होकर पूर्व आश्रम में आकर विषयों में प्रवृत्त होता है तो वह असत् (झूठा) है और हिंसा करने वाला है तो उसे ऐसा दारुण कार्य नहीं करना चाहिए। क्योंकि ऐसे कार्यो से वह अधर्मी बन जाता है। यती को अधर्म में फंसाकर झूठ नहीं बोलना चाहिए।

परम आपत्ति आने पर भी यती को चोरी नहीं करनी चाहिए। चोरी से अधिक और कोई अधर्म नहीं है। ऐसा श्रुति कहती है। चोरी को परम हिंसा कहा गया है। क्योंकि

जो जिसका द्रव्यं है वह उसके वहिश्चर (बाहर रहने वाले) प्राण हैं। जो उसके धन को हरता है वह उसके प्राणों को हरता है।

ऐसा करने वाले को एक वर्ष तक चान्द्रायण व्रत करना चाहिए। यती को कर्म से, मन से, वाणी से किसी भी जीव की हिंसा नहीं नहीं करनी चाहिए। यदि बिना कामना के भी यती पशु, कीट आदि की हिंसा करता है तो उसे कृच्छ, अति कृच्छ तथा चान्द्रायण व्रत करने चाहिये। यदि यती इन्द्रियों की दुर्बलता से स्त्री को देखकर वीर्य का त्याग करता है तो उसे सोलह प्राणायाम करने चाहिए। यदि दिन में वीर्य स्खलित होता है तो उसको तीन रात्रि उपवास कर सौ प्राणायाम करने चाहिए। यदि रात्रि में स्खलित होता है तो स्नान कर १२ प्राणायाम करने से ही शुद्धि हो जाती है। यती को एकाकी भोजन करना, मधु मांस खाना तथा अभक्ष भोजन करना, क्षार, लवण खाना वर्जित है। इनके भी प्रायश्चित करने चाहिए। इसलिए सत्पुरुषों द्वारा निश्चय कर प्रजापत्य, कृच्छ आदि व्रत करने चाहिए और विशुद्ध होना चाहिए। यती को सोने व मिट्टी में समान भाव और सब भूतों में आत्मभाव समझकर विचरना चाहिए। ऐसा यती ध्रुव अव्यय परम पद को पाता है और फिर यहाँ जन्म नहीं लेता है।

योगियों को अपने लक्ष्य-प्राप्ति में आये हुये अरिष्टों का तथा मृत्यु सूचकों का वर्णन

सूतजी बोले—अब मैं आपके प्रति अरिष्टों को कहूँगा जिससे योगी लोग मृत्यु को देखते हैं। अरुन्धती को, ध्रुव तारे को तथा महापथ को जो नहीं देखता वह मनुष्य एक वर्ष से अधिक नहीं जीता है। सूर्य को बिना किरणों के तथा अग्नि को किरणों से युक्त देखता है वह ग्यारह महीना से अधिक नहीं जीता है। मूत्र और पुरीष को सोने और चाँदी के रूप में देखता है तथा वमन करता है, चाहे स्वप्न में ऐसा देखे या प्रत्यक्ष, वह दस महीने में मृत्यु को पाता है। सोने के वर्णों का वृक्ष अथवा गन्धर्व नगर तथा प्रेत पिशाचों को स्वप्न में देखता है वह नौ महीना से ज्यादा नहीं जीता। जो अचानक अत्यन्त स्थूल या अत्यन्त कृशकायकों को देखता है वह आठ महीना तक मृत्यु को पाता है। धूली या कीच में जिसके पर आगे या पीछे से खण्डित रूप में दिखते हैं वह सात महीने तक जिन्दा रहता है। काक, गिद्ध, कपोत अथवा दूसरा माँस खाने वाला पक्षी जिसके सिर पर बैठ जाता है वह छः मास तक जीता है। धूल की वर्षा में कौआ पंक्तियों में उड़ता हो तथा अपनी छाया को विकृत देखता है वह चार या पाँच महीने तक जीता है। बिना बादल के

जो बिजली को देखता है और दक्षिण दिशा में अपने को स्थित देता है तथा जल में इन्द्रधनुष को देखता है वह केवल दो-तीन महीने ही जीता है। जल में अथवा दर्पण में जो अपनी आत्मा को नहीं देख पाता अथवा बिना सिर के देखता है वह एक मास से ऊपर नहीं जीता।

मुर्दे की सी अथवा चर्बी की सी गन्ध अपने शरीर में देखता है वह १५ दिन से ज्यादा नहीं जीता। रीछ, बन्दरों से युक्त रथ में बैठकर जो दक्षिण दिशा को नाचता-गाता हुआ जाता है उसकी मृत्यु उपस्थित ही समझिये। काले वस्त्र पहने हुए, काले रंग की स्त्री जिसको स्वप्न में दक्षिण दिशा की ओर ले जाय वह नहीं जी सकता। अपने कण्ठ में जो मनुष्य छेद देखता है या नंगे संन्यासी को देखता है उसकी मृत्यु उपस्थित ही है। जो दिन में या रात्रि में बार बार डरता है,दीप की गन्ध जिसको नहीं आती जिसकी जीभ काली और कड़ी हो गई हो तथा मुख कमल का सा लाल हो और कपोलों पर पीली-पीली फुन्सी उठ आवे उसकी मृत्यु शीघ्र हो जाती है। दिन या रात्रि में प्रत्यक्ष पीटा जाता हो परन्तु उसे वह नहीं देख पाता उसे गत आयु जानना चाहिए।

ऐसे अरिष्टों को देखकर बुद्धिमान मनुष्य विषाद और खेद को छोड़कर पूर्व अथवा उत्तर दिशा में चला जाय वहाँ एकान्त से पूर्व या उत्तर मुख बैठकर आचमन

करे तथा महेश्वर को प्रणाम करके सीधा शान्त बैठे जैसे निर्वात स्थान में दीपक स्थिर हो जाता है ऐसे स्थिर बैठे और महेश्वर का ध्यान, नाक, कान, आँख, मन, बुद्धि के द्वारा करता रहे। ओंकार से देह को पूर्ण करे। ॐकार को तीन मात्रा वाला जानना चाहिए। व्यंजन इसमें ईश्वर है। पहली मात्रा विद्युती, दूसरी तामसी तथा तीसरी निर्गुणा जाननी चाहिए। प्रणव धनुष आत्मा बाण, ब्रह्म लक्ष्य कहा गया है। सावधान होकर के सर्वत्र लक्ष्य का भेदन करना चाहिए। ॐ में तीन मात्रायें, तीन लोक, तीन वेद अथवा तीन अग्नि, विष्णु के तीन डग है। अकार, उकार और मकार सहित ॐकार तीन मात्रा वाला कहा है। अकार भूलोक, उकार भुव लोक, व्यंजन सहित मकार स्वर लोक कहा है। ॐकार त्रिलोक मय है। उसका सिर त्रिविष्टप (स्वर) मय है। इसकी प्रथम मात्रा ह्रस्व, दूसरी दीर्घ तथा तीसरी प्लुत कही है।

प्रतिमाह सैंकड़ों अश्वमेघ यज्ञ करे उससे जो फल प्राप्त होगा वह प्रणव की मात्रा के ज्ञानी को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार योग से युक्त, पवित्र, जितेन्द्रिय, आत्मा को प्राप्त करता है। इसलिये पाशुपत योग के द्वारा बुद्धिमान को आत्मा का चिन्तन करना चाहिए। जो आत्मा को जानते हैं वह सब प्रकार से पवित्र हैं। योग के ज्ञान से ब्राह्मण, ऋग, यजु, साम और उपनिषदों

को स्वयं जान जाता है। सर्व देव मय होकर योनी क्रम को त्याग कर शाश्वत पद (मोक्ष) को प्राप्त हो जाता है। जैसे वृक्ष से पका हुआ फल वायु के वेग से गिरा दिया जाता है वैसे ही रुद्र को नमस्कार करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं। रुद्र को नमस्कार सर्व कर्मों के फल को निश्चय ही देता है अन्य देवों का नमस्कार इतना फल नहीं देता। अतः रुद्र को नमस्कार करनी चाहिए। ध्यान में परायण योगी जो अपने शरीर को त्यागता है वह तीन कुलों का उद्धार करता हुआ शिव सायुज्य को प्राप्त होता है। अरिष्ट को देखकर तथा मृत्यु को उपस्थित देखकर वाराणसी में अविमुक्तेश्वर पर जाकर जो नर शरीर को त्यागता है वह संसार से मुक्त है। हे ब्राह्मणो! जो श्री पर्वत पर अपने शरीर को छोड़ता है वह शिव सायुज्य को पाता है इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं। अविमुक्तेश्वर जीवों को मुक्ति देने वाला परम क्षेत्र है। बुद्धिमानों को उसका सदा सेवन करना चाहिए, मुक्ति के समय तो विशेष रूप से सेवन करे।

अन्धक राक्षस के गणपति बनाने की कथा

ऋषि बोले—हे सूतजी! मन्दराचल पर अन्धक दैत्य किस प्रकार दमन किया गया तथा शिव ने किस प्रकार अपना गणपति बनाया सो हमसे कहो।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! अन्धक पर कृपा और बल प्रदान संक्षेप से कहता हूँ। हिरण्याक्ष का पुत्र पूर्व में अन्धक नाम से प्रसिद्ध था। उसके सोने के से नेत्र थे। उसने तपस्या द्वारा ब्रह्माजी से अवध्य होने का वरदान प्राप्त कर लिया। त्रिलोकी को जीतकर भोगने लगा। इन्द्रादि देवताओं को पीड़ा देने लगा। देवताओं को अनेक प्रकार से ताड़ना देने लगा जिससे वे डरकर मन्दराचल में आकर रहने लगे। फिर इन्द्रादि सब सिद्ध और ऋषियों के साथ महेश शिवजी के पास आकर बोले—हे महाराज! अन्धक के शस्त्रों से छिन्न भिन्न हुए हम बड़े दुखी हैं। ऐसा सब वृत्तान्त सुनकर भगवान शंकर अपने गणों के साथ अन्धकासुर के पास आये। उस समय इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु सब सुरेश्वर, देवेश्वर तथा मुनिश्वर भगवान शिव की जय हो, जय हो, ऐसे वचन बोलने लगे।

अन्धक अपने बाणों से सब देवताओं को छिन्न भिन्न करने लगा। यह देखकर भगवान शिव ने उसे अपने

शूल से बेधकर ऊपर को टाँग लिया। भगवान के दर्शन से पाप रूपी कवच उसका दूर हो गया। यह देख ब्रह्मा जी शंकर को प्रणाम कर बड़े जोर से नाद करने लगे। देवता भी प्रसन्न होकर जोर से शब्द करके प्रशंसा करने लगे और पुष्पों की वर्षा भगवान पर करने लगे। तीनों लोकों में आनन्द और हर्ष होने लगा। शूल से जिसके पाप दग्ध हो गये हैं; वह दैत्य सात्विक भाव से विचार करने लगा जन्मान्तर में भी देव देव शंकर ने मुझ दग्ध किया था और शंकर की आराधना मैंने की थी। प्राणान्त समय में जो शंकर का स्मरण करता है वह शिव सायुज्य को प्राप्त होता है। बहुत स्मरण करने वाले की तो बात ही क्या है। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादिक सभी देवता इनकी शरण में रहते हैं। अतः शिव की शरण में ही मुझे जाना चाहिए। ऐसा विचार करके वह अन्धक शिवजी की गणों सहित स्तुति करने लगा।

शिवजी उसकी स्तुति से प्रसन्न हो हिरण्याक्ष के पुत्र जो सूर्य के मध्य में शूल पर टंगा है, उससे बोले— वरदान माँग मैं तेरे से प्रसन्न हूँ। शिव की ऐसी वाणी सुनकर वह दैत्य हर्ष से गद्-गद् हो महेश्वर से बोला— हे देव देवेश! भक्तों के दुःख दूर करने वाले शंकर, मुझसे प्रसन्न होइये और भक्ति रूप वरदान मुझे दीजिए। ऐसे अन्धक के वचन सुनकर भगवन ने दुर्लभ और

शुद्ध बुद्धि दी तथा शूल से उतार कर उसे गणपति पद पर अधिष्ठित किया। तब तो गणपति पद पर उसको अधिष्ठित जानकर सभी देवताओं ने उसे प्रणाम किया।

हिरण्याक्ष के द्वारा डूबी हुई पृथ्वी पर वाराह भगवान के द्वारा उद्धार

ऋषियों ने पूछा—हे सूतजी! इस अन्धक का पिता हिरण्याक्ष बड़ा ही दारुण था। उसको विष्णु ने कैसे मारा और विष्णु ने वाराह रूप कैसे धारण किया तथा उनका सींग शिवजी का भूषण कैसे हुआ। सो हे सूतजी! यह सब कथा हमसे कहिये।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! हिरण्यकशिपु का भाई और अन्धक का पिता हिरण्याक्ष बड़ा ही दारुण था। वह काल के समान था। उसने सभी देवताओं को जीतकर पृथ्वी को भी रसातल में ले जाकर बन्दी बना लिया था। ब्रह्मादिक सभी देवताओं को ताड़ना देने लगा। तब सभी देवता दुखी होकर विष्णु भगवान के पास गये और प्रणाम करके बोले—हे प्रभो! हिरण्याक्ष दुष्ट ने पृथ्वी

को बन्दी बना लिया है और हम सब उसके भय से बड़े दुखी हैं। यह सुन कर भगवान विष्णु ने घोर वाराह का रूप धारण किया और दंष्ट्रा (दाढ़) के आगे के भाग से उस महा दैत्य का संहार किया। इसके बाद रसातल में जाकर वहाँ से पृथ्वी को लाकर पूर्ववत् स्थापित किया। तब सभी ब्रह्मादिक देवताओं ने वाराह भगवान की स्तुति की।

हे भगवान! आप प्रसन्न होइये। आपने इस महा असुर को पुत्र भृत्य आदि के सहित अपनी दाढ़ के अग्रभाग से ही मार दिया। आप की जय हो। इस प्रकार की स्तुति करते हुए सभी देवताओं ने भूमि पर सिर रखकर वाराह भगवान को प्रणाम किया और पुनः पृथ्वी की वन्दना करने लगे।

हे धरणी! हे देवी! तुम लोकों को धारण करने वाली हो। हे मृत्तिके! सब पापों को दूर करो। हम सब मन, वचन और कर्म से तेरी स्तुति कर रहे हैं।

सूतजी कहने लगे—हे द्विजो! इस प्रकार देवताओं के द्वारा स्तुति की गई पृथ्वी प्रसन्न होकर उनसे बोली— वाराह भगवान की दाढ़ के द्वारा दुखी हुई मृत्तिका को जो मस्तक पर धारण करेगा वह सब पापों से छूट जाएगा। वह आयुष्मान, बलवान, धनवान और पुत्र पौत्रों से युक्त इस लोक में सुख भोगकर परलोक में देवों के साथ

क्रीड़ा करेगा।

इसके बाद वाराह भगवान क्षीर सागर को चले गये। उनकी दाढ़ को देव देव महेश्वर ने ग्रहण कर लिया और उसका भूषण बना कर दाढ़ी के नीचे हृदय पर धारण किया। उस समय सब इन्द्रादि देवताओं ने शिव की स्तुति की।

इस प्रकार देवाधिदेव विष्णु ने धरा को स्थापित किया जो सब जीवों का आधार है और विष्णु भगवान का कलेवर है। उस समय ब्रह्मा तथा अन्य देवों के साथ भगवान भव ने लीला की और विष्णु के अंग विभाग दाढ़ से भूषित हुए। इसी से महेश्वर को दंष्ट्री कहा गया है।

शिव-जलन्धर युद्ध तथा जलन्धर का वध

ऋषि बोले—जटा के मुकुट वाले, भग के नेत्र हरने वाले शंकर ने इन्द्र के पराक्रम को हरण करने वाले जलन्धर का वध किस प्रकार किया था। सो हे सूतजी! आप कृपा करके हमसे कहिये।

सूतजी बोले—हे द्विजो! जल मण्डल से उत्पन्न

जलन्धर नामक दैत्य था। उसने तपस्या से बहुत बल प्राप्त किया। उसने यक्ष, गन्धर्व, उरग, देव, दानव सभी को जीत लिया। ब्रह्मा को भी जीत लिया। फिर देव देव विष्णु को जीतने के लिए उनके साथ लगातार युद्ध किया। जलन्धर ने विष्णु को भी जीत लिया। जलन्धर जनार्दन को जीतकर विष्णु से बोला—मैंने तुमको युद्ध में जीत लिया अब केवल शंकर बाकी है। उसको गणों के साथ और नन्दी के साथ क्षणमात्र में जीतकर मैं ही रुद्रपने को, ब्रह्मपने को तथा विष्णुपने को और इन्द्रपने को तुम्हारे लिये प्रदान कर दूँगा। ऐसा राक्षसों से कहा। जलन्धर के ऐसे वाक्य सुनकर राक्षस बड़े जोर से शब्द करने लगे। दैत्यों के साथ रथ, घोड़ा, हाथी आदि को लेकर यह महाबली शिवजी के पास गया।

भग के नेत्रों का नाश करने वाले शिवजी ने इसको अवध्य सुन रक्खा था। ब्रह्मा के वचनों की रक्षा करते हुए शम्भु, पार्वती और नन्दी आदि गणों के सामने हँसते हुए कहने लगे कि मुझको अब क्या करना चाहिए। फिर राक्षस से बोले कि हे दैत्यराज! मेरे बाणों से छिन्न मस्तक वाला होकर तू मृत्यु को प्राप्त होगा। जलन्धर शिव के वचन सुनकर बोला—हे वृषभध्वज! ऐसे वचनों से क्या लाभ, चन्द्रमा के समान चमकते हुए शस्त्रों से लड़ने के लिए यहाँ आया हूँ। यह सुनकर रुद्र ने पैर के

अंगूठों से जल ही जल कर दिया (यह लीला दिखलाई)। और हँसते हुए बोले—कि मेरे पैर के द्वारा बने इस महा समुद्र में से यदि तू बाहर निकल आवे तो मेरे साथ युद्ध में समर्थ हो सकता है अन्यथा नहीं। हँसता हुआ जलन्धर बोला कि हे शंकर! तुझे गदा के द्वारा और देवताओं सहित इन्द्र को मारकर मैं चराचर को हनन कर सकता हूँ। जिस प्रकार सर्प के बच्चों को गरुड़ मार डालता है। हे शंकर! ऐसा कौन है जो मेरे बाणों से छेदन न किया गया हो। मैंने बालकपन में तपस्या से ब्रह्मा को जीत लिया, जवानी में देवता और ऋषि मुनियों को। तपस्या के बल से मैंने तीनों लोकों को क्षणमात्र में दग्ध कर दिया। हे रुद्र! तेरी क्या विष्णु को मैंने जीत लिया। इन्द्र, अग्नि, वरुण, कुबेर आदि देवता मेरी गन्ध को भी नहीं सह सकते जैसे नाग गरुड़ की गन्ध को नहीं सह सकते।

पृथ्वी और आकाश में मेरी सब जगह भुजायें फैली हुई हैं। उनकी खुजली मिटाने के लिए मदराचल आदि पर्वतों को मींड डाला। गंगा को भी रोक दिया, ऐरावत गज को भी समुद्र के जल में फेंक दिया। ब्रह्मा का मुख भी उल्टा कर दिया। रथ सहित इन्द्र को भी सौ योजन दूर फेंक दिया। गरुड़ को नागपाश में बाँध दिया। उर्वशी आदि अप्सराओं को भी कारागर में बन्द कर दिया जैसे तैसे इन्द्र ने प्रार्थना करके और शरण में आकर एक

शची को मेरे से प्राप्त कर लिया है। सो हे रुद्र! तू मुझे नहीं जानता।

ऐसा कहने पर महादेव ने नेत्र की अग्नि द्वारा उसका रथ भस्म कर दिया और दृष्टि मात्र से अन्य राक्षसों के घोड़े, रथ आदि को दग्ध कर दिया। वह दैत्य चलायमान नहीं हुआ और मरे हुए बान्धवों का सोच भी नहीं किया। सुदर्शन चक्र से रुद्र को मारने को तैयार हुआ। सुदर्शन चक्र को चलाने के लिए जैसे ही उसने अपने कन्धे पर रखा तैसे ही सिर से लेकर पैरों तक दो भाग में कटकर पृथ्वी पर गिर गया जैसे वज्र से कटा हुआं पर्वत गिर गया हो। उसके रक्त से सम्पूर्ण जगत व्याप्त हो गया और रुद्र के नियोग से उसका माँस भी रक्त हो गया। वही रक्त महा रौरव नर्क को प्राप्त हो रक्त का कुण्ड बन गया। जलन्धर को मरा देखकर सभी देव किन्नर यक्ष आदि हर्ष से गर्जना करने लगे। हे देव! अच्छा हुआ अच्छा हुआ आदि कहने लगे।

इस जलन्धर वध को जो कोई पढ़े, सुने या सुनावे वह शिवजी के गाणपत्य रूप को प्राप्त होता है।

विष्णु भगवान द्वारा शिवजी की सहस्त्र नामों से स्तुति करना

ऋषियों ने पूछा—हे सूतजी! देव देव महेश्वर से विष्णु भगवान ने सुदर्शन चक्र किस प्रकार प्राप्त किया। सो हमारे प्रति वर्णन कीजिए।

सूतजी बोले—हे मुनियो! एक बार देवता और असुरों में घोर संग्राम हुआ। देवता असुरों के अनेकानेक शस्त्र अस्त्रों से पीड़ित हुये भाग कर विष्णु भगवान के पास आये। प्रणाम करने पर भयभीत हुये देवों को देखकर हरि ने पूछा—हे देवताओं! क्या आपत्ति है जिससे सन्ताप युक्त दौड़कर आये हो। देवता बोले—हे विष्णो! हम लोग दैत्यों से पराजित हुए आपकी शरण में आये हैं। तुम ही जगत के कर्ता और हर्ता हो। हमारी रक्षा करो। वे दैत्य, देव वरदान के कारण वैष्णव रौद्र सौर, वायव्य आदि शस्त्रों से अवध्य हैं। आपका चक्र जो सूर्य मण्डल से उत्पन्न है कुण्ठित है। दण्ड, शार्ङ्ग और सब शस्त्र दैत्यों ने प्राप्त कर लिए हैं। पूर्व में त्रिपुरारी शिव ने जलन्धर को मारने के लिए जो तीक्ष्ण चक्र निर्माण किया था। उससे मार सकोगे अन्य शस्त्रों से नहीं।

विष्णु बोले—हे देवो! त्रिपुरारी ने जो चक्र जलन्धर के वध के लिए बनाया है उसी से सब दैत्यों को बन्धु-

बान्धवों सहित मार कर तुम्हारे सन्ताप को दूर करूँगा। ऐसा कहकर विष्णु ने हिमालय शिखर पर महादेव के लिंग की स्थापना करी जो कि मेरु पर्वत के समान विश्वकर्मा ने निर्माण किया। शिव सहस्त्र नाम से विष्णु भगवान ने पूजन किया और स्तुति की। सहस्त्र नाम से पूजन करते हुए प्रत्येक नाम् पर कमल पुष्प से पूजन करने लगे और समिधा स्थापित कर अग्नि में सहस्त्र नाम से आहुति की। श्री विष्णु ने शिव के सहस्त्र नाम का पाठ किया। हे भव, शिव, हर, रुद्र, नीललोहित, पद्मलोचन, अष्टमूर्ति, विश्वमूर्ति, वामदेव, महादेव इत्यादि सहस्त्र नाम से स्तुति की।

हे ऋषियो! इस प्रकार हरि सहस्त्र नाम से स्तुति करते हुए प्रत्येक नाम पर कमल अर्पण करते रहे। शिव ने हरि की परीक्षार्थ हजार कमलों में से एक कमल छिपा दिया। हरि विचार करने लगे क्या किया जाय। एक कमल कम हो गया सो अपने नेत्र रूपी कमल को निकाल कर शिव को अर्पण कर दिया। इस भाव से प्रसन्न हुए शिवजी अग्नि मण्डल से प्रकट हुए। उस समय उनका हजारों सूर्य मण्डल के सदृश तेज था। वे जटा मुकुट से शोभित शूल, टंक, गदा, चक्र, पाश आदि धारण किए हुए थे। ऐसे उग्र रूप को देखकर हरि भगवान ने शम्भु को नमस्कार किया। देवता भय से भागने लगे।

ब्रह्मलोक चलायमान हो गया। वसुन्धरा काँपने लगी। शिव का तेज सौ योजन तक जलाने लगा। ऊपर नीचे के सभी लोकों में हा-हाकार मच गया।

उस समय शंकर हँसते हुए विष्णु से बोले—हे जनार्दन! मैंने तुम्हारे देव कार्य को जान लिया है। यह सुदर्शन चक्र तुम्हारे लिये देता हूँ। ऐसा कहकर हजारों सूर्य के समान तेज वाला चक्र और ब्रह्म पद्म के सदृश हरि को दे दिया और तब से हरि का नाम पद्माक्ष पड़ा। शिव ने कहा—हे पुरुषोत्तम! मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूँ। तुम वरदान माँगो। तब विष्णु बोले—हे देव! आपकी भक्ति बनी रहे और आप प्रसन्न रहिये, यह वरदान माँगता हूँ और कुछ नहीं। यह सुनकर शिव बोले—तुम्हारी मेरे में भक्ति बनी रहेगी और तुम सब देवों के पूज्य और वन्दनीय बने रहोगे। जब दक्ष की पुत्री सती पिता के अपमान से भस्म होगी और फिर दिव्य रूप से हिमाचल की पुत्री उमा होगी, उस समय तुम ही अवतार लेकर ब्रह्मा की आज्ञा से उमा को मेरे लिए प्रदान करोगे। तब मेरे सम्बन्धी तुम लोकों में पूज्य होगे।

ऐसा कहकर नीललोहित भगवान अन्तर्ध्यान हो गये। जनार्दन भगवान ने सब युक्तियों से ब्रह्मा के समीप यह कि मेरे द्वारा पठित जो यह स्तोत्र है इसको जो पढ़े या सुने उसको प्रति नाम पर स्वर्ण दान का फल मिलेगा

और हजार अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होगा। जो इस सहस्त्र नाम द्वारा घृत अथवा जल से शंकर भगवान को स्नान करायेगा उसे भी सहस्त्र यज्ञ का फल प्राप्त होगा और रुद्र का प्यारा होगा। तब ब्रह्माजी भी हरि भगवान से तथास्तु कह अपने लोक को चले गये।

सूतजी कहते हैं कि हे द्विजो! जो इस सहस्त्र नाम से शिव की पूजा करेगा या इसका जप करेगा, वह परम गति को प्राप्त होगा।

देवताओं के द्वारा शंकर भगवान की स्तुति

ऋषियों ने कहा—हे सूतजी! गजानन गणेश की उत्पत्ति कैसे हुई और उनका प्रभाव कैसा है, सो हमसे कहिये।

सूतजी कहने लगे—जिस अवसर पर इन्द्र उपेन्द्रादि देवगण दैत्यों के धर्म कर्म विध्वंस करने लगे और दैत्य असुर दानव क्रूर कर्म करने वाले तमोगुण, रजोगुण स्वभाव वाले वे सभी भूमि पर अपने को निर्विघ्न की इच्छा वाले होकर यज्ञ दान तप से महेश्वर को, ब्रह्मा को, हरि को प्रसन्न करने लगे और उनसे वरदान प्राप्त

करके हमारी सदा विजय हो यह चाहने लगे। उस समय दैत्यों के विघ्न के लिए और देवताओं के अविघ्न के लिए, नारियों को पुत्र प्राप्ति के लिए,नरों को कर्म सिद्धि के लिए शंकर भगवान ने गणेश जी की रचना की। ऐसा देखकर देवता परस्पर शिव की स्तुति करने लगे। देवता बोले—हे सबके आत्मस्वरूप! हे अनघ! आपको नमस्कार है। हे विरंचरूप! देवकार्य सिद्ध करने वाले प्रभो आपको नमस्कार है। हे कालरूप! अग्निरूप, रुद्ररूप आपको नमस्कार है। हे कालकण्ठ! अम्बिका के पति, स्वर्ण के रूप वाले, हे शूलधारी! हे कपाल! दण्ड, पाश, खड्ग, ढाल, अंकुश धारण करने वाले, पाँच मुख वाले, सर्पों का हार पहनने वाले, पंचाक्षर स्वरूप आपको नमस्कार है। 'क' आदि पाँच अक्षर और 'च' आदि पाँच अक्षर जिनके हाथ हैं। 'ट' आदि पाँच अक्षर और 'त' आदि पाँच अक्षर जिनके पैर हैं। 'प' आदि पाँच अक्षर जिनके लिंग हैं। सूर्य सोम अग्नि जिनके नेत्र हैं ऐसे आपको नमस्कार है। ऋक यजु सामवेद रूप आप हो आप ही ॐकार स्वरूप हो। आपको नमस्कार है। ॐकार में तीन रूपों से आप ही स्थित हो अर्थात् पीत रूप, शुक्ल रूप और रक्त रूप से ऐसे हे शिव! आपको नमस्कार है। ब्रह्म रूप, विष्णु रूप और कुमार रूप आपको नमस्कार है। आप सूक्ष्म, स्थूल रूप

से स्थित हो, सर्व संकल्पों से रहित हो। आदि मध्य अन्त से हीन हो। ऐसे आपको नमस्कार है। यम, अग्नि, वायु, रुद्र, जल, सोम इन्द्रादि देवों और निश्चरों द्वारा आप निशि दिन पूजित हो ऐसे हे प्रभो! आपको नमस्कार है। आप महेश्वर हो, धीर हो, साक्षात् शिव हो। आपके लिए नमस्कार है, आदि-आदि।

सूतजी कहते हैं कि हे ब्राह्मणो! इन्द्र, अग्नि, वरुण आदि देवों द्वारा किया गया यह स्तोत्र है जो भक्ति और श्रद्धा से इसे पढ़ेगा या सुनावेगा, वह परम गति को पायेगा।

विघ्न विनायक गणेश जी की उत्पत्ति का वर्णन

सूतजी कहने लगे—इस प्रकार स्तुति करके देवता शिवजी के सामने उपस्थित हुए तो शंकर भगवान ने उनकी ओर देखा। आनन्दपूर्ण आँसुओं से देवों ने फिर प्रणाम किया। शिव ने कहा—कि हे देवो! तुम्हारा कल्याण हो। देवता बोले—दैत्यों से हमारा कभी विघ्न न रहे ऐसी प्रार्थना है। देवों का अपकार करने वाले

दैत्यों से हमें कभी भी विघ्न प्राप्त न होवे यही हम वरदान माँगते हैं।

फिर पिनाकी शिव ने गणेश्वर का शरीर धारण किया। गणेश्वरों ने और देवताओं ने संसार के दुःख दूर करने वाले, गज के से मुख वाले, त्रिशूल धारण करने वाले गजानन को देखा। उस समय सिद्ध मुनीश्वर देवता आकाश से फूलों की वर्षा करने लगे तथा गणेश को और महेश को प्रणाम किया। फिर मूर्तमान सुन्दर बालक गज के से मुख वाला महेश्वर और अम्बिका को प्रणाम करने लगा और शिव ने उसे सुन्दर हाथों से उसका आलिंगन किया और उसकी मूर्धा में चुम्बन किया और कहा हे पुत्र! तेरा अवतार दैत्यों के नाश के लिए तथा ब्रह्मवादी द्विजों के उपकार के लिए है। दक्षिणा हीन जो यज्ञ करे उसके यज्ञ में तू विघ्न कर। अध्यापन, अध्ययन, व्याख्यान रूपी कर्मों को जो अन्याय से करते हैं उनके प्राणों को हरण कर, जो स्त्री अथवा पुरुष अपने वर्ण से गिरा है और अपने धर्म का पालन नहीं करता उसके प्राणों का हरण कर। हे विनायक! जो स्त्री या पुरुष तुम्हारा नित्य पूजन करते हैं। उनके लिए सम्पत्ति प्रदान कर। हे गणेश! भक्तों की सदा रक्षा कर, जवान और वृद्धों की भी रक्षा कर। तीनों लोकों में तू ही सर्व पूज्य और वन्दनीय होगा।

जो ब्राह्मण मुझको, नारायण को या ब्रह्मा को यज्ञादिकों में पूजेंगे उनमें सबसे पहले तुम्हारा पूजन करेगा। जो तुम्हारा पूजन करके श्रौत, स्मार्त या लौकिक कर्म करेगा उसका कल्याण और तुम्हारा अर्चन न करने वाले का अकल्याण होगा। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र सर्व सिद्धि के लिए अनेक प्रकार के भोजनों का भोग लगाकर तुम्हारा पूजन करेंगे। गन्ध, पुष्प, धूप आदि से तुम्हारा पूजन न करने वाले को चाहे वह देव हो, मनुष्य हो उसको कोई भी फल नहीं मिलेगा। ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा अन्य देवताओं का पूजन करने वाला पुरुष प्रथम में तुम्हारा पूजन करके विघ्न बाधाओं से रहित रहेगा। तब से लेकर जगत में गणेश जी का सब पूजन करते हैं। वे दैत्यों के यज्ञों का ध्वंस करते हैं।

इस प्रकार से स्कन्द के बड़े भाई गणेश की उत्पत्ति तुम्हारे सामने वर्णन की। जो इस प्रसंग को पढ़ेगा, सुनेगा और सुनावेगा वही सुखी होगा। इसमें कोई संशय नहीं है। इसका सुनने वाला या प्राप्त करने वाला परम गति को पाता है तथा गणेश्वर के साथ रुद्र लोक में आनन्द प्राप्त करता है।

शिव तांडव वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! स्कन्द के बड़े भ्राता गणेश की उत्पत्ति हमने सुनी। अब शिव के तांडव नृत्य का आरम्भ कैसे हुआ, सो कहिए।

सूतजी बोले—दारुक नाम वाला एक असुर हुआ। जिसने तपस्या के द्वारा वरदान प्राप्त किया था वह उसके प्रभाव से देवों और ब्राह्मणों को प्रलय की अग्नि के समान दुःख देने लगा। दारुक के द्वारा पीड़ित हुए देवता, ब्रह्मा, ईशान, कुमार, यम, इन्द्र, विष्णु आदि की शरण में पहुँचे और कहा कि हे महाराज! यह दैत्य स्त्री के द्वारा वध करने योग्य है। तब ब्रह्मादिक सभी स्त्री बनकर उससे लड़ने गए परन्तु उन सबको उस दैत्य ने ताड़ित करके भगा दिया। देवता पुनः ब्रह्माजी के पास गए और स्तुति करने लगे। ब्रह्माजी तब देवेश शिवजी के पास पहुँचे और प्रणाम करके बोले—हे भगवन्! स्त्री के द्वारा यह असुर वध होगा ऐसे इस दारुक से रक्षा कीजिए।

यह सुनकर शिवजी हँसते हुए गिरिजा पार्वती से बोले—हे कल्याणी! जगत के हित के लिए और स्त्री के द्वारा वध योग्य इस दारुक को मारने के लिए तुमसे प्रार्थना करता हूँ। ऐसा सुनकर देवी पार्वती एक अंश से महेश्वर के शरीर में प्रवेश कर गईं। इस भेद को इन्द्रादिक

देवताओं और ब्रह्मा ने नहीं समझा। देवी को शिव के पास पूर्ववत् बैठी देखा क्योंकि वे सब देवी की माया से मोहित हो गये। पार्वती ने शिव के शरीर में प्रवेश करके उनके कण्ठ में स्थित विष से अपना शरीर धारण किया जो काले वर्ण वाला हुआ। कामारि शिव ने तब हृदय में उनको ऐसा जान कर अपने तीसरे नेत्र से उन्हें बाहर उत्पन्न किया। उस समय दैत्यों के नाश के लिए और भवानी और भोलेश्वर की तुष्टि के लिए विष से काले कण्ठ वाली उस काली के दारुण रूप को देखकर डर के मारे देवता व सिद्ध लोग भागने लगे। उस काली के ललाट में तीसरा नेत्र है, ललाट में चन्द्र रेखा है। कण्ठ में कराल विष का चिह्न है, हाथ में भयंकर त्रिशूल है। नाना प्रकार के आभूषण हैं, दिव्य वस्त्र धारण किए हुए हैं।

इसके बाद ऐसी देवी ने पार्वती की आज्ञा से देवताओं को दुःख देने वाले ब्रह्म दारुक असुर को मार दिया। परन्तु उसके क्रोध की ज्वाला से सम्पूर्ण लोक जलने लगा। उसके क्रोध शान्ति के लिए शिव ने श्मशान में बालक का छोटा रूप धारण किया और बच्चे के समान रोने लगे। भगवान की माया से मोहित हुई वह देवी उस बालक को उठाकर पुचकार अपने स्तनों से दूध पिलाने लगी। शिव रूपी बालक ने दूध के साथ ही उसके क्रोध

का भी पान कर लिया। उसके उस क्रोध से आठ मूर्ति हुईं जो क्षेत्रपाल कहलाईं। इस प्रकार बालक रूपी शिव ने उस देवी का क्रोध पी लिया तो वह मूर्छित हो गईं। तब उस देवी को होश में लाने के लिए ताण्डव नृत्य किया। सायंकाल के समय सब भूतों और प्रेतों के सहित त्रिशूल हाथ में लेकर शिव ने नृत्य किया। शम्भू के कण्ठ पर्यन्त नृत्य रूपी अमृत का पान कर वह भी नाचने लगी। तब उसको योगिनी कहा गया।

उस समय ब्रह्मा, इन्द्र आदिक देवताओं ने उस देवी काली की तथा पार्वती की स्तुति करके प्रणाम किया। इस प्रकार त्रिशूल धारण करने वाले शिव का तांडव मैंने संक्षेप से कहा।

उपमन्यु का चरित्र

ऋषि बोले—हे सूतजी! पूर्वकाल में उपमन्यु ने महेश्वर से गाणपत्य पद और दूध का समुद्र कैसे प्राप्त किया सो हमारे प्रति वर्णन कीजिए।

सूतजी बोले—उपमन्यु नाम वाले मुनि अति तेजस्वी बालक थे। उन्होंने मामा के घर जाकर थोड़ा सा दूध

पिया था। मामा के पुत्र ने ईर्ष्या के कारण उसे दूध नहीं पीने दिया और सब दूध को स्वयं पी गया। उपमन्यु ने अपनी माता से गरम-गरम उत्तम दूध और माँगा। माता ने पुत्र को आलिंगन करके बहुत समझाया। परन्तु उपमन्यु ''दूध और दो दूध और दो'' ऐसी बातें कहता हुआ जोर-जोर से रोने लगा। सिले को बीनकर कुछ अन्नों के दाने पीसकर और जल में घोलकर माता ने दुखी होकर पुत्र को दिया। उस बनावटी दूध को पीकर बालक ने कहा कि हे माता यह दूध नहीं है। माता ने चुम्बन करके और उसके नेत्रों को पौंछकर कहा—हे पुत्र! रत्नपूर्ण नदी स्वर्ग से पाताल तक बह रही है। परन्तु भाग्यहीन और शिव की भक्ति से हीन मनुष्य उसे नहीं देख पाते हैं। राज्य, स्वर्ग, मोक्ष, दूध से बने उत्तम भोजन तथा और भी उत्तम वस्तु उनको नहीं मिल पाती जिन पर शिव प्रसन्न नहीं हैं। यह सब भगवान शिव की कृपा से मिलते हैं। दूध हमें कहाँ मिलेगा, पूर्व जन्म में हमने न तो शिव का पूजन किया और शिव का लक्ष जप भी नहीं किया।

यह सुनकर बालक माता को प्रणाम करके बोला—हे माता! तू शोक को त्याग। हे माता! यदि महादेव कहीं पर हैं तो चिरकाल में अथवा शीघ्र ही दूध का समुद्र उनको प्रसन्न करके प्राप्त करूंगा।

इस प्रकार माता को प्रणाम करके बालक उपमन्यु

तपस्या को चल दिया और माता ने उसे आशीर्वाद दिया। वह हिमालय पर जाकर तपस्या करने लगा और केवल वायु पीकर रहने लगा। उसकी तपस्या से जगत जलने लगा। देवता सभी घबड़ाकर विष्णु भगवान के पास पहुँचे। विष्णु भगवान सब कारण जानकर देवताओं को साथ लेकर महेश्वर के पास पहुँचे और हाथ जोड़कर प्रणाम करके उनसे बोले—हे भगवन्! यह उपमन्यु नामक बालक दूध के लिए तपस्या द्वारा जगत को जलाये डाल रहा है, इसको रोकिये। ऐसा सुनकर पिनाकी महेश्वर इन्द्र का रूप धारण करके उसके आश्रम में गए। उसे देखकर रूपधारी शिव बोले—हे बालक! तू वर माँग, तुझे मैं वर दूँगा, तेरे तप से मैं प्रसन्न हूँ। मुनि उपमन्यु ने कहा कि मैं शिव में भक्ति चाहता हूँ। यह सुनकर कुछ कुपित से होकर शिव ने कहा—हे मुनि! तीनों लोकों के द्वारा नमस्कृत सब देवों का स्वामी देवराज इन्द्र मुझको जान। मेरी भक्ति कर, सब प्रकार का कल्याण तुझे दूँगा। निर्गुण शिव का आग्रह त्याग।

कानों को विदीर्ण करने वाले ऐसे उस इन्द्र के वचन सुनकर ब्राह्मण उपमन्यु बोला कि तुम कोई अधम दैत्य हो और मेरा धर्म बिगाड़ने आए हो, जो शिव की निन्दा कर रहे हो। मेरा अनुमान है कि पूर्व जन्म का मेरा कोई पाप था जो शिव की निन्दा आज सुनी। शिव की निन्दा

सुनकर तुरन्त देह का त्याग कर देना चाहिए अथवा निन्दक का वध कर देना चाहिए। ऐसा करने वाला शिव के लोक को पाता है। पहले माता ने ठीक ही कहा था कि पूर्व में हमने शिव की पूजा नहीं की थी। शिव की निन्दा करने वाले की जीभ को जो काट देता है वह अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करके शिव लोक को जाता है। ऐसा कहकर अथर्वास्त्र से इन्द्र रूपी शिव को मारने की इच्छा की। भस्म की मुट्ठी भरकर उसने इन्द्र पर फेंकी और अपनी देह को दग्ध करने के लिए आग्नेय मन्त्र का ध्यान किया।

भगवान शंकर ने तब चन्द्रकास्त्रसे उस अस्त्र का निवारण किया और बालेन्दु रूप से अपना स्वरूप ब्राह्मण को दिखाया। हजारों दूध की धारायें, दूध का समुद्र, दही आदि का समुद्र, बालकों को भक्ष्य भोज्य पदार्थों का समुद्र, पूजाओं का पर्वत सामने दिखाते हुए शिवजी उससे बोले—हे ब्राह्मण! भाई बन्धुओं सहित इस सबका उपभोग कीजिए। पुनः गिरिजा की तरफ देखते हुए हँसकर कहा कि दे देवि! मैंने इसे पुत्र रूप में स्वीकार कर लिया है, और हे मुने! अब तेरा पिता महादेव और तेरी माता जगन्माता पार्वती हैं। मैं तुझे अमर बना और अपना गाणपत्य पद देता हूँ जो भी और कुछ माँगना हो वह मुझसे कहो। ऐसा कहकर महादेव ने दोनों हाथों से

उठाकर उसके मूर्धा में चुम्बन किया और देवी को दिया। देवी ने प्रसन्न होकर उसको योग, ऐश्वर्य, ब्रह्म, विद्या तथा सदा कुमारत्व इत्यादि वरदान दिये। वह बालक हाथ जोड़कर गद्‌गद् वाणी से शंकर और भवानी की स्तुति करता हुआ बोला—हे देव देवेश! मुझ पर प्रसन्न होइये और आपकी अव्यभिचारिणी भक्ति बनी रहे तथा आपकी हमेशा निकटता बनी रहे।

इस प्रकार मुनि के कहने पर भगवान शिव उसे अभीप्सित वरदान देकर अन्तर्ध्यान हो गए।

द्वादशाक्षर मन्त्र की प्रशंसा

ऋषि बोले—हे सूतजी! किसका जप करने पर सब भय और पापों से मुक्त होकर परमगति को प्राप्त होता है, सो कहिए।

सूतजी बोले—बहुत पहले ब्रह्मा ने वशिष्ठ के लिए जो विषय कहा है वह सब लोगों के हित के लिए तुमको संक्षेप में कहूँगा। देव देव विष्णु भगवान ब्रह्मवादियों को मोक्ष देने वाले हैं। मन से, कर्म से, वाणी से, उन नारायण का जप, स्मरण और चिन्तन, सोता हुआ, चलता

हुआ, पलक खोलता हुआ, बन्द करता हुआ भी सदा करना चाहिए। नमो नारायण का सदा जप करने वाला, भोज्य, पेय, लेह्य आदि सभी पदार्थों को नमोनारायण से अभिमन्त्रित करके खाता है वह पुरुष परमगति को पाता है। अलक्ष्मी को मैंने दुस्सह की पत्नी बताया। लक्ष्मी देव देव भगवान जो हरि हैं उनकी पत्नी हैं। वह उनके भक्तों के घर में, क्षेत्र में सदा निवास करती हैं। सर्व शास्त्रों का अवलोकन करके तथा बार-बार मनन करके यही सबने निश्चय किया है कि सदा नारायण का जप करना चाहिये। 'नमोनारायणाय' सब सिद्धि प्रदान करने वाला है। इससे इस मन्त्र का जप करने वाला सबान्धव विष्णु लोक को प्राप्त करता है। अन्य भी विष्णु भगवान का जो मन्त्र, जिसे मैंने अभ्यास में लिया है वह द्वादशाक्षर मन्त्र है, उसका महात्म्य तुम्हें संक्षेप से कहता हूँ।

कोई ब्राह्मण तपस्या करके एक पुत्र को उत्पन्न कर उसके यथाविधि उपनयन आदि संस्कार कर पढ़ाने लगा। परन्तु न तो वह कुछ बोलता है और न ही उसकी जीभ हिलती है। इससे वह ब्राह्मण बड़ा दुखी हुआ वासुदेव ऐसा कहने पर वह 'ऐतरेव' ऐसा बोलता है। उसका पिता दूसरी स्त्री के साथ विवाह करके बहुत से पुत्रों को उत्पन्न करता हुआ वेदों को पढ़कर सब प्रकार सम्पन्न हुआ। इससे ऐतरेय की माता सब प्रकार से दुखी होकर

कहने लगी कि ये पुत्र वेद वेदान्त पारंगत ब्राह्मणों से पूज्यमान होकर अपनी माता को कैसे प्रसन्न कर रहे हैं। तू मन्द भागिनी का मेरा पुत्र कैसा भाग्यहीन है। मेरा इस समय मरना ही ठीक है, जीवन से कोई लाभ नहीं। माता से इस प्रकार कहा हुआ वह यज्ञ स्थान में पहुँचा। ऐतरेय के वहाँ आने पर ब्राह्मणों के मुख से मन्त्र ही नहीं निकलते थे। ब्राह्मण उसे देखकर बड़े मोहित हुए। ऐतरेय के द्वारा वासुदेव ऐसा कहने पर ब्राह्मणों के मुख से वाणी निकलने लगी। ब्राह्मण उसे प्रणाम करके पूजा करने लगे और धन आदि से उसका संस्कार करके यज्ञ को पूरा किया। उसने सभा में छः अंगों सहित वेदों को कहा। ब्राह्मण बड़े प्रसन्न हुए और उसकी स्तुति करने लगे। आकाश में स्थित सिद्ध लोग उसके ऊपर फूल बरसाने लगे।

इस प्रकार उस ऐतरेय बालक ने यज्ञ से लौटकर अपनी माता का पूजन किया और विष्णु लोक को प्राप्त किया। ऐसा ब्रह्मा ने वशिष्ठ को सुनाया था।

हे ब्राह्मणो! द्वादशाक्षर मन्त्र का वैभव मैंने भी तुमसे कहा। इस महापापों का नाश करने वाले मन्त्र का जप करने वाले या सुनने वाले तथा इस कथा को पढ़ने वाले मनुष्य परमपद को प्राप्त होते हैं। पापाचार से मुक्त भी पुरुष द्वादशाक्षर मन्त्र में तल्लीन होकर परमपद को पाता है, इसमें सन्देह नहीं है। फिर स्वधर्म में स्थित वासुदेव

परायण महात्मा विष्णुलोक को पावें, इसकी कहने की आवश्यकता ही क्या है।

अष्टाक्षर मन्त्र की प्रशंसा

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो! 'नमोनारायणाय' अष्टाक्षर मन्त्र और 'ॐ नमः वासुदेवाय' द्वादशाक्षर मन्त्र परमात्मा के सबसे श्रेष्ठ हैं। 'ॐ नमो शिवाय' षडाक्षर मन्त्र सर्वार्थ साधक तथा परमात्मा का विशेष प्रिय है। शिवतराय, मयस्कराय और 'नमस्ते शंकराय' ये मन्त्र ब्रह्मा, विष्णु इत्यादि देवताओं के प्रिय हैं ये सभी इन्हीं मन्त्रों से पूजा करते हैं। शिव, शंकर, रुद्र, उमापति को ही कहते हैं। इन मन्त्रों का जप करने पर मनुष्य ब्रह्म हत्या से भी छूट जाता है। पहले त्रेतायुग में मेघवाहन कल्प में एक 'धुन्धमूक' नाम का ब्राह्मण हुआ। वह उस कल्प में किसी मुनि के शाप से दुरात्मा उत्पन्न हो गया। धुन्धमूक ने कामासक्त चित्त से भार्या में गर्भ स्थापन किया। अमावस्या के दिन रुद्र देवता के मुहूर्त में उसकी विशल्या नाम की पत्नी से वह पुत्र उत्पन्न हुआ। रुद्र के समीप में जन्म लेने पर तथा शनि की दृष्टि होने पर माता

पिता को कष्ट कारक हुआ। मित्रावरुण आदि ऋषियों ने उसे दुष्पुत्र बतलाया। वशिष्ठ ऋषि ने बताया कि यह नीच होने पर वृहस्पति के प्रभाव से पापों से मुक्त हो जाएगा। पिता ने जाति कर्म संस्कार आदि करने के बाद उसे अध्यापन कराया।

उसका विवाह भी कर दिया। धुन्धमूक का वह पुत्र मदोन्मत्त होकर अन्य शूद्रा भार्या के साथ गमन करने लगा। उस शूद्रा के साथ मदिरा पान करके वह दुर्बुद्धि धर्म को भूल गया। किसी कारण से उस पापी ने उस शूद्रा को मार दिया। फिर उस शूद्रा के भाइयों ने धुन्धमूक को तथा उनकी पत्नी और पुत्रवधु को आकर मारा। राजा ने उसके साले आदि को नष्ट कर दिया। इस प्रकार दोनों ही कुल नष्ट हो गए।

तब धुन्धमूक का पुत्र घूमता हुआ एक मुनि के आश्रम में जा पहुँचा जो कि रुद्र के जप में परायण थे। उस मुनि से उसने पाशुपत व्रत प्राप्त किया और पंचाक्षर तथा षडाक्षर मन्त्रों को प्राप्त किया। फिर पाँच पाँच लाख दोनों का जप किया। बारह दिव्य महीनों तक विधिवत् व्रत करके वह काल गति को प्राप्त हुआ।

यमराज ने इसकी पूजा की। उसने अपने माता-पिता, पत्नी और साले आदि सभी का उद्धार किया। इस सभी के साथ विमानों में चढ़कर वह इन्द्रादि देवताओं

के द्वारा स्तुति किया गया रुद्र का प्रिय बना।

इससे अष्टाक्षर मन्त्र से और द्वादशाक्षर मन्त्र से करोड़ों गुना फल मिलता है इसमें विचार नहीं करना चाहिए। पूर्व में कही शक्ति बीजों से युक्त जो इनका जप करता है वह परम गति को प्राप्त होता है।

हे द्विजो! यह उत्तम कथा मैंने तुमसे कही जो इनको पढ़े या सुने अथवा सुनावेगा तथा उत्तम रुद्र मन्त्र का जाप करेगा, वह रुद्र लोक को प्राप्त करेगा।

अलक्ष्मी का वृत्तान्त

ऋषि बोले—हे सूतजी! देवों ने, ब्रह्मा ने और कृष्ण ने भी पूर्व में पाशुपत व्रत किया। पतित ब्राह्मण धुन्धमूक के पुत्र ने उससे परम गति प्राप्त की। सो हे सूतजी! वह पाशुपत व्रत कैसा है वह हम से कहिए। इसका हमें बड़ा कौतुहल है तथा शिवजी का नाम कैसे हुआ यह भी कहिए।

सूतजी बोले—हे द्विजो! पूर्व के शाप से विमुक्त ब्रह्मपुत्र ऊँट की देह को त्याग कर रुद्र के प्रसाद से यहाँ शिलादि मुनि के पास आया और नमस्कार करके महेश्वर

व्रत को पूछता भया और शिव के पशुपति होने का कारण पूछा। यही वृत्तान्त द्वैपायन व्यास से सुना। वही तुमसे कहता हूँ।

सनत्कुमार ने कहा—पशुपति नाम देव शंकर का कैसे है? पशु कौन है? कौन पाश है जिससे पशु बंधे हैं? और कैसे मुक्त हैं?

शैलादि बोले—हे सनत्कुमार! तुम रुद्र के भक्त हो सो तुम्हें यथार्थ रूप से कहता हूँ। ब्रह्मा से लेकर सम्पूर्ण जीव तृण तक पशु हैं क्योंकि वे संसार के वशीभूत हैं तथा उनका पति होने से रुद्र को पशुपति कहते हैं। आदि अन्त सहित भगवान विष्णु उन्हें माया के पाश से पशुवत् सबको बाँध लेता है। ज्ञान योग से सेवन किया हुआ वही सबका मोचक (छुड़ाने वाला) है। उनसे अलग अविद्यारूपी पाश से उन्हें कोई छुड़ा नहीं सकता।

परमात्मा शंकर के बिना उनकी कोई गति नहीं है। २४ तत्व ही माया के पाश हैं। जीवों के द्वारा उपासना किया हुआ शिव ही उन्हें छुड़ाता है और २६ तत्वों से ही वह जीवों को माया के पाश में बाँध देता है। वह पाश इस प्रकार है। १० इन्द्रियाँ तथा चार (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) अन्तःकरण, ५ भूत (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश) पंच तन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) इन २४ तत्वों के पाशों से प्रभु सबको बाँधे रखता है।

दृढ़ भक्ति योग से पशु (जीव) परमेश्वर की उपासना करे तो वह उन्हें शीघ्र ही उससे छुड़ा देता है। भजन को ही भक्ति कहते हैं। वह मन, वाणी, कार्य से तीन प्रकार का है। भक्ति पाप छेदन में बड़ी चतुर है। भगवान के रूप का चिन्तन करना मानस भजन है। जप वाचिक भजन या भक्ति है। प्राणायाम आदि को कायिक भजन कहते हैं।

धर्म अधर्म मय पाशों के जीव इसमें बँधे हुए हैं। उन्हें परमेश्वर ही छुड़ाने वाला है। पाँच क्लेशमय पाशों से शंकर भगवान अज्ञानी जीवों को बाँधे है। पाँच क्लेश, अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश नाम के हैं। इन सबके भी अनेकों भेद कहे हैं। परमात्मा शंकर की जो शरण में प्राप्त हुए हैं उनके लिए पाप पुण्य कर्मों का कोई सम्बन्ध नहीं है। भगवान परमेश्वर चेतनाचेत सबमें व्याप्त प्रपंच से अलग हैं। उनका वाचक प्रणव (ॐकार) है।

शिव रुद्र आदि शब्दों में भी प्रणव सबसे श्रेष्ठ है। प्रणव से जप करने पर सब सिद्धि स्वयं प्राप्त होती हैं। वह देह में स्थित शम्भु अति सूक्ष्म इन्द्रियों का नायक अति पवित्र अन्तःकरण में विराजमान रहता है। इसको देखो अन्यत्र वागजाल में क्यों भटकते हो। इसी प्रकार मुनियों के निमित्त शिवजी ने पाशुपत विधान का वर्णन

किया है।

उमापति की महिमा का वर्णन

सनत्कुमार बोले—हे नन्दीकेश्वर! उमापति भगवान की महिमा का वर्णन कीजिए।

शैलादि बोले—हे सनत्कुमार! संक्षेप में महेश्वर की महिमा का वर्णन मैं तुमसे करता हूँ। सो सुनो! महेश्वर को न तो प्रकृति का बन्धन है, न अहंकार का बन्धन है और न श्रोत्र, नेत्र, जिह्वा, वाणी, पाद आदि का ही बन्धन है। वह सबसे ही रहित और मुक्त है। भूत तन्मात्रा के बन्धन से रहित नित्य शुद्ध, बुद्ध तथा नित्य मुक्त है ऐसा मुनीश्वर कहते हैं। इस परमेश्वर की आज्ञा से ही प्रकृति बुद्धि को जनती है। बुद्धि अहंकार को जनती है। तन्मात्रा महाभूतों को जनती है। शिव की आज्ञा से पंचभूत ब्रह्मादिक से लेकर तृण पर्यन्त सभी जीवों को जनते हैं। इस परमेश्वर की महिमा का कोई विस्तार नहीं। संसार के सुख दुख इनकी आज्ञा से ही आया जाया करते हैं। अतः लोभ, मोह तथा सुख-दुःख परमेश्वर को नहीं व्यापता। इनकी महिमा का गुणगान वेद तथा शास्त्र

करते चले आए हैं। आप ही जल, थल, नभ को क्रिया रूप में परिणित करने वाले हैं। परमेश्वर ही प्रकृति के सृष्टा हैं। प्रकृति के जितने भी अवयव हैं परमेश्वर की शक्ति के अनुसार हैं।

शिव की आज्ञा से कान शब्दों को सुनते हैं। वाणी शब्दों को बोलती है। शरीर के सभी अवयव शिव की आज्ञा से आदान और व्यापार करते हैं। उनकी आज्ञा से वायु बहती है। अति अग्नि देवों के द्रव्य को भक्षण करता है तथा पितरों को तृप्त करता है। शिव की आज्ञा से चराचर सब प्राणी अपने-अपने कार्य में प्रवृत्त होते हैं। उनकी आज्ञा से पीड़ा तथा मरे हुए जीवों को नरक की यातना प्राप्त होती है। वही असुरों का और अधार्मिक पुरुषों का नाश करता है। उन्हीं की आज्ञा से वरुण जल से लोकों को प्रसन्न करता है तथा उन्हीं की आज्ञा से जल में सबको डुबो देता है। आदित्य, अश्वनी कुमार, वरुण आदि सब शिव की आज्ञा में ही रहते हैं। ग्रह, समुद्र, नक्षत्र, तारा, यज्ञ, वेद, ऋषियों के गण सब शिव के शासन में रहते हैं।

पित्रीश्वर, सात समुद्र, पर्वत, वन, सरोवर सब शिव की आज्ञा के पालक हैं। कल्प, काष्ठ, निमेष, मुहूर्त, दिन, रात, ऋतु, पक्ष, मास आदि सभी इन्हीं भगवान शिव की आज्ञा में ठहरे हुए हैं। चौदह लोकों में प्रजा

परमेश्वर की आज्ञा में ही स्थित है। पाताल आदि सभी भुवन और ब्रह्माण्ड सभी वस्तु उनकी कृपा से ठहरे हुए हैं। वर्तमान सब ब्रह्माण्ड, बीता हुआ ब्रह्माण्ड तथा आने वाले ब्रह्माण्ड अपने आवर्णों सहित सभी शिव की आज्ञा में रहते हैं। अतः उन परमेश्वर की महिमा अपार है।

शिव विभूति महिमा वर्णन

सनत्कुमार बोले—हे गणाधिपति! शिव और उमा की विभूतियों का वर्णन मुझसे कीजिए। क्योंकि तुम परस्पर सब जानने वाले हो।

नन्दिकेश्वर बोले—हे ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार! मैं तुमसे उमाशंकर की विभूति को कहता हूँ, सो सुनो। परमात्मा शिव को कहते हैं और पार्वती को शिवा कहते हैं। शिव को परमेश्वर कहते हैं और गौरी को माया कहते हैं। शंकर को पुरुष कहते हैं तथा गौरी को प्रकृति। अर्थ शम्भु हैं तो शिवा पार्वती वाणी हैं। शंकर दिन हैं तो शिवा निशा हैं। सप्ततन्तु महादेव हैं और दक्षिणा पार्वती हैं। आकाशरूपी शंकर है और पृथ्वी रुद्राणी है। समुद्र रुद्र हैं तो बेला (तट) उमा हैं। वृक्ष शूलपाणि हैं तो

लता पार्वती देवी हैं। ब्रह्मा हर हैं तो पार्वती ही सावित्री हैं। विष्णु महेश्वर हैं तो लक्ष्मी भवानी हैं। इन्द्र महादेव हैं तो शची शैल कुमारी हैं। अग्निरूप शिव हैं तो स्वाहा रूप पार्वती हैं। यम शिव हैं उनकी प्रिया गिरि पुत्री है। वरुण भगवान रुद्र हैं तो गौरी सर्वार्थ दायिनी है। वायु चन्द्रशेखर तो शिवा उनकी मनोरमा स्त्री है। चन्द्रशेखर यदि चन्द्रमा है तो रुद्राणी रोहिणी है। सूर्य यदि शिव है तो कान्ता उमा देवी है। षड़ानन शिव हैं तो देवसेना उनकी प्रिया शिवा हैं। यज्ञेश्वर देव दक्ष है तो उमा प्रसूती हैं। मनु यदि शम्भु हैं तो उमा शतरूपा हैं। भृगु महादेव हैं तो ख्याति पार्वती हैं। अर्थात सब पुरुष महेश्वर शंकर के रूप हैं और सब स्त्रियाँ उमा पार्वती का स्वरूप हैं। पुल्लिंग के वाचक जितने भी शब्द हैं वह शिव रूप हैं और स्त्रीलिंग से वाचक सभी शब्द उमा पार्वती के रूप हैं। सब उमा महेश्वर रूप जानना चाहिए।

पदार्थों की जो शक्ति है वह सब गौरी रूप हैं। आठ प्रकृति भगवती देवी की मूर्ति कही है। जैसे अग्नि से बहुत से स्फुल्लिंग (चिनगारी) उत्पन्न होते हैं। शरीर धारियों के सब शरीर के रूप हैं और सब शरीर शंकर के रूप हैं। सुनने योग्य सभी रूप उमा रूप हैं तो श्रोता रूप सभी शंकर हैं। सृष्टि करने योग्य सभी रूप उमा हैं तो सृष्टा शंकर का रूप हैं। दृश्य पदार्थ यदि पार्वती हैं

तो दृष्टा शंकर का रूप है। रस रूप उमा हैं तो रसयता देव शंकर हैं। गन्ध यदि उमा हैं सूँघने वाले महेश्वर हैं। बोध करने योग्य वस्तु उमा हैं तो बोथा शंकर हैं। पीठाकृति उमा हैं तो लिंग रूप शिव हैं। जो-जो पदार्थ लिंग है अंकित है वे सब शिव तथा जो-जो पदार्थ भगांकित हैं, वे उमा का रूप हैं। ज्ञेय उमा रूप हैं तो ज्ञाता शंकर हैं। क्षेत्र रूप को देवी धारण करती हैं तो क्षेत्रज भगवान शंकर हैं।

जो शिवलिंग को त्याग कर अन्य देवों को पूजता है वह राजा वेष सहित रौरव नर्क को प्राप्त होता है। जो राजा शिव का भक्त न होकर अन्य देवताओं में भक्ति करता है। वह ऐसे मानना चाहिए जैसे युवती स्त्री अपने पति को त्याग कर अन्य पुरुष का सेवन करती हो। राजा, ऋषि, मुनि सभी देव शिवजी की पूजा करते हैं। विष्णु ने भी सेना सहित रावण को मारने के लिए समुद्र के किनारे पर विधि पूर्वक शिवलिंग की स्थापना की थी। हजारों पाप करके तथा सैकड़ों ब्राह्मणों का वध करके भी जो भाव सहित शंकर का आश्रय लेता है वह सब पापों से मुक्त होता है। इसमें कोई संशय नहीं है। सब लोग लिंगमय हैं और सभी लिंग में प्रतिष्ठित हैं। इसलिए शाश्वत पद की इच्छा करने वाले को लिंग की पूजा करनी चाहिए।

शिव और पार्वती दोनों सर्व आकार रूप से स्थित है। अतः कल्याण की इच्छा करने वाले पुरुषों को सदा उमा शंकर की पूजा करनी चाहिए और नमस्कार करना चाहिए।

शिव के विश्वरूप का वर्णन

सनत्कुमार बोले—हे गणेश्वर! हे महामते! आपने शंकर भगवान को अष्ट मूर्तियों वाला बताया। अतः अब उसके विश्वरूप का वर्णन कीजिए।

नन्दिकेश्वर बोले—हे कमल से उत्पन्न होने वाले! ब्रह्माजी के पुत्र सनत्कुमार! मैं अब तुमसे उमापति महादेव के विश्वरूप का वर्णन करूँगा। सो आप सुनिये।

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, यजमान ये शिव की आठ मूर्ति कही हैं। अग्निहोत्र में अर्पण करने से तथा सूर्य रूपी आत्मा में अर्पण करने से सभी देवता तृप्त हो जाते हैं। ये दोनों (अग्नि और सूर्य) शिव की विभूति हैं। सूर्य की बारह कला हैं। मुनि लोग उसी का भजन करते हैं। आदित्य को अमृत नाम वाली कला जो भूत संजीवनी कही है उसका देवता पान करते

हैं। सूर्य रूपी शिव की दूसरी चन्द्र नाम वाली कला है वह औषधियों की वृद्धि के हिम (ओस) की वर्षा करती है। सूर्य की शुक्ल नाम वाली किरण लोक में धर्म का विस्तार करती है और धान्य के पकाने का काम करती है। दिवाकर रूपी शिव की, हरिकेश नाम की किरण नक्षत्रों का पोषण करती है। उनकी विश्वकर्मा नाम वाली किरण बुध ग्रह का पोषण करती है। सर्वेश्वर के सप्तसप्ती स्वरूप की किरण का नाम विश्वव्यच नाम की किरण शुक्र का पोषण करने वाली है। त्रिशूली की संयद्वसु नाम वाली किरण मंगल का पोषण करती है। अर्वावसु नाम की किरण वृहस्पति का पोषण करती है। शिव रूपी सूर्य की सुराट नाम की किरण शनिश्चर का पोषण करती है। सूर्यात्मक उमापति की सुष्मना नाम की किरण चन्द्रमा का पोषण करती है।

शम्भु का जो चन्द्रमा रूपी शरीर है वह अमृतमयी षोडश (सोलह) कलाओं से स्थित है। उसकी सब प्राणियों के शरीर में सोम नाम की मूर्ति उत्तम हे। जो देवताओं और पितृगणों को सुधा के द्वारा पोषण करती है। सोम नाम की वह मूर्ति भवानी का स्वरूप है। वह संसार में जल और औषधियों के पति भाव से स्थित है।

यजमान नाम वाली शिव की मूर्ति दिन-रात हव्य के द्वारा दोनों का तथा कव्यों के द्वारा पित्रीश्वरों का

पोषण करती है। यही यजमान नाम की मूर्ति वृद्धि के द्वारा जगत का पालन करती है। वही मूर्ति नदी, नाले तथा समुद्रों आदि में व्याप्त है। समस्त जीवों को जिवाने वाली, भूतों को पवित्र करने वाली, अम्बिका के प्राणों में स्थित जलमयी वह मूर्ति सर्वत्र स्थित है। ब्राह्मण में भीतर और बाहर स्थित पावक रूपी मूर्ति शिव की ही है जिससे विद्वानों ने ४९ भेद कहे हैं। प्राणियों के शरीर में स्थित जो शिव की मूर्ति है वह वायु रूप मूर्ति है वह वायु रूप मूर्ति है। जो प्राण अपान आदि अनेक प्रकार के भेद कहे हैं।

शम्भु की विश्वम्भरा नाम की मूर्ति चराचर सब भूतों को धारण करने वाली है। चराचर सब भूतों के शरीर पंचभूत जो भगवान के रूप हैं उन्हीं के द्वारा निर्मित है। पाँचों भूत, चन्द्रमा, सूर्य और आठवीं यजमान नाम वाली ये आठों मूर्ति शिव की हैं। चराचर सब शरीरों में आठों मूर्ति स्थित हैं। यज्ञ में दीक्षित ब्राह्मण को विद्वान आत्मा रूप से कहते हैं। कल्याण देने वाले शंकर भगवान की यह यजमान नाम वाली मूर्ति कल्याण चाहने वाले मनुष्यों को सदा वन्दनीय है। क्योंकि ये कल्याण की एकमात्र हेतु है।

शिव की अष्ट मूर्तियों की महिमा का वर्णन

सनत्कुमार बोले—हे नन्दी! आठ मूर्ति वाले महेश की महिमा को फिर और भी वर्णन कीजिए।

नन्दिकेश्वर बोले—जो जगत को व्याप्त करके स्थित हैं, ऐसी अष्ट मूर्ति शिव की महिमा को मैं तुम्हारे प्रति वर्णन करूँगा। चर और अचर भूतों को धारण करने वाला 'शर्वदेव' उसे कहा है। उस शर्व की पत्नी विकेशी कही है। उसका पुत्र अंगारक यानी मंगल है। वेद वादियों ने भव उसे कहा है। उसकी पत्नी को उमा कहते हैं तथा पुत्र शुक्र कहा है।

वन्हि स्वरूप भगवान शिव हैं उन्हें पाशुपति कहा गया है उनकी पत्नी को स्वाहा कहते हैं उनका पुत्र षडमुख नाम से कहा है, जो समस्त भुवनों में व्याप्त है। पवनात्मा भगवान को ईशान कहते हैं। ईशान की पत्नी को शिवा नाम वाली कहा है उनका पुत्र मनोजक (हनुमान) कहा है। आकाशत्मा जो शिव का रूप है उसे भीम कहा है। दशों दिशायें उनकी पति रूप देवियाँ हैं।

सूर्यात्मा भगवान देव उन ईश्वर के सर्ग (पुत्र) हैं और सूर्य स्वरूप को रुद्र कहा है। सुर्वचला उसकी देवी है तथा पुत्र शनिश्चर है। सोमात्मक रूप को महादेव नाम से कहा गया है उनकी पत्नी रोहिणी है और पुत्र को

बुध कहा है। यजमान स्वरूप है उसे विद्वानों ने 'उग्र' कहा है तथा कुछ दूसरे विद्वान उसी रूप को ईशान भी कहते हैं। उग्रदेव की पत्नी को दीक्षा कहते हैं उनका पुत्र 'सन्तान' नाम से कहा जाता है। देह धारियों के शरीरों में जो कठिनता या कठोरता है वह भगवान का पार्थिव (पृथ्वी सम्बन्धी) भाग जानना चाहिए।

तत्ववेत्ताओं ने सब देह धारियों के शरीर में पशुपति की मूर्ति जो वायु है वह शिव का रूप है। शरीर में जो शोभा स्थान है वह ईशान का रूप है। शरीर में नेत्र आदि का जो तेज है वह भीम की मूर्ति जाननी चाहिए। सर्वभूतों का जो चन्द्र रूप मन है वह रुद्र का स्वरूप जानना चाहिए। यजमान का जो स्वरूप है महादेव की मूर्ति जानना चाहिए।

चौदह योनियों में उत्पन्न प्राणियों को उग्र मूर्ति जानना चाहिए। ऋषि लोग अष्टमूर्ति मय शिव को कहते हैं। अन्य लोग सप्तमूर्ति मय कहकर उसकी आठवीं मूर्ति सब भूतों में व्यास आत्मा को बताते हैं। जिस पुरुष ने अष्टमूर्तियों की आराधना की हो। उसने सबका उपकार किया तथा अभय प्रदान किया। अष्टमूर्ति का आराधन और अर्चन सर्वोपकारमय और सर्व अनुग्रहमय है इसमें संशय नहीं है। अत: शिव की आराधना करने वाले पुरुष को सबके लिए अभय प्रदान करना चाहिए।

शंकर भगवान के त्रिगुण रूप का वर्णन

सनत्कुमार बोले—मैं शिव के महात्म्य को फिर सुनना चाहता हूँ आप सर्वज्ञ हैं, सो मुझे और भी शंकर का महात्म्य सुनाइये।

शैलादि बोले—हे ब्रह्मन! मुनीश्वरों ने शिव की महिमा बहुत प्रकार से कही है सो उसे सुनाता हूँ। सत् और असत् रूप से जो यह जगत स्थित है उसका पति शिव को ही कहते हैं। भूत भाव विकार से दूसरा रूप व्यक्त कहा है और उससे हीन अव्यक्त है। ये दोनों रूप शिव के ही हैं, शिव से अन्य के नहीं हैं। इन दोनों का पति होने से शिव को असत् और सत् रूप का स्वामी कहते हैं। क्षर और अक्षर महेश्वर को मुनि लोग व्यक्त और अव्यक्त कहते हैं। ये दोनों रूप शंकर के ही हैं। इन दोनों से परे विद्वानों ने शान्त स्वरूप महादेव को ही कहा है। कोई कोई आचार्य परम कारण शिव को समष्टि रूप वाला और अव्यक्त कहते हैं।

ये दोनों रूप भी शम्भु के ही हैं। उनसे अन्य कुछ नहीं है। इसलिए सबका कारण शिव ही है। लोकशास्त्र के जानने वाले समष्टि और व्यष्टि का कारण क्षेत्र और क्षेत्र स्वरूप से शिव को ही कहते हैं। ज्योति स्वरूप भगवान शंकर ही चौबीस तत्व रूप से क्षेत्र कहलाता है

और उसका भोक्ता पुरुष रूप से क्षेत्रज्ञ रूप वाला कहा जाता है। अतः शिव से अन्य कुछ नहीं ऐसा विद्वान लोग कहते हैं। कोई आचारी आदि अन्त से रहित प्रभु को भूत अन्तःकरण इन्द्रिय प्रधान विषयक रूप से वर्णन करते हैं और ऊपर से चैतन्य स्वरूप ब्रह्म कहते हैं।

विद्या और अविद्या दोनों ही शंकर के स्वरूप हैं। लोकों का पालन पोषण करने वाला महेश्वर कहलाता है। अखिल प्रपंच जात शिव अविद्या कहलाता है। आत्मरूप से सर्वत्र जो ज्ञान है। वही विकल्प रहित परम तत्व कहलाता है। व्यक्त और अव्यक्त रूप वह शिव ही है। सब लोकों का विधाता, पालन कर्ता वह व्यक्त कहलाता है तथा पैराप्रकृति को अव्यक्त कहते हैं। प्रकृति के गुणों को भोगने वाला तीसरा पुरुष कहा गया है। ये तीनों ही शंकर के रूप हैं। शंकर से भिन्न और कुछ भी नहीं है।

शिवतत्व महात्म्य वर्णन

सनत्कुमार बोले—हे महाबुद्धिमान! बहुत से मुनीश्वरों ने बहुत से शब्दों द्वारा जिसका वर्णन किया है

उस ईश्वर को तत्व रूप से मैं जानना चाहता हूँ।

शैलादि बोले—हे कुमार! जिसको बहुत मुनीश्वरों ने बहुत शब्दों द्वारा वर्णन किया है उस शिव को मैं तुमसे कह दूँगा। शास्त्र पारंगत कोई मुनीश्वर क्षेत्रज्ञ, प्रकृति व्यक्त, कालात्मा आदि रूप वाला कहता है। क्षेत्रज्ञ पुरुष को कहते हैं, प्रधान को प्रकृति कहते हैं। प्रकृति का सम्पूर्ण विकार जाल व्यक्त कहलाता है। प्रधान और व्यक्त का परिणाम काल है। ये चारों शिव के व्यक्त रूप हैं। कोई आचार्य हिरण्यगर्भ को पुरुष और व्यक्त रूपी शिव को प्रधान कहते हैं। हिरण्यगर्भ इस विश्व का कर्त्ता है और पुरुष भोक्ता है। विकार समुदाय व्यक्त नाम का प्रधान कारण है। इनके मत से भी चारों शिव रूप हैं और ये मुनीश्वर यही कहते हैं कि शिव से अन्यत्र कुछ है ही नहीं। कोई आचार्य शिव को पिण्ड जाति स्वरूप वाला कहते हैं। चराचरों के अखिल शरीर पिण्ड नाम वाले हैं। समस्त सामन्य जाति को कहते हैं।

कोई कोई महात्मा विराट और हिरण्यगर्भ नाम से शिव का रूप वर्णन करते हैं। हिरण्यगर्भ लोकों का हेतु है और विराट लोक स्वरूप है। कोई आचार्य लोग सूत्र और अव्याकृत रूप से उसका वर्णन करते हैं। अव्याकृत प्रधान को कहते हैं। डोरा में माला के मनिकाओं के समान लोक जिसमें ठहरे हुए हैं, वही सूत्र रूप अद्भुत

स्वरूप शिव हैं, ऐसा जानना चाहिए। कोई आचार्य ईश्वर को अन्तर्यामी कहते हैं। वही शम्भु स्वयं ज्योति स्वरूप है और स्वयं ही जानने योग्य (वेद्य) है। सम्पूर्ण प्राणियों का अन्तर्यामी शिव को कहा है इसमें उसे 'पर' भी कहते हैं। प्राज्ञ, तेजस, विश्व ये तीनों रूप शिव के हैं। सुषुप्ति, स्वप्न, जाग्रत ये तीनों अवस्था के साक्षी हैं। विराट हिरण्यगर्भ और अव्याकृत ये भी तुरीय अवस्था में स्थित शिव के ही स्वरूप हैं। जगत की स्थिति सृष्टि और संहार के हेतु विष्णु, ब्रह्मा और शंकर ये नाम शिव के ही हैं। देहधारी भक्ति पूर्वक उसकी आराधना करके उसको प्राप्त करते हैं।

कर्त्ता, क्रिया और कारण और कार्य इन चारों को विद्वान लोग शिव का ही रूप कहते हैं। प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय और प्रमिति ये चार रूप भी शिव के ही हैं इसमें संशय नहीं है। ईश्वर, अव्याकृत, प्राण, विराट, भूत और इन्द्रियात्मक रूप से सब शिव का ही विकार हैं। जिस प्रकार समुद्र की अनेक तरंगें होती हैं। ईश्वर को ही जगत का निमित्त कारण कहते हैं। अव्याकृत प्रधान का ही नाम है। ईश्वर जगत का निमित्त कारण है। प्रधान को अव्याकृत कहा है। हिरण्यगर्भ प्राण नाम वाला तथा विराट लोकात्मक रूप है। महाभूत, भूत तथा इन्द्रियाँ ये सब कार्य हैं। ये सब शिव का ही रूप हैं, ऐसा मुनि लोग

कहते हैं।

परमात्मा शिव से अन्य कुछ ही नहीं ऐसा मुनि श्रेष्ठ कवि लोग कहते हैं। पच्चीस तत्व भी शिव से ही उत्पन्न होते हैं जैसे सुमद्र से तरंगों का समूह, पच्चीस पदार्थों में शिव ही हैं जैसे कंकण, कुण्डल आदि में स्वर्ण है। उत्पन्न हुई सभी वस्तुयें शिव से भिन्न नहीं हैं जैसे घट आदि बर्तन मिट्टी से भिन्न नहीं है। माया, विद्या, क्रिया, शक्ति, ज्ञान, शक्ति शिव से भिन्न नहीं है जैसे सूर्य से किरण भिन्न नहीं है। सर्वात्मक सर्वाश्रम विधाताई सब भाव से शिव को ही तुम भजो यदि तुम कल्याण की इच्छा रखते हो तो। क्योंकि शिव से परम कुछ है ही नहीं।

शिव महात्म्य वर्णन

सनत्कुमार बोले—हे देव शैलदि! उत्तम शिव महात्म्य को आपके वाक्य रूपी अमृत से पान करते हुए तृप्ति नहीं होती। कृपावान प्रतापी भगवान रुद्र शरीरी कैसे हैं तथा सर्वात्मा शम्भु कैसे हैं और पाशुपत व्रत

कैसा है ? शंकर को देवताओं ने कैसा देखा एवं सुना है ?

शैलादि बोले—परम कारण रूप शिव अव्यक्त से स्थाणु रूप में उत्पन्न हुए। वह सम्पूर्ण कारणों से युक्त शिव ही विश्वात्मा है वह देवताओं में प्रथम उत्पन्न होने वाले ब्रह्माजी को देखने लगे। तब से देखे ब्रह्मा ने सकल जगत की रचना की। वर्णाश्रम की अव्यवस्था को उन्होंने स्थापित किया। यज्ञ के लिए सोम की रचना की। यह जगत सभी सोम का ही सवरूप है। चरु, अग्नि, यज्ञ, इन्द्र, नारायण, विष्णु आदि सब सोममय हैं। वे सब देवता रुद्राध्याय से रुद्र की स्तुति करते हैं। प्रसन्न मुख शम्भु देवताओं के मध्य में विराजमान हैं। उस समय महेश्वर ने सबका ज्ञान हरण कर लिया। इसलिए ये सभी शिव से पूछने लगे कि आप कौन हैं ?

तब शंकर जी बोले—मैं पुरातन पुरुष हूँ और भविष्य में भी मैं ही रहूँगा। मेरे से अन्य कुछ है ही नहीं। नित्य और अनित्य मैं ही हूँ। ब्रह्मा का भी पति मैं ही हूँ। दिशा और विदिशा मैं ही हूँ। प्रकृति और पुरुष मैं ही हूँ। जगति अनुष्टुप आदि छन्द मैं ही हूँ। सत्य मैं हूँ और शान्त स्वरूप हूँ। जन्मों पति वरुण मैं हूँ। तेज रूप मैं ही हूँ। ऋगवेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद मैं ही हूँ। इतिहास पुराण तथा कल्प मैं ही हूँ। अक्षर और क्षर, क्षान्ति और शान्ति

एवं क्षमा रूप मैं ही हूँ। सब वेदों में मैं ही छिपा हूँ। ज्योति स्वरूप मैं हूँ, अन्धकार रूप मैं हूँ। मैं ब्रह्मा हूँ, मैं विष्णु हूँ, मैं ही महेश्वर हूँ, मैं बुद्धि रूप हूँ, अहंकार रूप हूँ, तन्मात्रा रूप हूँ, इन्द्री रूप हूँ। सो हे देवताओ! जो सबको मेरा ही स्वरूप जानता है वही सर्वज्ञ है। मैं अपनी वाणी से सब ब्राह्मणों को, सत्य से सत्य को, आयु से आयु को, धर्म से धर्म को सर्व प्रकार तृप्त करता हूँ। ऐसा कहकर शंकर भगवान वहीं अन्तर्ध्यान हो गए। फिर वे देवता परमात्मा रुद्र को नहीं देख पाए और शिव का ध्यान करने लगे। नारायण सहित सभी इन्द्रादिक देवता और मुनि ऊर्ध्वबाहु करके रुद्र की स्तुति करने लगे।

शिव पूजा विधि वर्णन

शैलादि बोले—प्रसन्न मुख प्रभु वृषभध्वज को प्रणाम करके मुनि लोग और देवता प्रेम से रोमांचित हुए पूछने लगे।

देवता बोले—किस मार्ग से कहाँ और कैसे द्विजातियों को शंकर जी की पूजा करनी चाहिए? पूजा में किसका अधिकार है? ब्राह्मण का कैसे, वैश्य और

क्षत्रियों का कैसे ? स्त्रियों और शूद्रों का कैसे तथा कुण्ड गोलकों का कैसे शिव पूजन में अधिकार है ? सो हमको जगत के हित के लिए उसे कहिए ?

सूतजी कहने लगे—इस प्रकार वाणी को सुनकर गम्भीरता पूर्वक शंकर जी बोले—मंडल के अगारी उमा सहित देव देव अष्ट बाहु चतुर्मुख, बारह नेत्र वाले अर्धनारीश्वर, जटा-मुकुट धारण किए हुए, सम्पूर्ण भूषणों से युक्त, रक्त माला, चंदन से चर्चित रक्त वस्त्र धारण किए हुए सृष्टि स्थिति संहार करने वाले जिनका पूर्व मुख पीत तथा दक्षिण का मुख नीले पर्वत के समान अघोर है, जिसके कराल दाढ़, ज्वाला माला से युक्त, जटा और दाढ़ी मूँछों से सहित बड़ा विकट है। उत्तर का मुख विद्रूम की सी कान्ति वाला प्रसन्न मुख है। पश्चिम का मुख गो दूध के समान धवल, मुक्ताहारों से भूषित तथा तिलक से उज्जवल है। पाँचवाँ सद्योजात के समान दिव्य भास्कर के तेज वाला मुख है। सब मुखों से पूर्व सद्योजात का मुख दीखता है तथा अन्य मुख दीखते हैं। पूर्व मण्डल में विस्तारा नाम की, दक्षिण में उत्तरा नाम की, पश्चिम में बोध की नाम की, उत्तर में अध्यायनी नाम की सम्पूर्ण आभरणों से सम्पन्न शक्तियाँ हैं। दक्षिण भाग में ब्रह्मा को बायें भाग में विष्णुजनार्दन को, ऋग, यजु, साम, मार्ग से मूर्तित्रय शिव को मुनि लोग देख रहे हैं।

उनके स्वरूप में ही सोम, मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र, मन्द मन्द, गति, शनि उनके चारों तरफ में दीखते हैं। जगन्नाथ दीखते हैं। जगन्नाथ शिव सूर्य रूप में और साक्षात् उमा सोम रूप में शेष भूतों को, चराचर जगत को उमापति शिव के रूप में सभी देवता देखते हैं। उनको देखकर सभी देवता और मुनि हाथ जोड़कर उत्तम-उत्तम स्तोत्रों से उनकी स्तुति करने लगे।

ऋषि बोले—शिव रूप, रुद्र रूप, मीढुष्टङ्ग रूप आपको नमस्कार है। आप नवीन शक्ति से युक्त पद्म पर स्थित हो। आप भास्कर स्वरूप हो। आप आदित्ता भानु, रवि, दिवाकर रूप और उमा, प्रभा, प्रज्ञा, संध्या, सावित्री, विस्तारा, बोधिनी आदि रूप वाली हो आपको हम प्रणाम करते हैं। सोमादि देवों की मन्त्रों द्वारा पूजा करके रवि मण्डल में स्थित शंकर भगवान की ही हम स्तुति करते हैं। सिन्दूर के से वर्ण वाले मण्डल स्वरूप, स्वर्ण और हीरा के आभूषण वाले ब्रह्म इन्द्र नारायण के भी कारण आपको नमस्कार है। आपका रथ सात घोड़ों वाला, अनूरू सारथी वाला है। गण आपके सात प्रकार के हैं। ऋतु के अनुसार बालखिल्य आपकी स्तुति करते हैं। तिल आदि से विविध प्रकार से अग्नि में हवन करके हृदय कमल में स्थित बिम्ब रूप शिव का ही स्मरण करते हैं। पद्म के समान अमल लोचन वाले तथा रक्त

वर्ण वाले आपके बिम्ब का हम स्मरण करते हैं। आपका दिव्य मुख जिसमें भयंकर दाढ़ें हैं, विद्युत के समान जिसका प्रकाश है, दैत्यों को भय प्रदान करने वाला है और जो हृदय से राक्षस गणों को घुड़क रहा है। उसका हम स्मरण करते हैं।

श्वेत, चन्द्रमा, मंगल, अग्नि के से वर्ण वाला, बुध चाँदी के रंग वाला, बृहस्पति कंचन के से वर्ण वाला, शुक्र रूप जो सफेद है तथा काले रंग वाले शनि तथा भास्कर से आदि लेकर सभी शिव के ही स्वरूप हैं। पुष्प गन्ध से युक्त कुन्द इन्दु के समान स्वच्छ जल से ताम्र पात्र के द्वारा जा आपको अर्घ दे उस पर हे भगवन्! आप प्रसन्न होइए। ईश्वर स्वरूप, कमर्दी स्वरूप, विष्णु स्वरूप, ब्रह्म स्वरूप तथा सूर्य मूर्ति रूप शिव के लिए नमस्कार है।

सूतजी कहते हैं—इस प्रकार सूर्य मण्डल में स्थित सायं, प्रातः, मध्याह्न में शिव की पूजा करके इस स्तोत्र का पाठ करता है। वह शिव के साथ सायुज्य को प्राप्त होता है। इसमें कोई सन्देह की बात नहीं है।

शिव पूजन के उपायों का वर्णन

सूतजी बोले—मंडल में स्थित भगवान रुद्र विशेष करके ब्राह्मण क्षत्री के द्वारा ही पूजनीय हैं, वैश्य और शूद्र के लिए नहीं। स्त्री का भी उनके रूप में पूजन में अधिकार नहीं है। स्त्री और शूद्रों को ब्राह्मण के द्वारा शिव की पूजा कराने पर फल की प्राप्ति होती है। इस प्रकार ब्राह्मण आदि को सदा शिव की पूजा करनी चाहिए।

इस प्रकार देवताओं को बताकर भगवान वहीं अन्तर्ध्यान हो गए तब वे देवता और मुनीश्वर शंकर को प्रणाम करके रुद्र का ध्यान करते हुए अपने स्थान को चले गए। इसलिए भास्कर जो शिव का ही रूप है उसकी सदा पूजा करनी चाहिए। कर्म, वाणी और मन से सदा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्राप्ति के लिए सदा शिव की आराधना करनी चाहिए।

ऋषि बोले—हे महाभाग सूतजी! हमने भास्कर रूप का वर्णन सुना। अब वन्हि रूप शिव का वर्णन कीजिए। छः अंगों सहित वेदों तथा सांख्य योग से निकालकर, दुष्कर तप करके, गूढ़ ज्ञान वर्णाश्रम धर्मों के अनुसार धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के लिए शिव ने जो मार्ग कहा है जो सौ करोड़ परिणाम वाला है उसकी सुनने की हमारी

इच्छा है। उसमें स्नान योग जो कहे हैं, सो हमें कहिए।

सूतजी बोले—पूर्व में सनत्कुमार ने जो नन्दीश्वर से पूछा है और नन्दीश्वर ने जो बताया है उसे हे मुनीश्वरो! तुम सुनिए। शिव ने संक्षेप में जो वेदोक्त शास्त्र कहा है वह स्तुति निन्दा से रहित और झट ही विश्वास दिलाने वाला है। वह गुरु की कृपा से प्राप्त होता है तथा बिना ही प्रयत्न के मुक्ति को देने वाला है।

सनत्कुमार ने पूछा—हे नन्दीश्वर! धर्म, अर्थ, काम, मुक्ति की प्राप्ति के लिए शम्भु की पूजा का वर्णन कीजिए।

शैलादि बोले—पूर्व में गुरु, शास्त्राज्ञा प्राप्त करके पूजा करनी चाहिए। 'गुरु' ऐसी संज्ञा शिवाचार्य की है। स्वयं आचरण करता है तथा जो दूसरों को भी आचरण में स्थापित करता है और शास्त्र के अर्थों को विचार कर इकट्ठा करता है वह आचार्य कहलाता है। इसलिए वेद के तत्व के अर्थ को जानने वाले भस्म धारण करने वाले गुरु की खोज सबसे पहले करनी चाहिए। जो सबकी रक्षा करने वाला, श्रुति स्मृति के बताये मार्ग पर चलने वाला, सबको आनन्द देने वाला, विद्या के द्वारा अभयदान करने वाला, लोभ और चपलता से रहित आचार का पालन करने वाला, हर समय धीर रहने वाला, गुरु को देखकर शिव गत भाव से पूजा करनी चाहिए।

शरीर से, श्रद्धा से, धन से, शिष्य को उस गुरु की तब तक आराधना करनी चाहिए, जब तक वह प्रसन्न न हों। उस महाभाग गुरु के प्रसन्न होने पर झट ही पाश का क्षय हो जाएगा। गुरु मान्य है, गुरु पूज्य है, गुरु ही सदाशिव है। तीन वर्ष तक गुरु शिष्यों की परीक्षा करें। प्राण, द्रव्य आदि तथा आदेशों के द्वारा जांच किए हुए शिष्य जो विषाद को नहीं प्राप्त होते वे ही धर्म परायण हैं। ऐसे शिष्य सर्व द्वन्द्वों को सहन करने वाले, गुरु सेवा में परायण, श्रुति स्मृति के मार्ग पर चलने वाले, परोपकार तत्पर, प्रिय बोलने वाले, शौचाचार से पवित्र, नम्र, मृदु स्वभाव वाले, दम्भ और ईर्ष्या से रहित, शिव भक्ति परायण ही श्रेष्ठ कहे हैं। शुद्ध, विनयी, मिथ्या और कटु न बोलने वाला, गुरु की आज्ञा का पालन करने वाला शिष्य ही अनुग्रह के योग्य है।

गुरु भी शास्त्रज्ञ, बुद्धिमान, तपस्वी, जन वत्सल, लोकाचार रत, तत्वेत्ता तथा मोक्ष दाता हो। सर्व लक्षण सम्पन्न, सर्व शास्त्र विशारद, सर्वोदय विधानज्ञ भी यदि तत्ववेत्ता नहीं है तो ऐसा गुरु निष्फल है। परम तत्व का जिसको बोध नहीं, आत्मा का विषय जिसे निश्चय नहीं तथा आत्मा पर अनुग्रह नहीं ऐसा दूसरों का क्या अनुग्रह करेगा। तत्वहीन को बोध कहाँ और आत्म परिग्रह कहाँ ? आत्म परिग्रह से रहित सभी को पशु कहा है। इसलिए

जो तत्ववित् मुक्त पुरुष हैं तथा वे ही दूसरों को मुक्त करा सकते हैं। जिसने तत्व को जान लिया है वही आनन्द का दर्शक है। तत्व ज्ञान से रहित तो नाम मात्र का गुरु है। शिला जैसे दूसरी शिला को नहीं तार सकती, वैसे ही नाम मात्र के गुरु से मुक्ति भी नाम मात्र की ही है। योगियों के दर्शन से, स्पर्शन से, भाषण से, पाश को क्षय करने वाली प्रज्ञा उदय होती है अथवा योगी स्वयं योग मार्ग से शिव के देह में प्रवेश करके योग के द्वारा सब तत्वों का बोध करा देता है।

धार्मिक और वेद पारंगत शिष्य की परीक्षा करके सब दोषों से रहित, ब्राह्मण, क्षत्री या वैश्य में से कोई भी हो। ज्ञान के द्वारा ज्ञेय वस्तु को प्रकाशित करता है जैसे दीपक से दीपक। जिसकी आज्ञा मात्र से और सामर्थ्य से सब भेद दूर हो जाता है उसी गुरु की कृपा से सिद्धि और मुक्ति प्राप्त होती है।

पृथ्वी आदि भूत, शब्द, स्पर्श, आदि, मात्रा, ज्ञान इन्द्रियाँ, कर्म इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहंकार, अव्यक्त इन सबसे परे सर्व तत्वों का बोधक ईशत्व कहा है। आयोगी पुरुष शिवात्मक तत्व सिद्धि को नहीं जानता।

दीक्षा की विधि का वर्णन

सूतजी बोले—रंग, रस, गन्ध आदि से भूमि को शुद्ध करके तथा चाँदनी आदि से अलंकृत करके उसे ईश्वर के आवाहन योग्य बनावे। एक हाथ के प्रमाण से वेदी बनाये। उसके मध्य में पंच रत्नों से युक्त कमल को लिखे। चूर्ण से आठ दल का सफेद या रक्त वृत्त शोभामय बनावे। परम कारण शिव का कर्णिका में आवाहन करे। वैभव के अनुसार विस्तार से पूजा करे। कर्णिका के दलों में सिद्धियाँ कही हैं। वामा, जेष्ठा, रौद्री, काली, विकर्णी, बल विकर्णी, बल प्रमथनी, सर्वभूत दमनी, मनोन्मनी, महामाया, वामदेव के साथ इन सब सिद्धियों का विन्यास करना चाहिये।

प्रणवाख्य शिव स्वरूप का पूर्व पत्र में विन्यास करे। दक्षिण पत्र में अघोट का करे जो नील पर्वत के समान कान्तिवान है। उत्तर पत्र में वामदेव को विन्यास करे जो जवा के फूल के सदृश है। गौ के दूध के समान सफेद सद्योजात भगवान का तथा शुद्ध स्फटिक मणि के समान वाले आभा वाले प्रभु का 'हृदयाय नमः' मन्त्र से आग्नेय में, शिखायै नमः मन्त्र से नैऋतु में, कवचाय अंजनामाय मन्त्र से वायव्य में, अस्त्रायफट मन्त्र से अग्नि की शिखा के सदृश सब दिशाओं में न्यास करे।

सदाशिव महादेव, रुद्र, विष्णु, ब्रह्मा का सृष्टि के अनुसार न्यास करना चाहिए। फिर शान्त स्वरूप शिव का ध्यान करे। जो भगवान विद्या स्वरूप है, विद्या को धारण करने वाले हैं, अग्नि के समान तेज वाले हैं, तारकासुर का नाश करने वाले हैं, जो ईशान देव हैं, जो महेश्वर हैं, सद्यमूर्ति हैं, स्थूल सूक्ष्म सबके कारण हैं, पंच मुख वाले, दस भुजा वाले, ३८ कलाओं से युक्त ॐकार का स्वरूप, आ ई उ ए के द्वारा अम्बिका के स्वरूप से जो स्थित हैं, छोटे से छोटे तथा महत से महत हैं। सहस्त्र सिर वाले, सहस्त्र चरण वाले, सहस्त्र हाथ वाले, चन्द्ररेखा को धारण किये हुए, करोड़ों विद्युत के समान प्रकाश वाले, श्याम रक्त स्वरूप, तीन शक्तियों और तीन-तीन तत्वों से युक्त महादेव का स्मरण करे।

विधि पूर्वक चरु बनाकर शिव को निवेदन करे। आधा शिव को अर्पण करे तथा आधे से हवन करे। जल के द्वारा आचमन करके पवित्र होवे। पंचगव्य का प्राशन करे। 'वामदेव' मन्त्र को बोलकर भस्म लगावे। रुद्र देवता गायत्री का कानों में जप करे। सूत्र सहित दो वस्त्रों से युक्त होकर पंच कलश पंच ब्राह्मणों के द्वारा स्थापन कराकर चरु से हवन करे। मण्डल के दक्षिण में भक्त शिष्य को बैठाये जो दर्भ के आसन पर बैठ शिव भक्ति में परायण हो। अघोर मन्त्र से घृत के द्वारा १०८

बार आहुति प्रदान करे इस प्रकार उपवास किये हुए भक्त शिष्य को वस्त्र और पगड़ी आदि धारण कराकर नेत्रों को बाँधकर प्रवेश करावे। तीन परिक्रमा करे। रुद्राध्याय या प्रणव से परिक्रमा करनी चाहिए। शिव ध्यान में परायण होकर देव देव के ऊपर पुष्प चढ़ावे। जिस मन्त्र के कहने पर शिव पर पुष्प गिरे वह मन्त्र उसे सिद्धि हो जाता है। शिव के जल से स्पर्श करके अघोर मन्त्र से भस्म लगावे। शिष्य की मूर्धा पर गन्ध का लेप न करे। प्रवेश करने के लिए पश्चिम का द्वार सर्व प्रकार श्रेष्ठ है और क्षत्रियों के लिए तो विशेष श्रेष्ठ है। प्रवेश कराने पर शिष्य के नेत्रों का आवरण खोलकर मण्डल का दर्शन करावे। तब उसे कुशा के आसन पर बैठाकर तत्व शुद्धि करे।

इसके बाद दक्षिण मूर्ति शिव की प्रतिष्ठा करके 'अंग' मन्त्र से हवन करे। शान्त्यातीत भगवान ईशान का १०८ बार मन्त्र से हवन करना चाहिए। हवन के बाद में सोने, चाँदी या ताँबे के पात्रों में तीर्थ जल भर करके रुद्र का धार्मिक रीति से संहिता मन्त्र से या रुद्राध्याय से शिष्य का अभिषेक करे। वह शिष्य भी शिव के आगे अथवा गुरु के आगे या अग्नि के आगे दीक्षा को प्राप्त हुआ निम्न प्रकार प्रतिज्ञा करे कि—

प्राणों का परित्याग श्रेष्ठ है परन्तु शिव का पूजन

किए बिना भोजन नहीं करूँगा इस प्रकार दीक्षा करनी चाहिए। यथायोग्य तीनों समय अथवा एक समय भगवान परमेश्वर शिव की पूजा नित्य करनी चाहिए। अग्नि होत्र करना, वेद पढ़ना, बहुत सी दक्षिणा वाला यज्ञ करना आदि कार्य शिवलिंग की अर्चना की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं हो सकते। अतः लिंगार्चन अवश्य करना चाहिए। जो सदा दान करते हैं, यथा वायु भक्षण करके रह जाते हैं उनको इतना फल एक बार भी शिव पूजा करने पर मिल जाता है। एक काल या दो काल अथवा एक काल भी जो रुद्र की पूजा करते हैं वे भी रुद्र के स्वरूप हैं इसमें कोई संशय नहीं। अरुद्र रूप से रुद्र का स्पर्शन करे तथा अरुद्र रूप से रुद्र का पूजन कीर्तन आदि भी न करके, क्योंकि अरुद्र रूप से रुद्र को प्राप्त भी नहीं कर सकता है। इस प्रकार अधिकारी के लिए दीक्षा विधि मैंने तुम्हें संक्षेप से कही, जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को देने वाली है।

शिव पूजा का विधान

शैलादि बोले—शिव पूजा के विधान को मैं तुम्हें संक्षेप से कहूँगा। यह शिव शास्त्रोक्त मार्ग से शिवजी ने

स्वयं पूर्व में कहा है।

चन्दन से चर्चित दोनों हाथों को अन्जली बाँधकर करन्यास करे इसको शिवहस्ता कहते हैं। ऐसे हाथों से शिव की पूजा करनी चाहिए। तत्वगत आत्मा की व्यवस्था करके पूर्व की तरह आत्मा की शुद्धि करनी चाहिए। पृथ्वी, जल, आग, वायु, आकाश आदि पाँचों तत्वों की शुद्धि करे। षट सहित सद्य और तृतीय मन्त्र से फट् तक धारा की शुद्धि, षट सहित सद्य और तृतीय मन्त्र से फट् तक जल की शुद्धि, वाहि के तृतीय मन्त्र से फट् तक अग्नि की शुद्धि, वायवी चौथे मन्त्र से षष्ट सहित फट् तक वायु की शुद्धि और षष्ट सहित तृतीय से आकाश की शुद्धि करनी चाहिए। इस प्रकार उक्त संहार करके अमृत धारा का सुष्मना में ध्यान करे। शान्तातीत आदि की निवृत्ति तक आर्तनाद बिन्दु अकार, उकार मकार वाले (ॐ वाले) सदा शिव को ब्रह्मन्यास करके पाँचों मुखों के पन्द्रह नेत्रों वाले प्रभु का ध्यान करे तथा मूल मन्त्र से पाद से लेकर केश पर्यन्त महामुद्राओं को बाँध कर 'मैं शिव हूँ' ऐसा ध्यान करके शक्तियों का स्मरण करके आसन की कल्पना करके, अन्तःकरण में सर्वोदय चार सहित नाभी रूपी वह्नि कुण्ड में पूर्ववत् सदा शिव का ध्यान करे, बिन्दु से अमृत धारा गिरती है इसका ध्यान करके, ललाट में दीपशिखाकार शिव का

ध्यान करके आत्म शुद्धि इस प्रकार से करे और प्राण अपान का संयम कर सुष्मना के द्वारा वायु का संयम करे और षष्ट मन्त्र से ताल मुद्रा करके, दिगबन्धन करके स्थान शुद्धि प्रणव से तीन तत्वों का विन्यास करके उसके ऊपर बिन्दु का ध्यान करके जल से पूर्ण करके संहिता से अभिमन्त्रित करे। द्वितीय मन्त्र से अमृती करके, तीसरे से विशुद्ध करके, चौथे से अवगुण्ठन करके, पंचम से अवलोकन करके, षष्ठ से रक्षा करके, कुश पुण्ज से, अर्घ जल से सर्व द्रवों का तथा आत्मा का शोधन करे तथा रुद्र गायत्री से शेष सबका प्रोक्षण करे। पंचामृत और पंच गव्य आदि को ब्रह्मांगों से और मूल मत्र से अभिमन्त्रित करे। ऐसे द्रव्य शुद्धि करके, मौन होकर पुष्पांजलि दे। प्रणावादि नमो पर्यन्त मन्त्रों का जप करके पुष्प छोड़े।

पाशुपात मन्त्र से, पाशुपतास्त्र से शिवलिंग की मूर्धा पर पुष्प वर्षा करे। ॐ नमः शिवाय मूल मन्त्र से भगवान की पूजा करे। पुनः पुष्पांजलि देकर दीप, धूप आदि से पूजा करे। शिवजी की मूर्धा पर पुष्प चढ़ावें। शून्य मस्तक न छोड़े। क्योंकि कहा है कि जिस राजा के राज में शून्य मस्तक शिवलिंग रहता है उसके राज में दुर्भिक्ष अकाल अलक्ष्मी, महा रोग वाहन क्षय होता है। इसलिये राजा को धर्म, अर्थ, काम और मुक्ति की सिद्धि के लिए शून्य

लिंग मस्तक न रहने दे।

शिवलिंग को स्नान कराकर वस्त्र से पौंछे। गन्ध, पुष्प, दीप, धूप, नैवेद्य, अलंकार आदि शिव को मूल मन्त्र से अर्पण करे। आरती करे, दीपदान दे और धेनु मुद्रा का प्रदर्शन करे। मूल मन्त्र से नमस्कार करे। मूल मन्त्र का यथायोग्य जप करे। दशाँश हवन इत्यादि करे। ब्रह्मांग जप समर्पण, आत्म निवेदन, स्तुति नमस्कार आदि करे। गुरु की पूजा आदि अन्त में विनायक का पूजन भी करे।

इस प्रकार जो ब्राह्मण सर्व कामनाओं के लिए लिंग में अथवा स्थण्डल में शिव की पूजा करता है वह एक माह में या एक वर्ष में करने पर ही शिव सायुज्य को प्राप्त कर लेता है। लिंगार्चक पुरुष छः मास में ही शिव सायुज्य पाता है। सात परिक्रमा करके दण्डवत प्रणाम करना चाहिए। प्रदक्षिणा करने पर पग पग पर सैंकड़ों अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। इसलिए सर्व कार्य सिद्धि के लिए शिव की पूजा करनी चाहिए। भोग की इच्छा वाला भोगों को प्राप्त करता है, राजा राज्य को प्राप्त करता है। पुत्रार्थी पुत्र पाता है। रोगी रोग से मुक्त होता है। जो-जो पुरुष जो-जो कामना करता है वह सभी को प्राप्त करता है।

तत्व शुद्धि वर्णन

शैलादि बोले—स्नान याग आदि करके सूर्य की पूजा के लिए भस्म स्नान, शिव स्नान करके शिव की अर्चना करनी चाहिए। षष्ट मन्त्र से भक्ति द्वारा मिट्टी को ग्रहण करे और भूमि में रखे। द्वितीय मन्त्र से जल से उसे छिड़के और तृतीय मन्त्र से उसका शोधन करे। चौथे मन्त्र से उसका विभाग करे। षष्ट मन्त्र से शेष मृत्तिका को हाथ में लेकर उसके तीन विभाग करके शरीर पर लेपन करे और फिर स्नान करे। भानु (सूर्य) का अभिषेक करे। सींग से, पत्ताओं के पुट से, पलाश के पत्र से सूर्य को स्नान के लिए जल छोड़े। वाष्कल आदि सूर्य मन्त्र जो वेदों के सार भूत हैं इन्हें मैं तुमसे कहता हूँ। ''ॐ भूः ॐ भुँव ॐ स्वः ॐ मह ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतं ॐ ब्रह्म'' यह नवाक्षर मन्त्र वाष्कल मन्त्र कहलाता है। जो नाश को नहीं प्राप्त हो और सत्य हो उसे अक्षर कहते हैं। ॐकार से लेकर नमः पर्यन्त सत्य अक्षर कहा गया है इसको सूर्य का मूल मन्त्र कहते हैं। ॐ भूर्भुव स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॐ नमः सूर्याय खरखोल्काय नमः।' यह सूर्य का मूल मन्त्र है। इससे या नवाक्षर मन्त्र से प्रकाशित सूर्य की पूजा करनी चाहिए। अंग मन्त्रों को मैं

यथा क्रम से कहता हूँ—ॐ भू ब्रह्म हृदयाय, ॐ भुवः विष्णु सिर से, ॐ स्व रुद्र शिखायै, ॐ भूर्भुवस्व ज्वाला मालिनी शिखाय, ॐ मह महेश्वराय कवचाय, ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्य, ॐ तपः तापकाय अस्त्राय फट्॥

ये सूर्य के विविध प्रकार के मन्त्र कहे हैं। इन मन्त्रों के द्वारा सींग आदि के पात्रों से अपनी आत्मा का अभिसेचन करे। ताम्र पात्र में स्थित जल से विप्र क्षत्री अथवा वैश्य रक्त वस्त्र धारण किये हुए विधि पूर्वक आचमन करे। 'सूर्यश्चमेति' मन्त्र से दिन में तथा 'अग्निश्चमेति' से रात में तथा 'आपःपुनन्तु' मन्त्र से मध्याह्न में आचमन करे। नवाक्षर या मूल मन्त्र से अंगन्यास और करन्यास करे।

इन मन्त्रों के द्वारा ''मैं सूर्य स्वरूप हूँ'' ऐसा विचार करके वामहस्त पर रखे हुए गन्ध युक्त जल से कुशा पुञ्ज से 'आयोहिष्टादि' मन्त्रों द्वारा शरीर पर छींटा लगावे। शेष जल को नाहीं नासा पुट से सूँघ कर शरीर में शिव की भावना करे। सब देवों का ऋषियों का विप्रों का भूतों का विधिवत् तर्पण करे। सायंकाल, मध्याह्न काल, प्रातःकाल तीनों समय लाल चन्दन मिले जल से सूर्य को अर्घ प्रदान करे। सुगन्धी युक्त एक प्रस्थ जल ताम्र पात्र में भरकर रक्त चन्दन तथा तिलों से युक्त कुशा और अक्षत, दूर्वा, अपामार्ग, पंचगव्य अथवा गौ घृत से

युक्त उस पात्र को सिर पर रखकर जानुओं से भूमि को स्पर्श करके शिव को प्रणाम करके अर्घ प्रदान करे।

हजारों अश्वमेध से जो फल प्राप्त होता है वह फल सूर्य को अर्घ देने से प्राप्त होता है। भक्ति से सूर्य को अर्घ देकर पुनः त्र्यम्बक भगवान का पूजन करे। भास्कर का पूजन करके आग्नेय स्नान करे। फिर योगी पद्मासन लगाकर प्राणायाम करे। लाल पुष्प तथा कमल पुष्पों को लेकर दक्षिण भाग में स्थित करे। सर्व कार्यों में सर्व सिद्धि करने के लिए ताम्र पात्र श्रेष्ठ कहे हैं पुनः पूजा की सब सामग्री को जल से प्रक्षालन करे। सर्व देवों के द्वारा नमस्कार करने योग्य आदित्य का जप करे। मन्त्र बोलकर सूर्य को नमस्कार करे।

दीप्ता, सूक्ष्मा, जया, भद्रा, विभूति, विमला,अघोरा, विकृता आठ शक्तियाँ सूर्य भगवान के सामने हाथ जोड़ कर खड़ी रहती है। इनके मध्य में सर्वतोमुखी वरदान देने वाली देवी की स्थापना है। वाष्कल मन्त्र से इनका आवाहन और पूजा करे। पद्मनाभ की भास्कर की मुद्रा बनावे। मूल मन्त्र से पाद्य आचमन आदि करावे। रक्त पुष्प, रक्त चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य आदि तथा ताम्बूल वाष्कल मन्त्र के ही द्वारा अर्पण करे। दीपक भी इस मन्त्र से प्रदान करे। कमल की कर्णिका में अष्ट मूर्ति का विन्यास करके ध्यान करे।

बिजली की सी चमक वाली शान्त स्वरूप, अस्त्र धारिणी, सब आभरणों से युक्त, रक्त चन्दन, माला व वस्त्र धारण किये हुए, सिन्दूर के समान अरुण वर्ण वाली ऐसी अष्ट मूर्ति भास्कर रूप महेश्वर का ध्यान करे। उसी मण्डल में सोम, मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु का भी ध्यान करे। सभी दो भुजा तथा दो नेत्र वाले हैं परन्तु राहु का तो ऊर्ध्व शरीर ही है।

इनको इनके नाम से प्रणव आदि में लेकर नमः बाद में लगाकर पूजना चाहिए। जैसे ॐ सोमायनमः इस प्रकार करने से सर्व सिद्धि, धर्म, अर्थ की प्राप्ति होती है। सब देवता, ऋषिगण, पन्नग और अप्सरायें, यातुधान, सप्त अश्व जो छन्दमय हैं, बालखिल्य ऋषियों का गण आदि सबका पृथक-पृथक अर्घ पाद्य आचमन से पूजन करे। पूजन के बाद हजार आधा हजार या १०८ बार वाष्कल मन्त्र का जप करना चाहिए। जप के दशांश पश्चिम दिशा में परिमाण के अनुसार कुण्ड बनाकर हवन करना चाहिए। प्रभावती शक्ति का गन्ध, पुष्प आदि से वाष्कल मन्त्र से पूजन करे। पश्चात् मूल मन्त्र से पूर्णाहुति करे। भास्कर रूप देव देव शंकर का अंगों सहित पूजन करके अर्घ और प्रदक्षिणा करनी चाहिए। इस प्रकार मैंने संक्षेप से सूर्य भगवान का पूजन कहा।

जो पुरुष इस प्रकार देव देव जगद्गुरु भास्कर का

एक बार भी पूजन करेगा वह परम गति को प्राप्त होवेगा। वह पुरुष सर्व ऐश्वर्य युक्त, पुत्र पौत्रादि भाई बन्धुओं से सम्पन्न विपुल भोगों को भोगकर, धन, धान्य युक्त, यान वाहन से सम्पन्न विविध प्रकार के भूषणों से युक्त: काल गति को प्राप्त होकर सूर्य के साथ अक्षय काल तक आनन्द को प्राप्त होता है। फिर यहाँ आकर राजा होता है अथवा वेद वेदाँग सम्पन्न ब्राह्मण होता है। फिर पूर्व की वासना के योग से वह सूर्य भगवान की आराधना करके सूर्य की सायुज्यता को प्राप्त होता है।

शिवार्चन विधि का वर्णन

शैलादि बोले—अब मैं शिवार्चन की उत्तम विधि को कहूँगा। तीनों काल शिवार्चन और यथाशक्ति अग्निहोत्र करना चाहिए। तत्व विशुद्धि पूर्वक शिव स्नान करके पुष्प हाथ में लेकर पूजा स्थान में प्रवेश करे। तीन बार तीन प्राणायाम करे। अव्यक्त बुद्धि अहंकार तथा तन्मात्रा आदि से उत्पन्न शरीर को शिव रूपी अमृत से पवित्र करके हृदय रूपी कमल की कर्णिका में साक्षात् शिव का ध्यान करे। जो पाँच मुख, दस भुजा वाले हैं,

सर्व आभरणों से भूषित हैं प्रत्येक में तीन-तीन नेत्र वाले हैं तथा चन्द्रमा की कला से सुशोभित मस्तक वाले हैं, पद्मासनासीन, शुद्ध स्फटिक मणि के सदृश, श्वेत वर्ण, ऊर्ध्व मुख शिव का पूर्व में ध्यान करना चाहिए। दक्षिण में नीलांजल के समान, पश्चिम गौ दूध के समान धवल तथा उत्तर में रक्त वर्ण वाले शिव का ध्यान करे। शूल, परशा, वज्र शक्ति दक्षिण हाथ में, वाम हाथ में पाश अंकुश घंटा, नाग, बाण, वरद तथा अभय हस्त वाले त्रिनेत्रधारी शिवजी का ब्रह्मांगों से पूजन करना चाहिए।

ब्रह्मांग पाँच शिवाँग ही कहे हैं सो उन्हें भी तुमको बताता हूँ। ॐ ईशानः सर्व विद्यानां हृदयाय शक्ति बीजाय नमः। ॐ ईश्वरः सर्वभूतानं अमृताय शिरसे नमः। ॐ ब्रह्मादि पतये कालाग्निरूपाय शिखायै नमः। ॐ ब्रह्मणोधिपतये कालचण्ड मारुताय कवचाय नमः। ॐ ब्रह्मणे ब्रह्मणाय ज्ञानमूर्ते नेत्राय नमः। ॐ शिवाय सदा शिवाय पाशुपतास्त्राय अप्रतिहताय फट् फट्। ॐ सद्योजाताय भवेनानिभये। भवस्व मां भगेद्भवाय शिवमूर्तये नमः। ॐ हंस शिखाय विद्यादेहाय आत्मस्वरूपाय परा पराय शिवाय शिव तमाय नमः। शिवांग तथा मूर्तविद्या ब्रह्मांग मूर्तविद्या सहित मैंने तुमको कहीं। अब सूर्य सम्बन्धी वाष्कल आदि अंग जो सब वेदों के सारभूत हैं, सो कहूँगा।

ॐ भू: ॐ भुव: ॐ स्व: ॐ मह ॐ जन: ॐ तप: ॐ सत्यं ॐ ऋतं ॐ ब्रह्म: यह नवाक्षर मय मन्त्र वाष्कल कहा है। इस लोक में जो नाश को नहीं प्राप्त हो उसे अक्षर कहते हैं। प्रणवादि से नमः तक के सभी अक्षर सत्य कहे हैं।

ॐ भू: ॐ भुव: ॐ स्व: तत्सवितुर्वर्णेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धीयो योन: प्रचोदयात्। ॐ नम: सूर्याय खगोलकायनम:। महात्मा सूर्य का यह मूल मन्त्र है। नवाक्षर से दीप्त करके मूल से भास्कर का पूजन करना चाहिए। अब संक्षेप से अंग मन्त्रों को कहता हूँ।

ॐ भू ब्रह्मणे हृदयायनम:। ॐ भुव: विष्णवे शिरसे नम:। ॐ स्व: रुद्राय शिखाये नम: ॐ भूर्भुव: स्व: ज्वाला मालिन्यै देवाय नम: ॐ मह महेश्वराय कवचायनम: ॐ जन: शिवाय: नेत्रेभ्यो नम:। ॐ तपस्यायनाम अस्त्राय नम:। इस प्रकार प्रसंग से मैंने सूर्य सम्बन्धी अंग कहे। अब संक्षेप से शिवांगों को कहूँगा। मन्त्र मय देव का हृदय कमल से पूजन करना चाहिए और नाभि कुण्ड में हवन करना चाहिए। शिव रूपी अग्नि में ईश्वर को ध्यान कर मन से सब कार्य करने चाहिये। पंच ब्रह्मांगों से उत्पन्न शिव मूर्ति शिव मूर्ति सदाशिव रूप ही है।

रक्त पद्म पर विराजमान मूर्ति को मूल मन्त्र से

ब्रह्मागाद्यै अंगों से संध्या और गायत्री करके चन्द्रस्थान से उत्पन्न पूर्णधारा का स्मरण करना चाहिए। पूर्णाहुति के विधान के द्वारा तेजोमय मुख गत शंकर भगवान का ध्यान करना चाहिए। ललाट में भौंहों के मध्य में पुनः पुनः महादेव का ध्यान करें। हृदय कमल में विधि के विस्तार को समास कर देना चाहिए। शुद्ध दीपिका शिखा के आकार वाले, भव का नाश करने वाले शिव की लिंग में अथवा स्थल में भावना द्वारा पूजा करनी चाहिए।

शिव के द्वारा भाषित शिवाग्नि कार्य वर्णन

शैलादि बोले—शिव से परिभाषित शिवाग्नि कार्य को अब मैं कहूँगा। शुभ देश में तथा शुभ स्थान में यत्न पूर्वक कुण्डों का निर्माण करना चाहिए। नित्य होम का अग्नि कुण्ड तीन मेखलाओं से युक्त हो। मेखला चार, तीन तथा दो अंगुल के बराबर दीर्घ हो। एक हाथ का कुण्ड होना चाहिए। योनी प्रदेश (एक अँगूठा से तर्जनी अँगुली तक लम्बी) मात्र हो। योनी पीपल के पत्ते के समान मेखला के ऊपर बनानी चाहिए। कुण्ड के मध्य में नाभी आठ कली की तथा प्रादेश मात्र की बनावे।

षष्ठ मन्त्र के द्वारा उल्लेखन करे। कर्म मन्त्र से प्रोक्षण करे, नेत्र से कुण्ड को अवलोकन करके छः रेखा खींचे। शमी अथवा पीपल की लकड़ी की सोलह आंगुल की अरणी बनावे। वन्हि बीज से शक्ति का न्यास करके उसे मथना चाहिए, उत्पन्न हुई अग्नि को यथाविधि स्थापना करके चुपचाप यज्ञ के काम में आने वाले वृक्षों की समिधा उसमें लगावें। कुशाओं को बखेरे, प्रणोता पात्र जल में पूर्ण करे तथा प्रोक्षणी पात्र को कुशाओं से अच्छादित करे। घी को अग्नि से तपाना चाहिए। कुशाओं को अग्नि में तपाकर तीन परिक्रमा करे तथा फिर उन्हें अग्नि में ही डाल देवे। श्रुक और श्रुवा स्वर्ण का रत्नों का चाँदी का अथवा यज्ञ के वृक्षों की लकड़ी का ही बना लेना चाहिए। अज्ञस्थाली (घी का पात्र प्रणीता, प्रोक्षणी से तीनों ही सोना, चाँदी, ताँबा अथवा मिट्टी का ही हो। शान्ति कर्म हो या पौष्टिक कर्म हो इनसे अतिरिक्त किसी भी धातु के न बनावे। शान्ति कर्म में मिट्टी के श्रेष्ठ कहे हैं। किन्तु अभिचार कर्म (मारण आदि) में लोहा के बनाने चाहिए। समिधा एक से, अँगुली (कन्नी अँगुली) के समान सीधे चिकने होने चाहिए। टेढ़े तथा छेद वाले न हों। बारह अँगुल प्रमाण के हों। ऐसी समिधा ही शुभ कार्य के लिए शुभ कही है। गौ का घृत अति उत्तम होता है, कपिला का हो तो और श्रेष्ठ है। अक्ष के

प्रमाण अन्न तथा शुक्ति के परिमाण में तिल तथा आधे जौ। परिमाण के अनुसार फल, दूध, दही का परिमाण घी के समान है। शान्ति कर्म हो तो केवल शिवाग्नि में हवन करे। लौकिक उपचार की अग्नि में मोहन उच्चाटन आदि का कर्म करे।

ॐ बहुरूपायै मध्य जिह्वायै अनेक वर्णायै दक्षिणोत्तर मध्यगायै शान्तिकपौष्टिक मोक्षादि फल प्रदायै स्वाहा॥ १ ॥

ॐ हिरण्यायैच्चामी कराभायै ईशान जिह्वायै ज्ञान प्रदायै स्वाहा॥ २ ॥

ॐ कनकायै कनक निभायै रभ्यायै ऐन्द्रिजिह्वायै स्वाहा॥ ३ ॥

ॐ रक्तयै रक्त वर्णायै आग्नेय जिह्वायै अनेक वर्णायै विद्वेषण मोहनायै स्वाहा॥ ४ ॥

ॐ कृष्णायै नैर्ऋत जिह्वायै मारणायै स्वाहा॥ ५ ॥

ॐ सुप्रभायै पश्चिम जिह्वायै मुक्ताफलायै शान्तिकायै पौष्टिकायै स्वाहा॥ ६ ॥

ॐ अभिव्यक्तायै वायव्य जिह्वायै शत्रुच्चाटनायै स्वाहा॥ ७ ॥

ॐ वहये तेजस्विने स्वाहा॥ ८ ॥

उपर्युक्त मन्त्रों द्वारा वह्नि का संस्कार कराना चाहिये। नैमित्तिक कर्मों में इनके द्वारा शिवाग्नि कार्य करना

चाहिए।

इसके बाद बागीश्वरी आवाह्न करना चाहिए। ॐ ह्रीं बागीश्वरीं श्याम वर्णां विशालाक्षीं यौवनोन्मत्तविग्रहां ऋतुमतीं बागीश्वरी शक्तीं आवाहयामि॥ इस मन्त्र से आवाह्न करके बागीश्वरी देवी का यथायोग्य पूजन करना चहिए इसके बाद इन्द्रादि लोकपालों का पूजन करे।

घी से श्रुवा के द्वारा—शक्ति बीजदीशानमूर्तये स्वाहा। पुरुष वक्त्राय स्वाहा। अघोर हृदयाय स्वाहा वामदेवाय गुह्याय स्वाहा, सद्योजात मूर्तये स्वाहा, ईशान मूर्तये तत्पुरुष वक्त्राय स्वाहा। तत्पुरुष वक्त्राय अघोर हृदयाय स्वाहा। अघोर हृदाय वाम गुह्याय सद्योजात मूर्तये स्वाहा। आदि मन्त्रों से इस प्रकार हवन करना चाहिये तथा मूल से शिवजी के हवन में पूर्ण आहुति प्रदान करे। हे मुनीश्वरो! यह क्रिया नित्य ही करनी चाहिए। अग्नि का दीपक इससे प्राप्त होगा तथा अन्त में स्वर्ग की प्राप्ति होगी। ऐसा करने वाला पुरुष दुष्कर्म करने पर भी नर्क को नहीं जायेगा। मुक्ति की इच्छा वाले भक्त को अहिंसक हवन करना चाहिए। हृदय में अग्नि का चिन्तन करना चाहिए और ध्यान रूपी यज्ञ से हवन करना चाहिए। सम्पूर्ण प्राणियों के देह में स्थित वह जगत्पति शिव ही हैं। उसको भक्ति के द्वारा जानकर प्राणायाम के द्वारा हवन करना चाहिये। बाह्य हवन करने वाला तो पत्थर

पर मेंढक बनता है।

अघोरार्चन विधि वर्णन

शैलादि बोले—शिव भक्त ध्यान में परायण ब्राह्मण लिंग में शिव की पूजा करे। अग्नि होत्र की भस्म को 'अग्निरीति' मन्त्र से ग्रहण कर पाद से मस्तक तक सब अंग में लेपन करे। ब्रह्मतीर्थ के द्वारा आचमन करे। ब्रह्म सूत्र धारण किये हुए उत्तर मुख होकर 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र से देव का पूजन करे। सब देवों से अधिक श्रेष्ठ पूजा अघोर देव की है। अघोर भगवान के पूजन में यजन पूजन अग्नि कार्य सब समान है परन्तु अघोर मन्त्र और ध्यान अलग है। अघोर मन्त्र निम्न प्रकार है:—

अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोर घोर करेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यः नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥

इसके बाद अङ्गन्यास कहता हूँ:—

अघोरेभ्यः प्रशान्त हृदयायनमः। अथ घोरेभ्यः सर्वात्म ब्रह्म शिर से स्वाहा, चोर घोर करेभ्यः ज्वाला मालिनी शिखायैवषट्। सर्वेभ्य पिंगल कवचाय हूँ। नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः नेत्रत्रयाय वौषट्। सहस्राक्षाय द्विभेदाय

पाशुपता स्त्राय हुँ फट्।

स्नान करके आचमन करके अघमर्षण करे। विधि पूर्वक पूजन करना चाहिए। पुनः सूर्य का पूजन करके सूर्य को अर्घ प्रदान करे। आत्मा में स्थित मूर्ति का ध्यान करे। ३८ कलाओं वाले तीन तत्वों सहित १८ भुजाओं वाले, गज चर्मधारी बाघम्बर ओढ़े हुए अघोर रूप परमेश्वर ३२ अक्षर रूप और ३२ शक्तियों से युक्त सम्पूर्ण आभूषणों से युक्त, सर्व देवों के द्वारा नमस्कार किये जाने वाले कपालों की माला धारण करने वाले, सर्व बिच्छू के भूषण धारण करने वाला, पूर्ण चन्द्रमा के समान मुख वाले, करोड़ों चन्द्रमाओं आभूषणों से युक्त, सर्व देवों के द्वारा नमस्कार किये जाने वाले कपालों की माला धारण करने वाले, सर्व बिच्छू के भूषण धारण करने वाला, पूर्ण चन्द्रमा के समान मुख वाले, करोड़ों चन्द्रमाओं की कान्ति वाले चन्द्ररेखा धारण करने वाले, शक्ति सहित, नीलरूप, हाथों में खड्ग खेटक पाश, अंकुश, नाग कक्षा, धनुष, पाशुपतास्त्र दण्ड, खट्वांग, तन्त्री, घंटा, विपुल त्रिशूल, दिव्य डमरू, वज्र, गदा, टंक, चमकती हुई मुद्गल धारण करने वाले तथा वरद और अभय हस्त वाले परमेश्वर का ध्यान करे तथा पुनः अघोर का पूजन और हवन करे। हवन पूर्व में कही विधि से करना चाहिए। केवल मन्त्र का भेद है सो मैंने तुम्हें

अघोर भगवान का मन्त्र बता ही दिया। अष्ट पुष्पांजलि गन्धादि पूजन और स्तुति भगवान को निवेदन करे तथा बाद में बलिदान निम्न मन्त्र के द्वारा करे:—

"रुद्रभ्यो मातृगणेभ्यो यक्षेभ्ऽसुरेभ्यो गृहेभ्यो राक्षसेभ्यो, नागेभ्यो नक्षत्रेभ्यो विश्वगणेभ्यो क्षेत्रपालेभ्यः।" अथ वायु वरुण दिग् भागे क्षेत्र पाल बलि क्षिपेत्। ऐसा मन्त्र बोलकर वायव्य दिशा में या वरुण की दिशा में बलिक को रख आवे। अर्घ, गन्ध, पुष्प, धूप,दीप, नैवेद्य, ताम्बूल निवेदन करके आठ पुष्पों की पुष्पांजलि दे और सब विधि पूर्ववत् ही है। इस प्रकार अघोर की अर्चन विधि मैंने तुम्हें संक्षेप से कही।

अघोर भगवान की पूजा लिंग में अथवा स्थण्डल में करे। परन्तु स्थण्डल से करोड़ गुना फल लिंगार्चन में तत्पर ब्राह्मण महान पापों में पड़कर भी उनमें लिप्त नहीं होता जैसे जल में पड़कर कमल का पत्र। लिंग के दर्शन से पुण्य होता है। दर्शन से स्पर्शन अधिक श्रेष्ठ है और हे ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार! अर्चन से अधिक तो कुछ है ही नहीं। इस प्रकार यह लिंगार्चन विधि मैंने संक्षेप से कही। विस्तार से तो करोड़ों वर्ष तक भी नहीं कही जा सकती।

जीवत श्राद्ध विधान वर्णन

सूतजी बोले—हे मुनीश्वरो! अब मैं जीवत श्राद्ध विधि को संक्षेप से कहूँगा। जो ब्रह्माजी ने पूर्व में मनु, वशिष्ठ, भृगु आदि के लिये कही है। वह सर्व सिद्धि करने वाली है। उसे आप लोग श्रवण करें।

पर्वत पर, नदी के किनारे वन में अथवा आयतन (घर) में मरण समय में जीवत श्राद्ध करना चाहिए। जीवत श्राद्ध करने पर जीता हुआ ही मुक्त हो जाता है। चाहे वह कर्म करे अथवा न करे, ज्ञानी हो अथवा अज्ञानी हो, वेदपाठी हो या अवेद पाठी हो, ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य सभी मुक्त हो जाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। जैसे योगी योग मार्ग के द्वारा मुक्त होता है, वैसे ही जीवत श्राद्ध वाला मुक्त होता है।

भूमि की परीक्षा करके उसे शुद्ध करे। बालू का स्थण्डल बनावे उसके बीच में एक हाथ का कुण्ड बनावे अथवा बाण के बराबर का कुण्ड बनावे। विधान के द्वारा गौ के गोबर से वेदी के स्थान को लीप कर तथा धूप, दीप आदि से वेदी के स्थान को सुगन्धित करे तथा विभिन्न-विभिन्न प्रकार के मंगल द्रव्यों से सुशोभित करके अग्नि की स्थापना करे। कुशाओं का परिस्त्राण करके स्थण्डल पर अग्नि का पूजन करके समिधाओं का हवन

करे। पूर्व में समिधाओं का बाद में अलग-अलग चरुओं का हवन करे। हवन के मन्त्र नीचे लिखे अनुसार हैं—

ॐ भू ब्रह्मणे नमः॥ ॐ स्व रुद्राय स्वाहा॥ ॐ महः ईश्वराय नमः॥ ॐ महः ईश्वराय स्वाहा॥ ॐ जनः प्रकृतये नमः॥ ॐ जनः प्रकृत्यै स्वाहा॥ ॐ तपः मुद्गलाय नमः॥ ॐ मुग्दलाय स्वाहा॥ ॐ ऋतं पुरुषाय नमः॥ ॐ ऋतं पुरुषाय स्वाहा॥ ॐ सत्य शिवाय नमः:॥ ॐ सत्यं शिवाय स्वाहा॥

ॐ शर्व! धराँ मे गोपाय घ्राणे गन्धं शर्वय देवाय भूर्नमः॥

ॐ शर्व! धराँ मे गोपाय घ्राणे गन्धं शर्वय भूः स्वाहा॥

ॐ शर्व! धराँ मे गोपाय घ्राणे गन्धं शर्वस्य देवस्य पत्न्यै भूर्नमः॥

ॐ शर्व! धराँ मे गोपाय घ्राणे गन्धं शर्व पत्न्यै भू स्वाहा॥

ॐ भव! जलं मे गोपाय जिह्वायां रसम्भवाय देवाय भुवा नमः॥

ॐ भव! जलं मे गोपाय जिह्वायां रसम्भवाय देवाय भुवः स्वाहा॥

ॐ भव! जलं मे गोपाय जिह्वायां रसम्भवस्य देवस्य पत्न्यै भुवो नमः॥

ॐ भव! जलं मे गोपाय जिह्वायां रसम्भवस्य पत्न्यै

भुवः स्वाहा ॥

ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्राय स्वरो नमः ॥

ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्रस्य देवस्य पत्न्यै स्वः स्वाहा ॥

ॐ उग्र! वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शम् उग्राय देवाय महर्नमः ॥

ॐ उग्र! वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शम् उग्राय देवाय महः स्वाहा ॥

ॐ उग्र! वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शम् उग्रस्य देवस्य पत्न्यै महरों नमः ॥

ॐ उग्र! वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शम् उग्रस्य देवस्य पत्न्यै महः स्वाहा ॥

ॐ भीम! सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनो नमः ॥

ॐ भीम! सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनः स्वाहा ॥

ॐ भीम! सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य देवस्य पत्न्यै जनो नमः ॥

ॐ भीम! सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य देवस्य पत्न्यै जनः स्वाहा ॥ इत्यादि............. तथा ॐ भूः स्वाहा। ॐ भुवः स्वाहा। ॐ स्वः स्वाहा ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा ॥

इस प्रकार मन्त्रों से हवन करके सातवें दिन योगीन्द्रों को जो श्राद्ध के योग्य हों उन्हें भोजन करावे। ब्राह्मणों के लिए वस्त्र, आभूषण, शैय्या, काँस पात्र, ताम्र पात्र, सुवर्ण पात्र, चाँदी के पात्र, धेनु, तिल, खेत, दासी, दास तथा दक्षिणा आदि प्रदान करनी चाहिये। पहली तरह पिण्ड को आठ प्रकार से देना चाहिये। हजार ब्राह्मणों को दक्षिणा सहित भोजन कराना चाहिए। यीग में तत्पर भस्म लगाये हुए जितेन्द्रिय योगी को तीन दिन तक महाचरु निवेदन करना चाहिए। मरने पर करे या न करे, वह तो जीवित ही मुक्त है। नित्य नैमित्तिक कार्यों को बान्धव के मरने पर नहीं त्यागना चाहिए क्योंकि उसे शौचाशौच नहीं लगता। उसका सूतक स्नान मन्त्र से ही शुद्ध होता है। अपनी स्त्री में पुत्र के उत्पन्न होने पर उसका भी सर्व कर्म ऐसे ही करना चाहिए क्योंकि वह पुत्र भी ब्रह्म के समान होता है। यदि कन्या उत्पन्न होगी तो वह अपर्णा के समान होगी। उसके वंशज सब मुक्त हो जायेंगे। नर्क से सब पितर मुक्त हो जायेंगे।

इस प्रकार यह सब ब्रह्माजी ने पूर्व में मुनियों से कहा था। सनत्कुमार ने श्री कृष्ण द्वैपायन से इसको कहा और वेदव्यास से मैंने सुना। सो मैंने अति गोपनीय और कल्याणप्रद रहस्य तुमसे कहा। इसे मुनि पुत्र और भक्त को देना चाहिए, अभक्त को नहीं देना चाहिए।

लिंग प्रतिष्ठा के महत्व का वर्णन

ऋषि बोले—हे महामते सूतजी! आपसे हमने मूर्खों को भी मोक्ष प्रदान करने वाली जीवत् श्राद्ध की विधि को सुना। हे सुव्रत रोमहर्षण जी! अब कृपा करके रुद्र, आदित्य, वसु, इन्द्र, आदि की प्रतिष्ठा किस प्रकार की होती है तथा शम्भु की लिंग की प्रतिष्ठा को हमें बतलाइये। विष्णु, इन्द्र, देवता, ब्राह्मण, महात्मा, अग्नि, यम नैर्ऋत दिशा में वरुण, वायु में सोम की यज्ञ, कुबेर की ईशान, धरा, श्री, दुर्गा, शवा, हेमवती, स्कन्द, गणेश,नन्दी तथा अन्य देवों और उनके गणों की प्रतिष्ठा लक्षणों को विस्तार से हमारे प्रति वर्णन कीजिए। क्योंकि आप सब तत्वों को जानने वाले तथा रुद्र के भक्त हैं और तत्व जानने वालों में तो आप कृष्ण द्वैपायन व्यास जी के साक्षात् दूसरे शरीर ही हो। सुमन्तु, जैमिनी, पैल और बड़े बड़े ऋषि गुरु भक्ति में जिस प्रकार नामी हुए वैसे ही रोमहर्षण जी हुए। व्यास जी की विपुल गाथा को भागीरथी के तट पर प्रकट करने वाले अकेले अथवा सबके साथ व्यासजी के अभिन्न शिष्य हो। भूतल पर व्यास के शिष्यों में तुम वैशम्पायन के शिष्य हो। इसलिए हमारे लिए सम्पूर्ण वृत्तान्त कहिए। ऐसा कहकर सबके चुप हो जाने पर मुनियों के सामने तथा सूतजी के सामने

एक महा आश्चर्य उत्पन्न हुआ। आकाश में साक्षात् सरस्वती प्रकट हुईं और वाणी हुई कि मुनियों का प्रश्न बहुत है यानी पर्याप्त है। यह सब लोक लिंग में प्रतिष्ठित है। इसलिए सबको त्याग कर लिंग की पूजा करनी चाहिए। उपेन्द्र, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर तथा और भी देवता लिंग मूर्ति महेश्वर की स्थापना करके अपने अपने स्थानों में पूजा करते हैं। ब्रह्मा, हर, विष्णु, देवी, लक्ष्मी, धृति, स्मृति, प्रज्ञा, धरा, दुर्गा, शची, रुद्र, वसु, स्कन्ध, शाख, विशाख, नैगमेष, लोकपाल, ग्रह, नन्दी से आदि लेकर सब गण, गणपति, पितर, मुनि, कुबेर आदि साख्य अश्वनी कुमार, विश्वेदेवा, साध्य, पशु, पक्षी, मृग, ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक सब लिंग में प्रतिष्ठित हैं इसलिये सबको त्यागकर अव्यय लिंग की स्थापना करनी चाहिए। मन्त्र से स्थापित लिंग में पूजा करने पर सबकी पूजा हो जाती है।

लिंग मूर्ति की प्रतिष्ठा का वर्णन

सूतजी कहने लगे—इस प्रकार सुनकर हाथ जोड़े हुए मुनीश्वर कल्याण रूप शिव को लिंग रूप समझकर

मन में प्रणाम करने लगे। सब देवताओं के पति ब्रह्माजी, विष्णु भगवान, सभी श्रेष्ठ मुनि, श्रेष्ठ नर सब शिवलिंगमय हो गये और सब सावधान होकर सब त्यागकर लिंग प्रतिष्ठा करने को तैयार हुए और सूतजी से पूछने लगे।

सूतजी कहने लगे—धर्मार्थ काम आदि की सिद्धि के लिए लिंग प्रतिष्ठा को मैं संक्षेप से कहता हूँ, सो सुनो। ब्रह्मा, विष्णु, शिवात्मक लिंग जो शिला से निर्मित है। स्वर्ण तथा चाँदी का ताम्र के लिंग की स्थापना वेदी सहित, सूत्र सहित करनी चाहिए। लिंग की वेदी साक्षात् उमा देवी हैं और लिंग साक्षात् महेश्वर हैं। इसलिए देवी के साथ ही देवेश की प्रतिष्ठा होनी चाहिए। लिंग के मूल में ब्रह्मा, मध्य में विष्णु वास करते हैं। इससे सर्वेशान पशुपति रुद्र की मूर्ति सबसे श्रेष्ठ है। अतः लिंग की स्थापना करके गन्ध, धूप, दीप, स्नान, हवन, बलि, स्तोत्र, मन्त्र, उपहार से पूजा करनी चाहिए। जो इस प्रकार लिंग मूर्ति महेश की नित्य पूजा करते हें वह जन्म मरणादिक से रहित देव गन्धर्व सिद्धों से वन्दनीय तथा गणों से पूज्य और प्रमाण रहित होते हैं। इसलिए सब उपचार के सहित परमेश्वर के लिंग की पूजा कर सर्वार्थ सिद्धि के लिए आराधना करनी चाहिए। तीर्थ के मध्य में शिवासन पर लिंग की स्थापना करके दर्भ तथा वस्त्र

आदि से लिंग को आच्छादन करके तथा कलशों द्वारा स्नान कराकर वज्र आदि आयुधों से युक्त लिंग की प्रतिष्ठा करनी चाहिए तथा गज आदि की मूर्तियों के सहित स्थापना करे। धूप, दीप आदि से युक्त कर जल में अधिकांश कराना चाहिए। पाँच दिन या तीन दिन अथवा एक ही रात्रि तक वेदाध्ययन से युक्त नृत्य, वादन, ताल, वीणा आदि शब्दों से समाहित हुआ यजमान महेश्वर को जल में से उत्थापन करे।

नव कुण्डों से युक्त संस्कार की हुई वेदी पर या पाँच या एक कुण्ड वाली वेदी पर अथवा स्थण्डल में महेश्वर की अर्चना करे। पूर्व की ओर सिर करके लिंग का न्यास करे। वस्त्र से या कुशा से उसे आच्छादन करे। सर्व धान्य से युक्त शिला पर शिव गायत्री द्वारा लिंग की स्थापना करे शिव गायत्री से अथवा केवल प्रणव से ही स्थापना करे।

'ब्रह्म जिज्ञान' मन्त्र से ब्रह्मा की स्थापना, विष्णु, गायत्री से विष्णु की स्थापना उसमें करे। नमः शिवाय अथवा 'नमो हंस शिवाय च' अथवा रुद्राध्याय से शिव का न्यास करे। चारों तरफ कलश की स्थापना करे। मध्य कुम्भ में शिव की स्थापना, दक्षिण में देवी की, दोनों के मध्य में स्कन्द की, स्कन्द के कुम्भ में ब्रह्मा की, ईश कुम्भ में हरि की स्थापना करे और शिव कुम्भ

में ब्रह्मांगों का न्यास करे। शिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु, पितामह ये सब ब्रह्मांग ही हैं।

सोना, चाँदी, रत्न आदि शिव कुम्भ में डाले। नवीन वस्त्र प्रत्येक घड़ा के ऊपर रखे। गायत्री मन्त्र से, जया से सृष्टि पर्यन्त सबका हवन करे। शिव कुम्भ से शिव का अभिषेक करे। एक हजार पण की दक्षिणा प्रदान करे। अन्यों को इससे आधी या आधी से भी आधी दक्षिणा प्रदान करे। वस्त्र, खेत, भूषण, गौ, धन आदि का दान करे। उत्सव करे, हवन करे, बलिदान करे। नौ दिन, सात दिन, तीन दिन या एक दिन ही शंकर भगवान का पूजन करके होम करना चाहिए। सूर्यादिक देवताओं का भी पूर्व में होम करना चाहिए। इस प्रकार लिंग की स्थापना करने वाला साक्षात् परमेश्वर ही है। उसने सम्पूर्ण देवगण, रुद्रगण, ऋषिगण तथा अप्सरा तथा सचराचर त्रैलोक्य की पूजा कर ली।

गायत्री के भेदों का वर्णन

सूतजी बोले—सभी देवताओं की प्रतिष्ठा को अपने अपने मन्त्रों द्वारा तथा याज्ञिक कुण्डों का विन्यास अब

विस्तार पूर्वक कहूँगा। उत्सव करके विधान पूर्वक पूजा करके मूर्ति की स्थापना करनी चाहिए। सूर्य की पंचाग्नि कार्य से अथवा द्वादशाग्नि के क्रम से पूजा करे। सब कुण्डों की वृत्ताकार अथवा पद्माकार आकृति होनी चाहिए। अम्बिका की पूजा में योनि कुण्ड बनावे। शक्तियों के सब कार्य में योनि कुण्ड बनावे। शक्तियों के सब कार्य में योनि कुण्ड का विधान है। सब गायत्रियों की उत्पत्ति शम्भु के ही द्वारा है, सब ही रुद्र के अंश से उत्पन्न हैं, यह सब संक्षेप से कहता हूँ। गायत्री के भेद निम्न प्रकार हैं।

अथ गायत्री भेदा:

तत्पुरुषाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि
तन्नः शिवः प्रचोदयात्॥ १॥
गणाम्बिकायै विद्महे कर्म सिद्धै च धीमहि
तन्नो गौरी प्रचोदयात्॥ २॥
तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥ ३॥
तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि
तन्नो दन्तिः प्रचोदयात्॥ ४॥

महासेनाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि
तन्नः स्कन्दः प्रचोदयात् ॥ ५ ॥
तीक्ष्ण शृङ्गाय विद्महे वेदपादाय धीमहि
तन्नो वृषः प्रचोदयात् ॥ ६ ॥
हरिवक्त्राय विद्महे रुद्रवक्त्राय धीमहि
तन्नो नन्दी प्रचोदयात् ॥ ७ ॥
नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि
तन्नो विष्णु प्रचोदयात् ॥ ८ ॥
महाम्भिकायै विद्महे कर्म्मसिद्धै च धीमहि
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ ९ ॥
समुद्धृतायै विद्महे विष्णुनैकेन धीमहि
तन्नो राधा प्रचोदयात् ॥ १० ॥
वैनतेयाय विद्महे सुवर्णपक्षाय धीमहि
तन्नो गरुड़ः प्रचोदयात् ॥ ११ ॥
शिवास्यजायै विद्महे देवरूपायै धीमहि
तन्नो वाचा प्रचोदयात् ॥ १२ ॥
पद्मोद्भवाय विद्महे वेदवक्त्राय धीमहि
तन्नो सृष्टा प्रचोदयात् ॥ १३ ॥
शिवास्यजायै विद्महे देवरूपायै धीमहि
तन्नो वाचा प्रचोदयात् ॥ १४ ॥
देवराजाय विद्महे वज्रहस्ताय धीमहि
तन्नः शंक्रः प्रचोदयात् ॥ १५ ॥

रुद्रनेत्राय विद्महे शक्ति हस्ताय धीमहि
तन्नो वह्नि प्रचोदयात्॥ १६ ॥
वैवस्वताय विद्महे दण्ड हस्ताय धीमहि
तन्नो यमः प्रचोदयात्॥ १७ ॥
निशाचराय विद्महे खड्गहस्ताय धीमहि
तन्नो निऋतिः प्रचोदयात्॥ १८ ॥
शुद्धहस्ताय विद्महे पाशहस्ताय धीमहि
तन्नो वरुणः प्रचोदयात्॥ १९ ॥
सर्वप्राणाय विद्महे यष्टि हस्ताय धीमहि
तन्नो वायुः प्रचोदयात्॥ २० ॥
यक्षेश्वराय विद्महे गदाहस्ताय धीमहि
तन्नो यक्षः प्रचोदयात्॥ २१ ॥
कात्यायन्यै विद्महे कन्य(न्या) कुमांय धीमहि
तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्॥ २२ ॥

इस प्रकार से तत् तत् देव के अनुरूप भिन्न भिन्न गायत्री से देवताओं की पूजा और स्थापना करनी चाहिए अथवा अतुल विष्णु भगवान को पुरुष सूक्त से या देव गायत्री से स्थापना करनी चाहिए। वासुदेव प्रधान है, फिर वे शंकरषण हैं, फिर प्रद्युम्न हैं, ये उनके मूर्ति के भेद हैं। बहुत प्रकार की भगवान की शाप उत्पन्न मूर्ति जगत के हित के लिए हैं जैसे मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, राम, कृष्ण, बौद्ध, कल्कि तथा अन्य भी भगवान

की शाप से उत्पन्न मूर्तियों को उनकी गायत्री से स्थापना करनी चाहिए। 'ॐ नमो नारायणाय' यह अष्टाक्षर मन्त्र परम शोभन है अथवा ॐ नमो वासुदेवाय नमः शंकर्षणावच प्रद्युम्नाय प्रधानाय अनिरुद्धाय वै नमः ॥ इस मन्त्र से भगवान की स्थापना करे। अचल मूर्ति में सब कार्य करते तथा चल में भी सब विधान से नेत्रोन्मीलन नेत्र मन्त्र से करना चाहिए। खेत की, बगीचा की, नगर की परिक्रमा तथा जलाधि वास पूर्ववत् ही करना चाहिए। कुण्ड और मण्डप का निर्माण तथा शयन पूर्ववत् ही करना चाहिए। नवाग्नि भाग से नौ कुण्डों में हवन करना चाहिए अथवा पाँच कुण्डों के अथवा एक ही कुण्ड में हवन करे। यह परम्परा से चला आया हुआ दिव्य प्रतिष्ठा का वर्णन मैंने तुमसे कहा।

शिला से उत्पन्न मूर्ति, बिम्ब द्वारा या चित्र द्वारा बनी मूर्ति आदि सबकी प्रतिष्ठा को इसी प्रकार जानो, जो मैंने कही है। प्रासाद (मन्दिर या महल) की प्रतिष्ठा भी ऐसे ही कही गई है क्योंकि प्रासाद भी इसका अंग है जैसे शरीर के अंग होते हैं। वृष, अग्नि, मातृ, विघ्नेश कुमार, दुर्गा, चण्डी आदि का भी गायत्री द्वारा विन्यास करे। लोकपाल गणेश आदि का भी विन्यास करे तथा क्रम से स्थापना करे। उमा, चण्डी, नन्दी, महाकाल, महामुनि, विघ्नेश्वर, महाभृङ्गी, स्कन्द की स्थापना करे।

इन्द्रादिक देवताओं की, ब्रह्मा की, जनार्दन विष्णु की भी यत्न से स्थापना करे। अनंत आदि देवताओं की स्थापना प्रणव के द्वारा सिंहासन पर करे। कमल के ऊपर उनके गुह्य अंग की स्थापना करे।

अघोरेश प्रतिष्ठा विधान वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! आपने पहले अघोरेश प्रभु का महात्म्य कहा है। अतः उनकी पूजा प्रतिष्ठा को भी कहिये।

सूतजी बोले—अघोर मन्त्र से युक्त लिंग विधि के अनुसार ही प्रतिष्ठा करनी चाहिए। अग्नि की पूजा करनी चाहिए। एक हजार अथवा पाँच सौ या १०८ बार दधि, मधु और घृत से युक्त तिलों द्वारा हवन करना चाहिए। घी, मधु और सत्तू से सर्व दुःखों का नाश होता है। तिल आदि का होम कल्याण देने वाला और व्याधियों का नाश करने वाला है। सहस्त्र बार की संख्या में हवन करने पर महा ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है और १०० (बार) से व्याधियों का नाश होता है तथा जप करने से सब दुःखों की निवृत्ति होती है। १०८ बार तीनों काल में जप

करना चाहिए। जो १०८ बार छः मास तक जप करता है उसे सब सिद्धि प्राप्त होती हैं, इसमें संदेह नहीं। एक हजार बार दूध से हवन करता है उसका ज्वर समाप्त हो जाता है। तीनों काल एक मास तक एक हजार बार होम करता है उसको महा सौभाग्य की प्राप्ति होती है। दही, शहद, घी से युक्त जो एक वर्ष तक हवन करता है उसको सिद्धियाँ प्राप्त होती है। जौ, क्षीर, दूध, घी, जाति, पुष्प तथा चावल के हवन से अघोर परमेश्वर शीघ्र प्रसन्न होते हैं। राजाओं को दधि के हवन से पुष्टि और दधि के हवन से शान्ति प्राप्त होती है। छः मास तक घी का हवन करने से सम्पूर्ण व्याधियों का नाश होता है। एक वर्ष तक तिलों का हवन करने से राजयक्ष्मा नष्ट होती है। घी के हवन से जय तथा जौ के हवन से आयु प्राप्त होती है। सर्व प्रकार के कुष्ठ के लिए शहद से भिगोकर चावलों का दस हजार संख्या का छः महीना तक हवन करे। घी, दूध, शहद ये तीनों मधु कहाते हैं। इन तीनों से भगवान तुष्ट होते हैं और भगन्दर को नाश करते हैं। केवल घी के होम से सब रोगों का नाश होता है। सम्पूर्ण व्याधियों का नाश करने वाला भगवान का ध्यान स्थापन तथा विधि पूर्वक पूजन है। इस प्रकार अघोर परमात्मा का संक्षेप से प्रतिष्ठा योजन कहा। यही पहले नन्दी ने ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार अपने शिष्य को कहा था और उन्होंने व्यासजी

से कहा था।

अघोर मन्त्र के साधन से शत्रुनाश विधान वर्णन

ऋषि बोले—त्रिशूलधारी शिव भगवान ने अपने अपराधियों का निग्रह कहा है। सो हे रोमहर्षणजी! आप हमसे कहिये। आपसे लौकिक वैदिक श्रोत स्मार्त कुछ भी अविदित नहीं है।

सूतजी बोले—पूर्व में भृगु पुत्र शुक्राचार्य ने अपने शिष्य हिरण्याक्ष के लिए निग्रह का वर्णन किया है। उन्हीं के प्रसाद से हिरण्याक्ष देव असुर मनुष्य सब त्रिलोकी को जीतकर बड़ा प्रतापी हुआ। गणप, अन्धक, चारविक्रम आदि पुत्रों को पैदा कर लोक में शोभा को प्राप्त हुआ। वाराह भगवान ने उसे मार दिया था। वह स्त्री, बालक तथा गौ आदि को बाधा पहुँचाता था। वह दैत्य पृथ्वी को रसातल में ले गया। हजारों वर्षों में जाकर वाराह भगवान ने उसको मारा है।

अघोर सिद्धि के लिए ब्राह्मणों को बाधा नहीं पहुँचाना चाहिए। स्त्री, बालकों को कष्ट नहीं देना

चाहिए। यह परम गुह्य से गुह्य बात तुमसे कही। आततायियों के लिए यह विधि करनी चाहिए और अपने राष्ट्र के राजा के लिए नहीं करनी चाहिए तथा ब्राह्मण के लिए नहीं करे। अति कठिन समय में सेना का नाश होता है, इसमें सन्देह नहीं।

अघोर रूपी अघोर मन्त्र का एक लाख जप करे। दशाँश तिलों का विधि पूर्वक हवन करे। विधि पूर्वक एक लाख सफेद पुष्पों से शिव का पूजन करे। लिंग में तथा वह्नि में पूजन करे। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होता है। प्रेत स्थान में विशेष करके मन्त्र सिद्ध होता है। मातृ स्थान (देवी के स्थान) में वेदवेदांग भक्त मन्त्र सिद्ध को प्राप्त होता है। विद्वान इस विधि को राजा के लिए अथवा अपने लिए करे। आठ त्रिशूल पूर्व से ईशान तक रखे। सब का नाश करने वाले कालाग्नि के सदृश अघोर रूप भगवान का स्वदेह में भावना करे। वह शून्य, कपाल, पाश, दण्ड और धनुष बाण, डमरू, खड्ग आठों हाथों में धारण करने वाले नीलकण्ठ दिगम्बर, पाँच तत्व धारण किये हुए आधा चन्द्रमा मस्तिष्क पर धारण किए हुए, भयंकर दाढ़ के कारण कराल मुख वाले, रौद्र दृष्टि वाले, हुँ फट् शब्दों से अखिल दिशायें जिन्होंने शब्दायमान कर रखी हैं, त्रिनेत्र वाले, नाग पाश से मुकुट बाँधने वाले, प्रेत भस्म को धारण करने वाले,

प्रेत, भूत, पिशाच, डाकिनी आदि से घिरे हुए, गज चर्म ओढ़े हुए, सर्पों का भूषण धारण करने वाले, बिच्छुओं के अलंकार धारण करने वाले, नील बादल के समान शब्द करने वाले, नील पर्वत के समान रूप वाले, बाघम्बर ओढ़ने वाले हैं। ऐसे भगवान अघोरेश शिव का ध्यान करना चाहिए।

महामुद्राओं से युक्त सर्व कार्य करना चाहिए। अग्नि में तथा प्रेत भूमि में मन्त्र शीघ्र सिद्ध होता है। पूर्व में, दक्षिण में तथा उत्तर में शास्त्र के अनुसार विधि पूर्वक कुण्ड बनाने चाहिए। मध्य कुण्ड में आचारी को कुशाओं का परिस्परण करके शिष्यों सहित ३२ अक्षरों सहित अघोरेश का ध्यान करके हवन करना चाहिए। कुण्ड के नीचे ब्राह्मण ऊर्ध्व मुख होकर शत्रु का न्यास करके श्मशान से अग्नि लाकर फूंस के साथ उसे जलावे। मयूरास्त्र से नाभी को जलावे। फूंस से युक्त कपास के वस्त्रों से कंचुकी को जलावे। होम द्रव्यों से युक्त तिलों से हवन करावे। एक हजार आठ आहुति प्रदान करे। कृष्ण पक्ष की चौदस के दिन इस कार्य को आरम्भ करे। ऐसा करने पर राजा के शत्रु कुल सहित तथा सम्पूर्ण दुःखों के सहित यमलोक को प्राप्त हो जावेंगे।

इसी मन्त्र से मनुष्य के कपाल में खं, केश अंगार कुश, कंचुक, वस्त्र धूली विषैले सर्प के दाँत, बैल के

दाँत, गौ के दाँत, व्याघ्र के नख या दाँत, काले मृग के दाँत, विडाल के दाँत, नकुल के दाँत, वाराह के दाँत इनको सिद्ध करे तथा १०८ बार अघोर मन्त्र का ही जप करे। उस कपाल को घर में खेत में प्रेत स्थान में राष्ट्र में मुर्दे के वस्त्र से लपेट कर शत्रु के राशि में आठवें सूर्य या चन्द्रमा होने पर पृथ्वी में गाढ़ दे। ऐसा करने पर उस स्थान का तथा शत्रु का नाश हो जाय अथवा राजा के शत्रु की मूर्ति भूतल में, दर्पण के ऊपर, वितान के ऊपर लिखकर दक्षिण पैर से उसके सिर पर लात मारे। इस प्रकार भी राजा के शत्रु का नाश हो जाता है। अपने राष्ट्रपति को लक्ष्य बनाकर जो इस क्रिया को करता है वह अपने कुल का नाश करके अपनी आत्मा का हनन करता है। इसलिए अपने राष्ट्रपति राजा की सदा रक्षा करनी चाहिए। मन्त्र और औषधि और क्रिया हर एक किसी को नहीं देनी चाहिए, इस रहस्य को मैंने तुमसे कहा है।

वज्रेश्वरी विद्या का वर्णन

ऋषि बोले—हे भगवन्! आपने घोर निग्रह का वर्णन

हमारे प्रति किया। अब वज्रवाहनिका नाम की विद्या को कहिये।

सूतजी बोले—वज्रवाहनिका नाम की विद्या सब शत्रुओं को भयंकर है। इसके लिए राजा को वज्र का अभिषेक करना चाहिए। वज्र को विधान से बनाकर इस विद्या से अभिषेक करके वज्रधारी पुरुष घृतादि से हवन कुण्ड में हवन करे। उस वज्र को नित्य छिपाकर रखे। उस वज्र को लेकर शत्रु विजय के लिए चले तो संग्राम में अवश्य जीते। पूर्व में ब्रह्माजी ने इन्द्र के उपकार के लिए वज्रेश्वरी विद्या को कहा थ। इन्द्र के द्वारा हत पुत्र हुआ त्वष्टा नाम का देव कहने लगा—हे इन्द्र! तैने मेरे पुत्र विश्वरूप को मारा है इसलिए मैं तेरा भाग प्राप्त नहीं होने दूँगा। ऐसा कहकर माया से सब आश्रम को उसने मोहित कर लिया। विश्वरूप को मारने वाला इन्द्र इसी विद्या के द्वारा माया को भेदन करके अपने गणों सहित सोम का दान करने लगा। फिर शेष को लेकर क्रोध में भरे हुए त्वष्टा (प्रजापति) ने "इन्द्रस्य शत्रोवर्धस्य स्वाहा" इस मन्त्र से अग्नि में हवन किया। फिर कालाग्नि के सदृश वृत्रासुर उत्पन्न हुआ। उसे देखकर इन्द्र गणों सहित भाग गया। ब्रह्माजी ने इन्द्र से कहाकि इस वज्र को छोड़कर इसे मारो। वह देवेन्द्र तब निशंक होकर वज्र के प्रहार से उसका नाश करते गए। तब से यह

वज्रेश्वरी विद्या शत्रुओं को भयंकर और नाश करने वाली है। सब पापों को नाश करने वाली इस विद्या को मैं तुमसे कहता हूँ।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्।

ॐ फट् जहि हुं फट् छिन्धि भिन्धि जहि हन हन स्वाहा॥

यह सब शत्रुओं को भयंकर वज्रेश्वरी विद्या है। हे मुनि श्रेष्ठो! इसी विद्या के द्वारा शम्भु सृष्टि का संहार करते हैं।

वशीकरण तथा आकर्षण आदि का वर्णन

ऋषि बोले—हे रोमहर्षण जी! वज्रेश्वरी विद्या जो इन्द्र का उपकार करने वाली है वह हमने सुनी तथा हमसे राजाओं का महान उपकार होता है, यह भी सुना। इस विद्या का विनियोग और बताइये।

सूतजी बोले—वशीकरण, आकर्षण, विद्वेषण, उच्चाटन, स्तम्भन, मोहन,ताड़न, उच्चाटन तथा छेदन, मारण, प्रतिबन्ध, सेना का स्तम्भन आदि सब कार्य

सावित्री मन्त्र द्वारा ही सिद्ध होते हैं।

आयातु वरदादेवी भूम्यां पूर्वतमूर्द्धनि।
ब्राह्मणेभ्योह्यनुज्ञाता गच्छ देवि! यथासुखम्॥

इस मन्त्र द्वारा आवाह्न आदि करे फिर वशीकरण आदि सब क्रिया करे। देवी का आवाह्न करके पूजन तथा अग्नि में हवन करे। इस विद्या से सब कार्य सिद्ध करे। वशीकरण इच्छा वाला तीस हजार हवन जाति पुरुषों के द्वारा करे। आकर्षण करने वाला घी और कन्नेर से हवन करे। विद्वेश वाला लांगलक से तथा तेल के द्वारा उच्चारु वाला होम करे। स्तम्भन की इच्छा वाला मधु (शहद) से और मोहन वाला तिल से एवं ताड़न करने वाला रुधिर से अग्नि में हवन करे। खर, गज, ऊँट के स्तम्भन के लिए सरसों का प्रयोग करना चाहिए। बन्धन नागफली के द्वारा करे। घी से सब प्रकार शुद्धि, दूध में विशेष प्रकार की शुद्धि तथा तिलों से रोग का नाश होता है। कमल से धन की प्राप्ति, महुआ के पुष्प से कान्ति प्राप्त होती है। इस प्रकार सावित्री का हवन तथा संक्षेप से विनियोग मैंने तुम से कहा। इस विद्या को केवल विधान पूर्वक जप करे तो भी सब प्रकार की सिद्धियों की प्राप्ति हो। इसमें कोई विचार नहीं करने चाहिए।

मृत्युञ्जय विधि वर्णन

ऋषि बोले—हे सूतजी! अब आप ब्राह्मण क्षत्री और वैश्यों के लिए मृत्युञ्जय विधि का वर्णन हमसे कीजिए। क्योंकि आप सर्वज्ञ हो और सब कुछ बताने में समर्थ हो।

सूतजी बोले—हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! अब मैं मृत्युञ्जय विधि को बताऊँगा। विधि पूर्वक क्रम से एक नियुत अर्थात् लाख बार घी से हवन करना चाहिए। अथवा घी सहित तिल और कमल से प्रयत्न सहित हवन करे। अथवा दूर्वा, घृत, गौ का दूध और शहद मिलाकर हवन करना चाहिए। अथवा केवल घी और खीर का चारु बनाकर अग्नि में हवन करे इस प्रकार हवन करने वाला पुरुष काल मृत्यु को भी जीत लेता है, इसमें कोई संदेह नहीं करना चाहिए।

त्रियम्बक मन्त्र विधि वर्णन

सूतजी बोले—त्रियम्बक मन्त्र के द्वारा देव देव त्रियम्बक को लिंग में अथवा आयुर्वेद के विशारद विद्वानों

के द्वारा यथा क्रम भूतल पर पूजना चाहिए। एक सौ आठ बार सफेद कमलों (पुण्डरीक) के द्वारा या लाल कमल के द्वारा तथा एक हजार नील कमल के द्वारा शंकर भगवान की पूजा करनी चाहिए। पूजा करने के बाद पूर्व में बताए हुए क्रम के अनुसार पायस, भात, मूंग तथा मधुर भक्ष्य पदार्थों को जो सुरभी के दूध, दही, घी आदि के द्वारा बने हुए हों उन्हें भगवान को निवेदन करना चाहिए। विशेष करके पूर्व में कहे हुए पुष्पों तथा चरु से होम कार्य करना चाहिए। एक नियुत यानी एक लाख भली भाँति जप करना चाहिए। एक हजार ब्राह्मणों को दक्षिणा सहित भोजन करावे। उन्हें एक हजार गाय तथा सुवर्ण भी प्रदान करे।

हे मुनीश्वरो! इस प्रकार का यह रहस्य मैंने तुम्हारे प्रति वर्णन किया, जो पूर्वकाल में देव देव त्रिशूली भगवान शंकर ने मेरु पर्वत की चोटी पर विराजमान अमित तेज वाले स्कन्द से कहा था। देव देव स्कन्द ने सब लोकों के हित के लिए ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार जी से कहा। इसके बाद पराशर जी के पुत्र व्यास जी द्वारा परम्परा से यथाक्रम इस भूतल पर आया। व्यासजी ने अपने प्रिय पुत्र शुकदेव जी को परम धाम चले जाने पर बड़ा भारी शोक किया। तब उन्होंने त्रियम्बक भगवान को देखा और उनका दुःख दूर हुआ। उन्होंने स्कन्द की

उत्पत्ति के विषय में सुना तथा विशेष करके त्रियम्बक के महात्म्य को सुना। हे ऋषियो! श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यास को जो भगवान ने कहा तथा व्यास जी की कृपा से जो जो मुझे प्राप्त हुआ उस सबको मैं तुमसे कहूँगा।

देव देव महादेव को विधिवत पूजकर त्रियम्बक मन्त्र का विधि पूर्वक जप करना चाहिए। ऐसा करने पर वह पुरुष सात जन्मों में भी किए गए सब पापों से मुक्त हो जाता है। संग्राम में उसकी विजय होती है तथा बड़े भारी सौभाग्य को प्राप्त करता है। इस मन्त्र का एक लाख होम करने पर राज की इच्छा करने वाला राज को प्राप्त कर लेता है। दस लाख जप करके होम करने वाला पुत्रार्थी मनुष्य पुत्र को प्राप्त करता है इसमें कोई सन्देह नहीं। धन की इच्छा वाला भी एक अयुत का जप करे, इस मन्त्र के प्रभाव से मनुष्य धन धान्य आदि को प्राप्त कर सभी मंगलों को प्राप्त करता है तथा पुत्र पौत्रादिकों के साथ इस लोक में क्रीड़ा करता हुआ अन्त में स्वर्ग पाता है। लोक और वेद में यह मन्त्र नाद के समान है इसलिए इसके द्वारा नित्य ही भगवान त्रियम्बक की पूजा करनी चाहिए। अग्नि होम से यज्ञ का आठ गुना फल अधिक होता है। तीनों लोकों में, तीनों गुणों में, तीनों वेदों में तथा ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य तीनों जातियों में, अकार, उकार, मकार इन तीनों मात्राओं में, सूर्य, चन्द्र, अग्नि

इन तीनों अग्नियों में, अम्बा, उमा और महादेव ये तीनों त्रियम्बक के नाम से स्थित हैं। वे सुन्दर पुष्प वाले वृक्ष में जैसी सुगन्ध होती है वैसी सुगन्ध वाले हैं और अत्यन्त शोभा वाले हैं। अति दूर से ही उन महात्मा शम्भु की सुगन्ध आती रहती है इसलिए भगवान शंकर सुगन्ध वाले हैं। वे महादेव अपनी गन्ध से तथा लीला से देवताओं को भी सुगन्धमय बनाते हैं। उनकी सुगन्ध इस लोक में, नभ के तल में वायु के द्वारा फैलती है। इसलिए उस सुगन्धि के कारण वह देव सुगन्ध और पुष्टि वर्धक कहलाते हैं।

अपने वीर्य को पूर्व काल में शम्भु ने योनि में प्रतिष्ठित किया। उस वीर्य से ब्रह्मा की उत्पत्ति करने वाला हिरण्यमय अण्ड उत्पन्न हुआ। उस वीर्य से ही सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, भू, भुर्वः, स्व, मह, जन, तप, सत्य आदि लोक क्रम से पुष्टि को प्राप्त हुए। पंचभूत, अहंकार, बुद्धि, प्रकृति आदि भी उससे पुष्टि को प्राप्त होते हैं। उससे बीजों की पुष्टि होती है इससे वह पुष्टि वर्धन कहलाते हैं।

उन पुष्टि वर्धन देव का घी और खीर से मधु, यव गोधूम, उर्द विल्वफल, कुमुद, आक, शमीपत्र, गौरस, पलास आदि के द्वारा भक्ति पूर्वक यथा न्याय लिंग के लिए अग्नि में हवन करे। हे प्रभो! आप मुझे पाशों के

कर्म बन्धन से तथा मृत्यु के बन्धन से मुक्त करके अमित तेज युक्त करिये। जिस प्रकार पका हुआ उर्वासक (फल विशेष) का फल वृक्ष से टूटने पर पुनः वृक्ष में नहीं लगता उसी प्रकार मुझे यत्न पूर्वक संसार से अलग करके पुनः उससे मत लगाओ। इस प्रकार भगवान की प्रार्थना करे। मन्त्र की इस प्रकार सब विधि जानकर और अर्थ जानकर शिवलिंग की पूजा करनी चाहिए। इससे योगी पाश का भेदन करके मृत्यु से छुटकारा पा लेता है। इसलिए सब छोड़कर त्रियम्बक उपासना करनी चाहिए और त्रियम्बक मन्त्र के द्वारा शिव की पूजा करनी चाहिए। सर्व अवस्थाओं में गया हुआ सब पापों से मुक्त हो जाता है। शिव ध्यान से मनुष्य जैसे रुद्र हैं वैसा ही हो जाता है इसमें कोई सन्देह नहीं है। प्राणियों की हत्या करके अन्याय का भोजन करके यदि एक बार भी शिव का स्मरण कर लेता है तो वह सब पापों से छूट जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

पशुपत योगमार्ग द्वारा शिव आराधना का वर्णन

ऋषि बोले—हे श्रेष्ठ व्रत वाले सूतजी! योग मार्ग के द्वारा सब सिद्धियों को देने वाले वृषभध्वज त्रियम्बक भगवान का ध्यान कैसे करना चाहिए। इस पूरे विस्तार की बात को आप संक्षेप में कहने में समर्थ हैं। सो कृपा करके हमसे वर्णन कीजिए।

सूतजी बोले—प्राचीन काल में सुमेरु पर्वत पर मुनियों के समूह के साथ बैठे हुए सूर्य के समान तेज वाले नन्दीश्वर ने सनत्कुमार को जो बतलाया था उन्होंने जो पितामह ब्रह्माजी से सुना था उसको अब आप लोगों के लिये पहले शिव को प्रणाम करके सुनाता हूँ।

नन्दिकेश्वर बोले—हे भगवन्! योग की विधि क्या है तथा वह कैसा कहा गया है? वह योग प्राणियों को ज्ञान और दिव्य मोक्ष देने वाला है। अतः उसको मुझसे कहिए।

श्री भगवान बोले—हे देवि! पहला मन्त्र योग कहा गया है, दूसरा स्पर्श योग कहा गया है, तीसरा भाव योग, चौथा अभाव तथा पाँचवाँ महायोग कहा गया है।

ध्यान में परायण होकर मन्त्र का अभ्यास करना मन्त्र योग कहलाता है। रेचक आदि क्रियाओं के द्वारा

नाड़ी आदि की शुद्धि करना समस्त वायु आदि पर जय पाना, बल स्थिर आदि क्रियाओं से युक्त कुम्भक की तरह अभ्यास में धारणा के द्वारा तत्पर होना स्पर्श योग कहलाता है। मन्त्र और स्पर्श योग से विनिर्मुक्त हुआ महादेव में तत्पर संहारकारी अन्तर में स्थित अग्नि को प्रज्वलित रखना। ऐसा चित्त को शुद्धि प्रदान करने वाला यह भाव योग कहलाता है। स्थावर और जङ्गम सब जगत को अपने अवयवों में विलीन करके सब शून्य मय चिन्तन करना निर्वाण देने वाला अभाव योग कहा गया है। निर्मल, शुद्ध, स्वच्छन्द, शोभन सद्आलोक मय स्वयं को जानना, सब अपने स्वभाव से भासित करना महायोग कहलाता है। नित्य आलोकित स्वयं की ज्योति अपने चित्त में स्थित, निर्मल केवल अपनी आत्मा महायोग कहलाती है। एक के बाद एक-एक करके योग विशेष कहा गया है।

इस योग को ब्राह्मण शिष्य के लिए अग्नि कार्य के लिए परीक्षा करके अकृतघ्नी धार्मिक पुरुष को देना चाहिये। अभक्त और अगुरु भक्त को कभी भी प्रदान न करे। हे अनघे! इसलिए सर्व प्रकार जानकर ही योग की शिक्षा देनी चाहिए। सर्व संगों से रहित, मेरी भक्ति में परायण, ज्ञान संयुक्त, श्रोतस्मार्त विशारद, गुरु भक्त पुण्यात्मा, योग के लिए सर्वथा योग्य साधक को ही यह

प्रदान करे।

हे देवि! मैंने तुमसे यह सनातन योगमार्ग कहा। इस योगामृत को पीकर योगी ब्रह्म को जानने वाला होता है और मुक्त हो जाता है। यही पाशुपत योग कहलाता है जो उत्तम योग को ऐश्वर्य देने वाला है। इसका आश्रय लेकर तथा इसको जानकर पुरुष मुक्त हो जाता है और क्या-क्या नहीं प्राप्त कर लेता अर्थात् सब कुछ पा लेता है। इसलिए हे प्रिये! अपना इष्ट रखकर शिव की अर्चना में रत होना चाहिए। इस प्रकार कहकर भगवान वृषभध्वज ने देवी को समझाकर आत्मा को आत्मा में नियोजित किया।

शैलादि बोले—हे योगीन्द्र! इसलिये तुमको भी योगाभ्यास में रत होना चाहिये। मोक्षार्थी पुरुष को सब प्रकार यत्न पूर्वक नित्य ही भस्म से स्नान करके पाशुपत योग में निरत होना चाहिए, यह योगेश्वर शिव की निष्ठा का मैंने वर्णन किया।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! इस प्रकार से शैलादि के पुत्र कुल को आनन्द देने वाले तथा भस्म धारण करने वाले नन्दीश्वर ने यह उत्तम पाशुपत योग सनत्कुमार जी से कहा था। ब्रह्म पुत्र सनत्कुमार ने महान तेजस्वी भगवान व्यास के लिए कहा। उनसे इसको मैंने सुना जो आप लोगों को सुनाया। आपको यह सुनाकर अब मैं

कृतकृत्य हो गया। हे यज्ञ स्वरूप! हे ब्राह्मणो! आपको नमस्कार है। शान्त स्वरूप शिव को तथा मुनीश्वर व्यासजी के लिए नमस्कार है।

यह ग्यारह हजार श्लोकों का उत्तम लिंग पुराण है। इसके आदि भाग (पूर्वार्द्ध) में १०८ अध्याय हैं। यह पुराण धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को देने वाला है। सो हे मुनीश्वरो! मैंने तुम्हारे लिए वर्णन किया। हे नैमिषारण्य में इकट्ठे सभी मुनीश्वरो! आपके लिए मैं प्रणाम करता हूँ तथा भगवान ईशान के चरणों में प्रणाम निवेदन करता हूँ। जिनका कि यह ग्यारह हजार श्लोकों वाला सांख्य शास्त्र सम्मत पुराण है। यह स्वयंभू भगवान ब्रह्मा ने कहा है कि इस लिंग पुराण को जो आदि से लेकर अन्त तक पढ़ता है अथवा सुनता है अथवा ब्राह्मणों के द्वारा सुनाता है, वह परम गति को पाता है। तप, यज्ञ, दान, अध्ययन तथा विपुल शास्त्र आदि जो गति होती है वह केवल लिंग पुराण के पढ़ने और सुनने से मिल जाती है और संसार से निवृत्ति होती है तथा भगवान में मुझ (ब्रह्म) में तथा नारायण देव में श्रद्धा और भक्ति बढ़ती है। अक्षय विद्या तथा वंश की वृद्धि होती है, ऐसा ब्रह्माजी ने इसके विषय में कहा है।

ऋषि बोले—हे लोमहर्षण जी! हमारी आपकी तथा तीर्थ यात्रा में रत नारद जी की सिद्धि और महान प्रीति

इस पुराण के श्रवण करने से हुई है। यह सब भगवान विरूपाक्ष शंकर जी की महान कृपा है। इस प्रकार ब्राह्मणों ने और नारद जी ने सूतजी के शरीर का अपने हाथों से स्पर्श किया और कहा—हे सूतजी! महादेव वृषभध्वज आपका भला करें, आपका कल्याण हो। आपकी हमारे प्रति महान श्रद्धा है हमारा भगवान शिव के लिए बारम्बार नमस्कार है।

॥ श्री लिंग पुराण समाप्त ॥

श्री लिंग पुराण

देवाधिदेव भगवान शंकर की महिमा से युक्त यह पुराण अपना विशेष स्थान रखता है। अठारह पुराणों की गिनती करते समय यह ग्यारहवें महापुराण की श्रेणी में आता है। नारद जी के अनुसार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का दाता यह शिव पुराण का पूरक ग्रन्थ है। इस प्रकार भगवान शंकर के परमतत्व का प्रकाशक यह पुराण भक्तिपूर्वक पढ़ने या सुनने से शिवलोक की प्राप्ति बतलाई गई है।